मार्च 2014 विकास को समर्पित मासिक ₹10

योजना

प्रशासनिक सुधार

शासन में नौकरशाह और राजनेताओं के परस्पर संबंध
बी. के. चतुर्वेदी

भारत में सुशासन हेतु प्रयास
आर. बी. जैन

लोक सेवा में सुधार: एक नये प्रबंधन दर्शन की ओर
बी. पी. माथुर

वैश्विक नियमन के युग में प्रशासन
बीनू पॉल अब्राहम

विशेष आलेख
[illegible]
[illegible]

सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

अकेले तो यह देश बना नहीं है,
हमने एक-दूसरे का साथ दिया,
तभी तो बना यह भारत।

कुछ यूं ही हमने मिलकर बढ़ाया,
देश को तरक्की की राह पर,
तो क्यूं न कहें, हम सबने मिलकर
बनाया यह भारत।

65वां गणतंत्र दिवस

योजना

वर्ष 58 ● अंक 3 ● मार्च 2014 ● फाल्गुन-चैत्र, शक संवत 1935 ● कुल पृष्ठ 60

प्रधान संपादक
राजेश कुमार झा

वरिष्ठ संपादक
रेमी कुमारी

संपादकीय कार्यालय
538, योजना भवन, संसद मार्ग,
नयी दिल्ली-110 001
दूरभाष : 23717910, 23096738
टेलीफैक्स : 23359578
ई-मेल : yojanahindi@gmail.com
वेबसाइट : www.yojana.gov.in
www.publicationsdivision.nic.in
http://www.facebook.com/yojanajournal

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
वी. के. मीणा

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन)
सूर्यकांत शर्मा

दूरभाष : 26100207
फैक्स : 26175516
ई-मेल : pdjucir@gmail.com

आवरण : **जी. पी. धोपे**

इस अंक में

संपादकीय	–	5
शासन में नौकरशाह और राजनेताओं के परस्पर संबंध	बी. के. चतुर्वेदी	6
लोक सेवा में सुधार एक नये प्रबंधन दर्शन की ओर	बी. पी. माथुर	11
भारत में सुशासन हेतु प्रयास	आर. बी. जैन	14
भारतीय कृषि बाज़ार में सुधार	यू. के. एस. चौहान	19
गांधीजी का स्त्री विमर्श	सुभाष सेतिया	25
विकास यात्रा	–	27
ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण व्यवस्था की मज़बूती	नचिकेत मोर दीप्ति जॉर्ज	28
भ्रष्टाचार से निपटने के लिए पारदर्शिता, जवाबदेही और दण्ड का त्रिकोण	आनंद प्रधान	31
वैश्विक नियमन के युग में प्रशासन	बीजू पॉल अब्राहम	35
प्रशासनिक सुधारों की कुंजी : ई-प्रशासन	कैलाश चन्द्र पपनै	39
क्या आप जानते हैं	--	42
क्या प्रशासनिक सेवाओं के प्रबंधन में न्यायिक हस्तक्षेप की आवश्यकता है?	टी. एस. आर. सुब्रह्मण्यम	43
जहां चाह वहां राह	नंदिनी उपाध्याय	46
21वीं सदी के लिए सिविल सेवा	मनीष सबरवाल	47
प्रशासनिक सुधार और नयी चुनौतियां	रणवीर कुमार	50
अनुकरणीय पहल	–	53
शोध यात्रा :		55

योजना हिंदी के अतिरिक्त असमिया, बांग्ला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, तेलुगु तथा उर्दू भाषाओं में भी प्रकाशित की जाती है। पत्रिका मंगवाने हेतु, नयी सदस्यता, नवीकरण, पुराने अंकों की प्राप्ति एवं एजेंसी आदि के लिए मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर 'अपर महानिदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवा कर निम्न पते पर भेजें। व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन), प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड IV, **तल** VII, **आर. के. पुरम, नयी दिल्ली-66 दूरभाष : 26100207, 26105590 तार : सूचनाप्रकाशन।**

सदस्य बनने अथवा पत्रिका मंगाने के लिए आप हमारे निम्नलिखित बिक्री केंद्रों पर भी संपर्क कर सकते हैं : सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110003 (दूरभाष : 24367260, 5610), हाल सं, 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 (दूरभाष : 23890205)* 701, सी- विंग, सातवीं मंजिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर, नवी मुंबई-400614 (दूरभाष : 27570686) * 8, एसप्लानेड, ईस्ट, कोलकाता-700069 (दूरभाष : 22488030), * 'ए' विंग, राजाजी भवन, बंसल नगर, चेन्नई-600090 (दूरभाष : 24917673) * प्रेस रोड नयी गवर्नमेंट प्रेस के निकट, तिरुअनंतपुरम-695001 (दूरभाष : 2330650) * ब्लॉक सं-4, पहला तल, गृहकल्प, एमजी रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001 (दूरभाष : 24605383) * फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलुरु-560034 (दूरभाष : 25537244) * बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना-800004 (दूरभाष : 2683407) * हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-एच, अलीगंज, लखनऊ-226024 (दूरभाष : 2225455) * अंबिका कॉम्प्लेक्स, फर्स्ट फ्लोर अहमदाबाद-380007 (दूरभाष : 26588669) के. के. बी. रोड, नयी कॉलोनी, कमान संख्या-7, चेनीकुटी, गुवाहाटी-781003 (दूरभाष : 2665090)

चंदे की दरें : वार्षिक: ₹ 100 द्विवार्षिक : ₹ 180, त्रैवार्षिक :₹ 250, विदेशों में वार्षिक दरें : पड़ोसी देश : ₹ 530, यूरोपीय एवं अन्य देश: ₹ 730।

योजना में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने है। जरूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों अथवा संगठनों से संबद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिए योजना उत्तरदायी नहीं हैं।

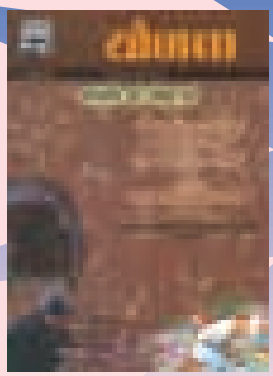

आपकी राय

सराहनीय आयोजन

जना का जनवरी अंक पढ़ा। जनजाति व वंचित वर्ग जैसे खास विषय पर आपके सराहनीय आयोजन के बीच आपकी संपादकीय टिप्पणी के साथ 'नई रोशनी की तलाश में घुमंतू जनजातियां' शीर्षक से प्रस्तुत लेख ने भी खासा ध्यान खींचा। उक्त आलेख में लेखक ने आंचलिक जनजातियों की वर्तमान स्थिति, उनके उत्थान में बाधक समस्याओं के समाधान हेतु सरकारी स्तर से सहभागिता के साथ उनको विकास की मुख्यधारा में जोड़ने हेतु उठाये जा सकने वाले कदमों की ओर इशारा किया है। 'जलवायु परिवर्तन और प्रशासनिक तैयारी' नामक लेख भी समसामयिक दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है।

छैलबिहारी शर्मा इंद्र
छाता, उ. प्र.

मशरूम एक लाभकारी खाद्य पदार्थ

जना के जनवरी अंक में प्रकाशित आलेख 'खाद्य विधेयक' 'वन्य आहार और आदिवासी' मुझे विशेष प्रभावित किया। मशरूम का खाद्य पदार्थ के रूप में अब धीरे-धीरे ज्यादा उपयोग होने लगा है। अभी भी बहुत से ग्रामीण किसान को मशरूम की उपयोगिता के बारे में जानकारी नहीं है। इसकी खेती करने में ज़मीन को जोतने जैसी समस्या नहीं है। इसकी उपयोगिता दिनों दिन बढ़ती ही जा रही है। मशरूम उत्पादन के प्रति अन्य राज्यों के किसानों को उतना लगाव नहीं है इसका प्रमुख कारण वहां वर्षों से चला आ रहा खाद्य जैसे- चावल, गेंहू, बैंगन, आलू, मकई, मारवा का आटा खाद्य पदार्थ के रूप में उपयोग किया जा रहा है। नये खाद्य पदार्थ के रूप में मशरूम कां उपयोग में अभी नहीं कर रहे हैं। दरभंगा, मधुबनी जिलों के किसानों के बीच मशरूम की बजाय मखाना, मछली पालन का ज्यादा प्रचार-प्रसार किया जाता है। बोकारो, रांची के किसानों में मशरूम के प्रति लगाव बढ़ रहा है। मिथिलांचल में भी मशरूम का प्रचार-प्रसार एवं प्रशिक्षण के अधिक केंद्र खोलने से यहां के किसानों में क्रांतिकारी परिवर्तन होगा। मशरूम में प्रर्याप्त मात्रा में प्रोटीन है जो कम पैसे में अधिक से अधिक लाभ दे सकता है। जरूरत है कि इसको और वैज्ञानिक ढंग से विकसित करने की ताकि अधिक से अधिक बेरोज़गार इसका फायदा उठा सकें।

अशोक कुमार ठाकुर
मालीटोल, दरभंगा, बिहार

उपेक्षित वर्ग का आकलन

योजना का जनवरी अंक पढ़ा। समाज के इस वंचित, उपेक्षित वर्ग का आकलन, संकलन और विश्लेषण बेहद प्रशंसनीय है। आमतौर पर इस तरह के संकलन पढ़ने को नहीं मिलते। ज्ञान पिपासा के लिए *योजना* का यह अंक काफी लाभकारी है। इसके लिए *योजना* के संपादकीय टीम और लेखकों को धन्यवाद।

आमतौर पर जनजाति एवं वंचित वर्ग के विषय पर कोई संकलन-विश्लेषण देखने को नहीं मिलता, अगर चुनाव का मौसम न हो। वैसे समाज के इन वर्गों को हाशिये पर रखे जाने का इतिहास बहुत पुराना है। उद्योग लगाने, खनन कार्यों, बड़े बांधों के निर्माण जैसी विभिन्न विकास परियोजनाओं के लिए जनजातियों को विस्थापित और अधिकारों से वंचित किया जाता रहा है। एक अनुमान के अनुसार एक करोड़ से अधिक जनजातियों को अपने जल, जंगल और जमीन से इसलिए बेदखल होना पड़ा, क्योंकि 21वीं सदी के उभरते भारत के सपनों को साकार करना है। स्वतंत्र भारत के नागरिकों के रूप में जनजातियों को भी अन्य नागरिकों के समान, सिविल, राजनीतिक और सामाजिक अधिकार प्रदान किए गए, जल, जंगल और ज़मीन पर इनके अधिकारों को स्वीकार कर लिया गया। बावजूद इसके जालसाजी, बेईमानी और विकास के नाम पर उनके प्राकृतिक आवास और संसाधनों को लूटा जा रहा है। इन जातियों के लिए कारगर सामाजिक-आर्थिक अधिकार कभी विकसित और विस्तारित नहीं किए गए, बल्कि जो अधिकार उन्हें प्राप्त थे। उन्हें परोक्ष रूप से निष्प्रभावी कर दिए गए।

आज देश आज़ाद है, लेकिन इन वंचितों के लिए लोकतंत्र और आज़ादी किसी सपने से कम नहीं हैं। सुख, विकास क्या होता है उन्हें नहीं पता। इन्होंनें तो सिर्फ़ लूटना, डकैती और शोषण जैसे शब्द ही सुने हैं, देखें है। पहले अंग्रेज़ों ने लूटा, अब अपने लूट रहें हैं। आदिवासियों के लिए लोकतंत्र का मतलब समाज के प्रभुत्वशाली वर्ग के वर्चस्व को बनाएं रखने तक सीमित है। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि दलितों की मुक्ति के लिए जितनी भी विचारधाराएं विकसित हुई हैं, उस पर वर्चस्वशाली लोगों ने कब्ज़ा कर लिया। आज ये जनजातियां समाज के संपन्न समृद्धशाली वर्ग के लिए किसी मनोरंजन व कौतूहल से कम नहीं है तो समाजशास्त्री व छात्रों के लिए ये शोध का विषय मात्र बनकर रह गएं हैं।

विभाकर झा
नई दिल्ली

उपयोगी पत्रिका

जना का कई वर्षों से नियमित पाठक और प्रत्येक प्रतियोगी छात्र-छात्राओं और शिक्षा जगत से जुड़े तमाम लोगों को मोटिवेट करता हूं कि वे भी *योजना* का अध्ययन करें, क्योंकि *योजना* ही अकेली ऐसी पत्रिका है जो किसी भी विषयवस्तु पर आलेख और निबंध या लेख लिखने में सहायक हो सकती है। *योजना* का जनवरी का अंक वास्तव में काबिलेतारीफ है। मैं एक सुझाव देना चाहता हूं कि राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर के स्वयं सेवी संस्थाओं के बारे में आलेख प्रस्तुत करने की कृपा करें तथा उसके कार्यक्षेत्र का भी वर्णन करें। संपादकीय में संपादक महोदय द्वारा पांच बुनियादी सिद्धांतों का वर्णन जाने-माने मानवशास्त्री वेरियर एलविन की पुस्तक ए *फिलॉसफी ऑफ नॉर्थ इस्टर्न फ्रंटियर एरिया (नेफा)* की चर्चा भी काबिलेतारीफ है। प्रोफेसर वर्जीनियस खाखा का आलेख 'संवैधानिक प्रावधान, कानून और जनजातियां' में जिस प्रकार से भारत में रह रहे जनजातियों की भौगोलिक और सामाजिक अलगाव तथा कानूनों, परंपराओं की चर्चा है वह वास्तव में समाजशास्त्र से स्नातक एवं स्नातकोत्तर कर रहे विद्यार्थियों को लाभ पहुंचाएगा। इसी प्रकार से वरिष्ठ पत्रकार अरविन्द कुमार सिंह जी का लेख 'नयी रोशनी की तलाश में घुमंतू जनजातियां', राहुल बनर्जी का लेख 'आदिवासियों के लिये स्वशासन', मधु रामनाथ का लेख 'खाद्य विधेयक, वन्य आहार और आदिवासी', सुभाष शर्मा द्वारा लिखा गया आलेख 'जलवायु परिवर्तन और प्रशासनिक तैयारी' आदि लेख भी उपयोगी हैं। लेखक संजॉय पटनायक का लेख भूमि संयोजक 'ग्रामीण भूमि प्रशासन में परिवर्तन का अग्रदूत' तथा नूतन मौर्या का लेख 'विकास की अवधारणा और जनजातियों का स्वास्थ्य' ज्ञानवर्धक लगा साथ ही रहीस सिंह द्वारा लिखा गया लेख 'नवउदारवाद के दौर में जनजातियां' मुझे बहुत अच्छा लगा। प्रसन्ता हुई कि उनके बीच भी कौशल विकास हो रहा है। लेखिका ज्योत्सना राय, अनिल चमड़िया एवं मधुकर जी के लेख भी अच्छे हैं।

सुजीत कुमार
भागलपुर, बिहार

मुख्यधारा में जोड़ें

जना का जनवरी अंक पढ़ा जो कि 'जनजाति और वंचित वर्ग' पर केंद्रित है। इसमें देश के विभिन्न राज्यों में निवास करने वाली कई जनजातियों के बारे में काफी जानकारियां दी गई हैं। जनजातियों की आबादी से लेकर विलुप्त हो चुकी जनजातियों के साथ-साथ विलुप्ति की क़गार पर पंहुच चुकी जनजातियों के बारे में भी कई जानकारियां अंक में दी गई हैं।

देश में जैसे-जैसे विकास की आंधी तेज़ हो रही है वैसे-वैसे जंगलों का अस्तित्व समाप्त होता जा रहा है, साथ ही ख़तरा बढ़ता जा रहा है। देश की कई जनजातियां जंगलों में या उसके आस-पास निवास करती हैं। उनके रीति-रिवाज एवं संस्कृति भी काफी अलग होती हैं। जंगल उनके जीवन का अभिन्न हिस्सा होते हैं। आज जंगलों को साफ करके उद्योग लगाए जा रहे हैं, खनन द्वारा प्रकृति को नुक़सान पंहुचाया जा रहा है जिससे जनजातियों पर काफी बुरा असर पड़ रहा है। उनके एकांकी जीवन में दखल पड़ रहा है। ये दखल ही उन्हें असुरक्षा का अहसास करा रहा है जिसके चलते कई बार उनमें विद्रोह की भावनाएं उत्पन्न हो जाती हैं। जनजातीय क्षेत्रों में जो भी कार्य किये जाएं, उन कार्यों को वहां की जनता की भावनाओं के अनुरूप ही किया जाना चाहिये ताकि उन्हें यह न लगे कि सरकार उनकी अनदेखी करके अपने फायदे के लिए ही कार्य कर रही है। पिछड़े आदिवासी क्षेत्रों पर ज्यादा ध्यान देने की ज़रूरत है। उत्तम स्वास्थ्य, स्वच्छ पानी, शिक्षा आदि की व्यवस्था पिछड़े आदिवासी क्षेत्रों के लिए की जानी चाहिए। आदिवासियों को भी मुख्यधारा से जोड़ने के लिए प्रयास किये जाने चाहिए। जनजातीय समाज और क्षेत्र की उपेक्षा के परिणाम खतरनाक हो सकते हैं। सरकारी नौकरियों में जनजातियों के आरक्षण में वृद्धि की जानी चाहिए। जो भी विकास कार्य जनजतीय क्षेत्रों में किये जाने हैं, वे सब वहां की जनता को प्रभावित किये बिना, उनकी संस्कृति, भावनाओं, उम्मीदों को ध्यान में रखकर किये जाने चाहियें। किसी भी प्रकार का बाहरी दबाव और हस्तक्षेप अनावश्यक रूप से आदिवासी, जनजातीय क्षेत्रों में नहीं किया जाना चाहिए। क्योंकि देश में सभी को अपनी संस्कृति, विरासत और अपने रीति-रिवाजों के हिसाब से रहने का हक़ है। आलेख 'जलवायु परिवर्तन और प्रशासनिक तैयारी' अच्छा लगा।

महेन्द्र प्रताप सिंह
मेहरागांव, अलमोड़ा, उत्तराखण्ड

भूल सुधार

योजना के फरवरी अंक में लेखक सुनील वात्स्यायन का परिचय नाडा इंडिया (नेशनल एंटी डोपिंग एजेंसी) के अध्यक्ष की जगह व्यसन क्षेत्र और नाडा इंडिया फाउंडेशन (गैर-सरकारी संस्थान) की अध्यक्षता में एक पुनर्वास विशेषज्ञ हैं। पाठकों को हुई असुविधा का हमें खेद है।

-- व. संपादक

In Association with

ETEN IAS
Institute for Administrative Services

ALS IAS

India's largest IAS Coaching Network

UPSC CIVIL SERVICES EXAM 2014

PRELIMS 2014: GENERAL STUDIES & CSAT
MAINS, OPTIONAL (Geog, Pub Ad)
MOCK TEST SERIES & INTERVIEW

(English & हिन्दी माध्यम)

INDIA'S BEST IAS MENTORS

MR. JOJO MATHEWS

MR. MANISH GAUTAM

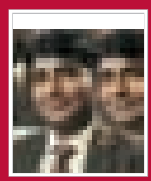

MR. SHASHANK ATOM

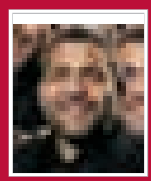

MR. MANOJ K. SINGH

1464 RANKS IN LAST 12 YEARS

161 successful candidates in 2013

ALOK RANJAN JHA

ALL INDIA RANK 1

2001 Exam

S. NAGARAJAN

ALL INDIA RANK 1

2004 Exam

RUKMANI RIAR

ALL INDIA RANK 2

2011 Exam

ANUPAMA T V

ALL INDIA RANK 4

2009 Exam

ADMISSION OPEN. LIMITED SEATS.

Call: 9654200517/23 | Toll free: 1800-1038-362 | Email: csp@etenias.com | Website: www.etenias.com

ETEN IAS CENTRES: Ahmedabad, Allahabad, Bangalore, Bhopal, Bhubaneshwar, Bilaspur, Chandigarh, Chennai, Cochin, Dimapur, Guwahati, Hyderabad, Imphal, Jaipur, Jammu, Jodhpur, Kanpur, Kohima, Kolkata, Lucknow, Nagpur, Patna, Pune, Raipur, Shillong, Srinagar, Vijaywada, Trivandrum

ALWAYS LEARNING

PEARSON

YH-268/2013

संपादकीय

ज्वालामय शिखरों की भाषा

लोकतंत्र की महागाथा आधुनिक विश्व की पहचान बन गई है। लेकिन इससे जुड़ी विडंबनाएं भी हैं। खून-पसीने और आंसुओं से आम जन क्रांतियों की ज़मीन सींचते हैं; और फिर छले जाते हैं यह देखकर की उस ज़मीन पर काबिज सत्ता को उखाड़ फेंकने के लिए और भी ज्यादा बड़े बलिदानों की ज़रूरत है। विदेशी सत्ता के जुए से मुक्त हुए राष्ट्र देखते हैं कि उनकी लड़ाई अभी खत्म नहीं हुई है और अब अपनी ही उस व्यवस्था के प्रति संघर्ष अभी बाकी है जिसमे शोषक और अत्याचारी अतीत का जहर घुल चुका है। इज्जत की ज़िंदगी जीने के आम लोगों के सपने उस संवेदनहीन व्यवस्था में चकनाचूर हो जाते हैं जिसके लिए उनके आंसुओं और तकलीफों का कोई अर्थ नहीं है। काफ्का की यह हताशा माहौल में घुल गई है कि 'हर क्रांति का ज्वार बिखर जाता है; पीछे छूट जाती है बस नौकरशाही की कीचड़।'

लेकिन फिर भी लोकतंत्र जन-आकांक्षाओं के आकाश का एक मात्र ध्रुवतारा बना हुआ है। संभवतः हालात इतने भी निराशाजनक नहीं हैं। यह भी तो सच है कि हम थोड़ी ही सही, अपने लोगों के मुंह पर मुस्कान ला सके हैं। दुख-दर्दों और संघर्षों के दौर से गुज़रते हुए, देश मज़बूती और संकल्प के साथ निर्धारित मार्ग पर आगे बढ़ा है और विश्व समुदाय में उसने अपनी पहचान बनाई है। लेकिन, यह हमें सोचना और समझना ही होगा की लंबे संघर्षों के दौर में विकसित हमारी जीवन-दृष्टि कहीं भटक तो नहीं गई है। उस समय, जब 'मध्यरात्रि में विश्व सो रहा था और भारत जीवंतता और स्वतंत्रता के साथ जागृत हुआ था, हमने जो वादे किए थे क्या हम उन्हें निभाने में सफल रहे हैं?

महागाथाओं के आदर्शों को साकार बनाने के लिए कारगर तंत्र और दायरे की जरूरत होती है। सिविल सेवाएं राज्य का ऐसा प्रशासनिक तंत्र, ऐसा कार्यकारी ढांचा है जो आदर्शों को यथार्थ में बदलने का औज़ार बनता है। भारत को ब्रिटिश शासन से एक व्यापक तथा सुव्यवस्थित प्रशासनिक तंत्र मिला, लेकिन इस तंत्र की प्रवृत्ति, प्रेरणा, दृष्टि और दिशा को जनोन्मुख बनाने का काम अब भी बाकी है। समाज के बदलाव के लिए इस तंत्र के संस्कार में बदलाव जरूरी है कि यह अपने आप को 'साहब' नहीं बल्कि 'सेवक' समझे। नौकरशाही के 'इस्पाती ढांचे' को सेवा भाव से अनुप्रणित होना होगा। अगर ऐसा न हो सका तो नौकरशाही यथास्थिति का संवाहक भावहीन पिंजड़ा बन कर रह जाएगा जिसके दायरे में नए और सार्थक परिवर्तन असंभव हो जाएंगे। इसका परिणाम सामाजिक अशांति, अनास्था और विप्लव के रूप में सामने आएगा।

प्रशासनिक सुधारों को हमें इस बड़े दायरे में देखना होगा। सतही तौर से देखने पर प्रशासनिक सुधार रोज़मर्रा के सरकारी कामकाज से जुड़ी अस्पष्ट-सी धारणा लगते हैं, लेकिन गहरे अर्थों में यह लोगों के जीवन से जुड़े हैं। सही मायने में तो प्रशासन ही आम जन के लिए सरकार का चेहरा है- चाहे वह गांव का पटवारी हो या भारत सरकार के किसी मंत्रालय का सचिव, चाहे वह ट्रैफिक कांस्टेबल हो या इनकम टैक्स कमिशनर। प्रशासन का तंत्र के संस्कार में बदलाव देश में बुनियादी बदलाव की अनिवार्य शर्त है।

थोड़ी तसल्ली की बात यह है कि देश में ऐसे अनेक नए कदम उठाए गए हैं जिनसे नौकरशाही ज्यादा जनोन्मुख, पारदर्शी, कुशल, कारगर और लोगों का दुख-दर्द समझ सकने वाली बन सकेगी। सूचना का अधिकार और लोकपाल जैसे कानून भ्रष्टाचार पर लगाम कसने की दिशा में मील का पत्थर साबित होंगे। लेकिन हमें यह समझना होगा कि प्रशासनिक सुधार एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है जिससे बदलती वैश्वीकरण की प्रक्रिया का फैलाव हो रहा है और विविध क्षेत्रों में विशेषज्ञता बढ़ती जा रही है। इन चुनौतियों के बीच प्रशासनिक तंत्र का ज्यादा चुस्त और लचीला होना जरूरी है।

यह याद रखना जरूरी है कि प्रशासन राजसत्ता को सामाजिक वैधता प्रदान करता है। लोगों में गुस्सा और हताशा की भावना खतरे की घंटी है। जन-मानस में हमारे अनेक प्रतिष्ठित सत्ता और प्रशासनिक प्रतिष्ठानों की वैधता में दिखाई दे रही गिरावट चिंताजनक है। फिर भी, नई ऊर्जा और नवीन जीवन-दृष्टि के साथ उभरने की अपने महान राष्ट्र की क्षमता में हमें पूरी आस्था और विश्वास है। चुनौतियों भरे इस कठिन दौर में हम कवि के इस विश्वास के साथ आगे बढ़ सकते हैं :

ज्वालामय हो उठे शिखर हैं
तड़ित-गूंज, झंझा-गर्जन है
मुखर हो उठे ज्यों दैवी स्वर!
क्या फिर से अब स्वर्ग सुन रहा
- आशा - विहव्ल;
प्रसव-वेदना, नव शिशु क्रंदन! ❑

शासन में नौकरशाह और राजनेताओं के परस्पर संबंध

बी. के. चतुर्वेदी

लोक सेवकों को व्यावसायिक आचरण के मानदंडों का अनुपालन करना होता है। ऐसा करने से न केवल बेहतर शासन की कार्यसूची को प्रमुखता मिलती है बल्कि देश की वृद्धि एवं संवृद्धि के लिए एक स्टील फेम के रूप में सम्मानित अखिल भारतीय सेवा की प्रतिष्ठा बढ़ाने में भी मदद मिलती है। इससे सिविल सेवाओं में लोगों का विश्वास विकसित करने और नए सिरे से उनका सम्मान अर्जित करने में भी सहायता मिलती है

देश के समक्ष आज दो महत्वपूर्ण मुद्दे हैं- पहला यह कि आर्थिक विकास में वृद्धि कैसे हो और दूसरा यह कि किस तरह वृद्धि और विकास के लाभ कारगर ढंग से नागरिकों तक पहुंचाए जाएं। इन दोनों मुद्दों के लिए कार्यनीति तय करते समय शासन संबंधी मुद्दे मुख्य रूप से विचारणीय हो जाते हैं। एक दृढ़ विचार है कि सिविल सेवा में भ्रष्टाचार स्थानिक है और सरकार द्वारा प्रदान की गई धनराशि बुरी तरह से रिस जाती है। मुझे हाल में हुए एक विचार-विमर्श का संदर्भ याद आता है, जिसमें कहा गया था कि रुपये में से 15 पैसे निर्धन तक पहुंचने की प्रसिद्ध सुक्ति में राशि अब घटकर 5 पैसे रह गई है। हमारे समाज में प्रौद्योगिकी संबंधी व्यापक परिवर्तन हो रहे हैं। सरकारी प्रणाली से नागरिकों की अपेक्षाएं और आकांक्षाएं बढ़ गई हैं और अब वे उत्कृष्टतम सेवा वितरण की उम्मीद करते हैं।

नीतियां तय करने में सलाह देने और क्षेत्र में दायित्वों का निष्पादन करने में लोक सेवकों की स्वतंत्रता एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा है, जिसका हाल के वर्षों में सिविल सेवा की कार्यप्रणाली पर असर पड़ा है। भारत की संविधान सभा में 10 अक्टूबर, 1949 को सरदार वल्लभ भाई पटेल ने कहा था : ''यदि आप एक सक्षम अखिल भारतीय सेवा चाहते हैं, तो मैं आपको सलाह देता हूं कि इसके अधिकारियों को खुल कर बोलने की स्वतंत्रता दें। यदि आप प्रधानमंत्री हैं तो आपका यह दायित्व होगा कि आप अपने सचिव या मुख्य सचिव या अपने अंतर्गत आने वाले अन्य अधिकारियों को बिना किसी भय और पक्षपात के अपनी राय जाहिर करने की छूट प्रदान करें। किंतु कई प्रांतों में मैं आजकल यह प्रवृत्ति देख रहा हूं कि सिविल सेवा अधिकारियों को नियंत्रित रखा जाता है और उनसे कहा जाता है कि ''नहीं, आप एक नौकर हैं, आपको हमारे आदेश मानने होंगें।'' यदि एक ऐसी बेहतरीन अखिल भारतीय सेवा नहीं होगी, जिसे अपने दिलों-दिमाग से काम करने की स्वतंत्रता हो, जिसे आप पर यह भरोसा हो कि आप अपने वचन का पालन करेंगे, और आखिरकार संसद है, जिस पर हम गर्व कर सकते हैं, जहां उनके अधिकार और विशेषाधिकार सुनिश्चित हैं, तो संघ काम नहीं करेगा, आप भारत को एकीकृत नहीं कर पाएंगे।''

''आज मेरे सचिव ने मेरे विचारों के प्रतिकूल टिप्पणीं लिखी। मैंने अपने सभी सचिवों को यह आज़ादी दी है। मैंने उनसे कहा है कि ''यदि आप अपने मंत्री के नाखुश होने के भय के कारण अपनी निष्पक्ष राय व्यक्त नहीं करते हैं, तो आपके लिए यह बेहतर होगा कि आप कृपया करके चले जाएं, मैं नये सचिव की व्यवस्था कर लूंगा।''

स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रारंभिक वर्षों में, 1950 के दशक[1] में और यहां तक कि 60 के

दशक के प्रारंभ में राजनीतिक नेताओं और सिविल सेवा अधिकारियों के बीच संबंध विश्वास पर आधारित थे और सिविल सेवा की कार्यप्रणाली गैर-पार्टीगत थी। इस भरोसे के चलते लोक सेवकों में धीरे-धीरे एक विभाजन होने लगा। उनके राजनीतिकरण के भी कई मामले सामने आने लगे। राजनीतिज्ञों और लोक सेवकों के बीच दो प्रकार के संबंध उभर कर सामने आए। पहले के अंतर्गत वे अधिकारी शामिल थे जिन्होंने निष्ठा और ईमानदारी बनाए रखने की कोशिश की। दूसरी श्रेणी में ऐसे वरिष्ठ सिविल अधिकारी शामिल थे, जिन्होंने राजनीतिक कार्यकारियों की ताबेदारी करना शुरू कर दिया और सिविल सेवा मानदंड, ईमानदारी और नैतिक व्यवहार की परवाह किए बिना उनके अनुकूल काम करने लगे। एक राजनीतिक दल से सत्ता दूसरे राजनीतिक दल को हस्तांतरित होने की स्थिति में अक्सर दूसरी श्रेणी के अधिकारियों का विभाजन हो जाता है। सिविल सेवा के प्रतिबद्ध गुट का

एक समूह राजनीतिक कार्यकारियों के साथ घनिष्ठ सहयोग करते हुए अपनी पारी शुरू करता है और दूसरे गुट को पर्दे के पीछे ढकेल देता है। प्रथम श्रेणी में अधिकारियों की संख्या धीरे-धीरे कम होने लगती है। निरंतर यह भावना बढ़ती जाती है कि इस श्रेणी के अंतर्गत आने वाले लोक सेवकों के साथ कार्य सौंपने, स्थानांतरण अथवा अन्य सेवा मामलों में राजनीतिक वर्ग द्वारा निष्पक्ष व्यवहार न किए जाने की आशंका बढ़ जाती है।

उपरोक्त संदर्भ में एक महत्वपूर्ण मुद्दा, जिसकी अक्सर अनदेखी की जाती है, वह यह है कि बेहतर शासन के लिए अच्छे नागरिकों की आवश्यकता पड़ती है। इसमें संकट की स्थिति उस समय उत्पन्न होती है जब राजनीतिक कार्यकारी और उनके ताबेदार बेहतर प्रशासन के मानदंडों को भूल जाते हैं।

सिविल सेवा चुनौतियों से परिपूर्ण आकर्षक अवसर प्रदान करती है। इतनी व्यापक चुनौतियां प्रदान करने वाली सेवाएं गिनी-चुनी हैं, जहां क्षेत्र में जाकर काम करने और नीति निर्धारण के मिले-जुले अवसर मिलते हैं। साथ ही राष्ट्रीय विकास प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने का अवसर भी मिलता है। इन चुनौतियों से संतोषजनक ढंग से निपटने के लिए आपको अपने काम और प्रतिबद्धता पर गर्व होना चाहिए। लेकिन, इसके लिए जिन गुणों की आवश्यकता है, उन्हें विकसित करना होगा।

अखिल भारतीय सेवाओं से संबंधित वरिष्ठ लोक सेवक जिस प्रतिबद्धता के साथ सेवा में भर्ती होते हैं, यदि उसे बनाए रखना है, तो उन्हें विशेष दायित्व का निर्वाह करना होगा। सामान्य कार्यव्यापार से वांछित परिणाम हासिल नहीं किए जा सकते। लोक सेवकों के लिए व्यवहार के कुछ मानदंडों को पूरा करना अनिवार्य है, जो आगे चल कर उन्हें सफलता दिलाते हैं, हालांकि अल्पावधि में उनका पालन कष्टदायक हो सकता है। नियमों और कानूनों के अनुसार काम करते समय अथवा उनके प्रभावों की ओर इंगित करना जोखिम टालने का व्यवहार समझा जा सकता है। किसी अधिकारी को महत्वहीन कार्य भी सौंपा जा सकता है। कुछ अन्य अधिकारी ऐसे भी हो सकते हैं जो राजनीतिक आकाओं के साथ अपनी घनिष्ठता का लाभ अल्पावधि प्रयोजनों के लिए उठाने का प्रयास करें। किंतु, आमतौर पर दीर्घावधि में जाकर उन्हीं अधिकारियों को सफलता और सम्मान मिलता है, जो कायदे-कानूनों के अनुसार काम करते हैं और कार्यों को अंजाम देते हैं। ऐसे लोक सेवकों का अपने समूह के साथियों, अधीनस्थ कर्मचारियों, आम लोगों और राजनीतिक पार्टियों के सभी दायरों में सम्मान किया जाता है।

लोक सेवकों को व्यावसायिक आचरण के मानदंडों का अनुपालन करना होता है। ऐसा करने से न केवल बेहतर शासन की कार्यसूची को प्रमुखता मिलती है बल्कि देश की वृद्धि एवं संवृद्धि के लिए एक स्टील फेम के रूप में सम्मानित अखिल भारतीय सेवा की प्रतिष्ठा फिर से बढ़ाने में भी मदद मिलती है। इससे सिविल सेवाओं में लोगों का विश्वास विकसित करने और नए सिरे से सम्मान अर्जित करने में भी सहायता मिलती है।[2] मैं लोक सेवकों के लिए कुछ मानदंड उजागर करना चाहूंगा :

उच्च स्तरीय व्यक्तिगत निष्ठा बनाए रखना

सिविल सेवाओं की शक्ति लोगों के इस विश्वास में निहित है कि वे पूरी तरह भ्रष्टाचार मुक्त हों और ईमानदार हों। विशेष रूप से, उच्चतम स्तर के लोक सेवकों से निष्ठा और ईमानदारी की अपेक्षा की जाती है, जो पूरी तरह निष्कलंक हों। इससे आप ऐसे राजनीतिक नेताओं का सहयोग प्राप्त कर सकते हैं, जो ईमानदार अधिकारियों का सम्मान करते हैं। भ्रष्ट व्यवस्था में भी ऐसे अधिकारी सम्मानित होते हैं।

कानून, नीतियों और प्रशासनिक निर्णयों को लागू करने में पूरी तरह निष्पक्षता बरतें। लोक सेवकों की सबसे बड़ी ताकत इस बात में है कि लोग उनकी निष्पक्षता और उचित कार्यों तथा पारदर्शितापूर्ण कार्यप्रणाली में भरोसा रखते हों। इस बात के रचनात्मक प्रयास अवश्य करें कि आपके निर्णय लोगों की नज़रों में भी निष्पक्ष और पारदर्शी हों। यह भरोसा अर्द्धसैनिक बलों की अनेक बटालियनों के समान है।

लोग आपकी जानकारी और कौशल के लिए आपका सम्मान करते हैं। समुचित ज्ञान अर्जित करें और हल किए जाने वाले मुद्दों का पूरी तरह मूल्यांकन करने और उन्हें समझने के लिए ब्यौरों पर समुचित ध्यान देते हुए विश्लेषणात्मक योग्यता विकसित करें। मुद्दों को पूरी तरह समझने के बाद किए गए निर्णय कार्यान्वयन के योग्य होने चाहिए और उनके वांछित परिणाम हासिल किए जाने चाहिए।

फील्ड कार्य, जिन पर लोक सेवकों को अक्सर समय बिताना पड़ता है, प्रणाली में परिवर्तन का अवसर प्रदान कर सकते हैं। आपका लक्ष्य नतीजे हासिल करने और एक सक्षम फील्ड अधिकारी के रूप में काम करने का होना चाहिए। इसके लिए कठिन और अलोकप्रिय फ़ैसले करने पड़ सकते हैं। इसके लिए अक्सर ''लीक से हटकर'' सोचना पड़ता है और भ्रष्ट के खिलाफ़ कार्रवाई करनी होती है। सही कदम उठाते हुए कभी संकोच न करें। किंतु, अपने निर्णय निष्पक्ष और न्यायसंगत ढंग से लें। कुछ मामलों में आपको कठिन स्थिति का सामना करना पड़ सकता है।

बेहतर शासन नागरिकों का मूलभूत अधिकार है। लोक सेवा वितरण और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में अंतरालों की पहचान करें। उन नियमों और विनियमों की पहचान करें, जो प्रगति में बाधा डाल रहे हों और सरकार को उनमें संशोधन का सुझाव दें। कार्यान्वयन में उत्कृष्ट पद्धतियों और नवाचार का इस्तेमाल करें और अपनी टीम में उनके विकास को प्रोत्साहित करें। नए विचारों को स्वीकार करने के लिए खुले दिलो-दिमाग से काम लें। यदि लोक सेवाओं का वितरण सक्षम तरीके से करना है, तो उपभोक्ता संतुष्टि का ध्यान रखें, वित्तीय संसाधनों का अनुकूलतम इस्तेमाल करें, आर्थिक बेहतरी और भ्रष्टाचार समाप्त करने की दिशा में काम करें।

सरकारी ढांचे को सबसे बड़ा नुक़सान निर्णय करने में संकोच या जानबूझ कर निर्णय न किए जाने से पहुंचता है। यदि आपको अपनी योग्यता पर संदेह है अथवा आप किसी फ़ैसले के परिणामों के लिए जिम्मेदार ठहराए जाने से घबराते हैं, तो आपको सिविल सेवा में नहीं आना चाहिए। सिविल सेवा में समूचा कॅरियर निर्णय करने और निर्णय करने के लिए स्पष्ट नीति अनुशंसाएं करने से संबद्ध है। गलतियों पर अक्सर ध्यान नहीं जाता है और उन पर कोई सजा नहीं दी जाती है। किंतु, बेहतर शासन के लिए गलतियां अत्यंत नुक़सानदायक हैं।

सिविल सेवा में आप हमेशा टीम के नेता हो सकते हैं। अपने संगठन, जिसका आप नेतृत्त्व कर रहे हैं, के लक्ष्य हासिल करने और महत्वपूर्ण निष्पादन मानदंड पूरे करने की पूरी जिम्मेदारी लें। अधिकार सौंपना सीखें, लेकिन

कारगर नेतृत्त्व सुनिश्चित करें। यह तभी संभव है जब संगठन में आपके बारे में यह धारणा हो कि आप लक्ष्यों में कमी के लिए अपने मातहत कर्मचारियों को दोष देने के आदी नहीं हैं।

निर्धनों, विशेषकर, सीमांत समूहों, महिलाओं, अजा/अजजा और अल्पसंख्यकों की जरूरतों के प्रति संवेदनशील बनें। ये ऐसे समूह हैं, जिनकों आपकी सहायता की सबसे अधिक जरूरत है। उनके लिए कार्यक्रमों का कार्यान्वयन और उनके कल्याण के लिए आपकी समानुभूति एक समतावादी समाज के निर्माण में मददगार हो सकती है। उनके कल्याण के लिए रचनात्मक कार्यों से सिविल सेवा में विश्वास बढ़ाया जा सकता है।

राजनीतिज्ञ लोगों के कल्याण के लिए विभिन्न उद्देश्य हासिल करने हेतु नीतियां तय करते समय सिविल सेवा अधिकारियों से परामर्श करते हैं। आपको चाहिए कि मंत्रियों को परामर्श देते समय और वरिष्ठ लोक सेवक के रूप काम करते हुए, उन सभी नीति विकल्पों का विश्लेषण करें जो विचारणीय मुद्दे के संदर्भ में उपयुक्त हो सकते हैं। इस बात की भी जांच करें कि सरकार जो नीति लागू करना चाहती है, क्या वह राजनीतिक मजबूरी है और केवल अल्पावधि लाभ के लिए है और दीर्घावधि राष्ट्रीय हित के लिए नहीं है। यदि ऐसा हो तो अपने विचार युक्तिसंगत और स्पष्ट रूप से रखें। आप किसी नीति विकल्प को सर्वाधिक उपयुक्त और नीति के उद्देश्यों को पूरा करने वाला क्यों समझते हैं, इसके लिए समुचित कारणों के साथ स्पष्ट रूप से सुझाव पेश करें।

परामर्श देते समय, यह पूर्वानुमान न लगाएं कि मंत्री को क्या सुनना पसंद है। बताएं कि आपकी नज़र में सर्वाधिक उपयुक्त कार्रवाई क्या हो सकती है। ऐसा करने पर दीर्घावधि में समकक्ष अधिकारियों और राजनीतिक नेताओं के बीच आपको सम्मान मिलेगा।

सार्वजनिक विचार-विमर्श के दौरान सरकारी नीति की आलोचना न करें। लोक सेवक के रूप में आपका यह दायित्व है कि सरकार की सहायता करें ताकि वह अपनी नीतियों का बचाव कर सके। नीतियों की आलोचना करके आप सरकार को और स्वयं को कमजोर करते हैं। यदि कोई मुद्दा वास्तव में गंभीर है और आपको लगता है कि आप सरकार की ऐसी नीतियों के साथ बने नहीं रह सकते तो आपको नौकरी छोड़ने और कोई अन्य व्यवसाय शुरू करने पर विचार करना चाहिए।

अंतर-वैयक्तिक कौशल विकसित करें। आधुनिक विश्व में विविध प्रकार के संगठनों, निजी क्षेत्र के विस्तार और प्रौद्योगिकी विषयक विस्तार को देखते हुए, यह महत्त्वपूर्ण है कि आप विभिन्न क्षेत्रों के लोगों के साथ अच्छे संबंध बनाएं ताकि आवश्यकता पड़ने पर आप उनसे संपर्क कर सकें। इससे क्षेत्र में कठिन मुद्दों का हल करते समय आपकी प्रभावकारिता में वृद्धि होगी।

सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी), नई प्रौद्योगिकी और उसके इस्तेमाल करने की आदत डालें, ताकि बेहतर शासन सुनिश्चित किया जा सके। सूचना प्रौद्योगिकी से विलंब कम करने, सरकारी सेवाओं का सक्षम वितरण सुनिश्चित करने और भ्रष्टाचार दूर करने में मदद मिलती है। अत: आपको इस प्रौद्योगिकी की क्षमता और इस्तेमाल की पूरी जानकारी होनी चाहिए। बेहतर शासन को प्रोत्साहित करने के लिए प्रशासनिक प्रक्रियाओं को सरल बनाएं।

अपने मंत्रालय का दृष्टिकोण बेहतर ढंग से व्यक्त करने के लिए पर्याप्त समय पहले से तैयारी करें। अपने विचार संक्षेप में और संकेंद्रित रूप से पेश करें। यह महत्वपूर्ण है कि आप विचारणीय मुद्दों को पूरी तरह समझें और अंतर-मंत्रालयी मंच पर प्रस्तुत किए जाने वाले दृष्टिकोण के बारे अपने दिमाग में स्पष्ट चित्र रखें।

आगंतुकों और विभिन्न विचार रखने वाले लोगों की बात ध्यान से और धैर्य पूर्वक सुनने की क्षमता विकसित करें। इस तरह आप क्षेत्र की समस्याओं के बारे में व्यापक फीडबैक प्राप्त कर सकते हैं और अलग-अलग दृष्टिकोण तय कर सकते हैं। यह सीखने का नायाब तरीक़ा हो सकता है।

योजनाबद्ध नीति लक्ष्य के अनुरूप आम सहमति पर आधारित और एकीकृत दृष्टिकोण तैयार करने की योग्यता विकसित करें। ऐसा करते समय आप किसी समस्या के तकनीकी सामाजिक और राजनीतिक आयामों का मूल्यांकन और आकलन करने में सक्षम होने चाहिए। वरिष्ठ स्तर पर नीति तय करने में यह अत्यन्त आवश्यक है, जहां विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोणों और विचारों को एक साथ रख कर देखना होता है। प्रभावकारी नीति कार्यान्वयन के हित में कठिन फ़ैसला करते समय आपको कोई दुविधा नहीं होनी चाहिए।

जमीनी वास्तविकताओं और व्यवहार्य नीतियों के बारे में सुविचारित निर्णय करें। विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों के लिए प्रस्तावित नीतियों अथवा योजनाओं के बारे में, उन क्षेत्रों में काम कर रहे लोगों से फीडबैक प्राप्त करें, जहां उन्हें लागू किया जाना हो। अपनी योजनाओं के बारे में जमीनी वास्तविकताओं के साथ पर्याप्त लचीलापन सुनिश्चित करें।

चुनौतीपूर्ण कार्यों को स्वीकार करें। ऐसे कार्यों से भागने की कोशिश न करें। ऐसे कार्यों में अक्सर कठिन निर्णय लेने होते हैं और नाकामयाबी का जोखिम होता है। यदि आप चुनौतीपूर्ण कार्य स्वीकार्य करते हैं और सभी संबद्ध पक्षों के साथ एक टीम के रूप में बुद्धिमानी पूर्वक काम करते हैं, तो सफलता सुनिश्चित की जा सकती है। इससे आपका ज्ञान बढ़ेगा और कठिन कार्यों को अंजाम देने की आपकी योग्यता का परीक्षण हो सकेगा।

गंभीर उकसावे या उत्तेजना की स्थिति में अपने सिद्धांतों और विश्वास पर अडिग रहें। अपनी शांति भंग न करें। प्रशासनिक चुनौतियां विविध प्रकार की होती हैं और उनमें विभिन्न प्रकार के लोग और संगठन निहित स्वार्थों के साथ जुड़े होते हैं। आप उनसे तभी निपट सकते हैं जब सभी प्रश्नों का जवाब शांतिपूर्वक और वस्तुनिष्ठ तरीके से दे सकें।

लोक सेवक सरकार के प्रति जवाबदेह होते हैं। किंतु, उनकी जवाबदेही लोगों के प्रति भी होती है। सरकारी नीति और कार्यक्रमों के आधार पर

1. संविधान सभा भारतीय सिविल सेवा पर बहस, वॉल्यूम (ग), 10 अक्टूबर, 1949 ।
2. ''एथिक्स इन गवर्नेंस'' (जनवरी, 2007) : चौथी रिपोर्ट, दूसरा पशासनिक सुधार आयोग, भारत सरकार।
3. गवर्नेंस, वोल्यूम 1, चैप्टर 10, पृष्ठ 295, ट्वेल्थ फाइव इयर प्लान आफ इंडिया (2012-17)।

कुछ महत्वपूर्ण लक्ष्य क्षेत्रों की पहचान करें, जिन्हें आपको अपने कार्य के दौरान अवश्य हासिल करना है। लोगों की जरूरतों की पहचान करें और उन्हें अपने कार्यक्रम में शामिल भी करें।

उपरोक्त संदर्भ में एक दिलचस्प पहलू शासन प्रणाली में सुधार लाने के राजनीतिक कार्यकारी और लोक सेवक के दायित्व से संबद्ध है। यहां इस बात पर बल देना होगा कि लोक प्रशासन और बेहतर शासन को सुदृढ़ करने का दायित्त्व लोक सेवकों पर अधिक है। किंतु, नीति निर्माण या फील्ड दायित्त्वों के हिस्से के रूप में काम करते हुए, यह उपयोगी हो सकता है कि राजनीतिक कार्यकारी और सिविल सेवा के बीच संबंध के स्वरूप को समझ लिया जाए। इस संदर्भ में सरकारी सेवाएं प्राप्त करने में लोगों को होने वाली व्यापक असुविधाएं और व्यापक भ्रष्टाचार को समझना अनिवार्य है। अतः निम्नांकित मुद्दों पर बल देने की आवश्यकता है :

– शासन प्रणाली और सरकारी सेवाओं के वितरण में भ्रष्टाचार अत्यंत व्यापक है। शुरू में भ्रष्टाचार निवारण के उपायों की संभावना के साथ काम करना चाहिए। इसके लिए यह जरूरी है कि सार्वजनिक सेवा वितरण प्रक्रियाओं को सरल बनाया जाए, सूचना प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल किया जाए और निर्णय करने की प्रक्रिया में पारदर्शिता लाई जाए। इसके बाद भ्रष्टाचार के दोषी व्यक्तियों की पहचान की जाए और उन्हें शीघ्र दंडित किया जाए।[3]

– यह स्मरण कराना उपयोगी होगा कि अखिल भारतीय सेवाएं संविधान (अनुच्छेद 312) की रचनाएं हैं। सेवाओं को राजनीतिक कार्यकारी के नेतृत्त्व में सरकार द्वारा निर्धारित नीतियों का अनुपालन करना होता है, लेकिन अधिकारों का इस्तेमाल करते समय उन्हें विभिन्न कानूनों के अंतर्गत कुछ कानूनी दायित्वों का निर्वाह भी करना होता है। ऐसे अधिकार का इस्तेमाल स्वतंत्र रूप से अपने दिमाग से करना होगा।

यह महत्वपूर्ण है कि लोक सेवक नीति निर्माण कार्य में संलग्न होने के समय संबद्ध मुद्दों का विश्लेषण करने में अपने विचार स्पष्ट रूप से लिखें। यदि सरकार की कोई नीति जनहित में न हो, और उसके हानिकारक परिणाम आने की आशंका हो, तो आप उसका उल्लेख स्पष्ट रूप से अपनी टिप्पणियों और विश्लेषण में करें। परंतु, आपके द्वारा स्पष्ट रूप से अपने विचार व्यक्त किए जाने और सुविचारित निर्णय किए जाने के बाद, उसे पूरी शक्ति के साथ कार्यान्वित किया जाना चाहिए। इस प्रकार, लोक सेवक अपने विचार व्यक्त करने के लिए स्वतंत्र है, लेकिन आप सरकार द्वारा किए गए किसी निर्णय का तब तक विरोध नहीं कर सकते जब तक कि गंभीर बौद्धिक अंतर न हों। ऐसे मामलों में आपको नौकरी छोड़ने और नये व्यवसाय में जाने पर विचार करना चाहिए।

आपके समक्ष ऐसी जटिल स्थितियां आ सकती हैं, जिनमें मंत्रियों और कुछ लोक सेवकों द्वारा अपने अधीनस्थों पर कानूनी आदेश जारी कराने की कोशिश की गई हो। इसकी वजह परोक्ष मौद्रिक हित या भ्रष्टाचार हो सकता है। इसके पीछे अपराधियों का एक समूह हो सकता है। ऐसी सभी धुंधली और अस्पष्ट स्थितियों में लोक सेवकों को इन स्थितियों से निपटने के लिए स्पष्ट कार्ययोजना बनानी चाहिए। ऐसी स्थितियों से निपटने के लिए आपकी दृष्टि एक दम स्पष्ट होनी चाहिए। सबसे पहले ऐसे आदेशों की अनदेखी करें जो अवैध हों अथवा किसी कानून के खिलाफ़ हों या कानून द्वारा आपको प्रदान किए गए प्राधिकार के विरुद्ध हों। दूसरे, यदि आप प्रशासनिक आदेशों को अनुचित या असंगत पाते हैं, तो कारण बताते हुए उनका विरोध अवश्य करें। किंतु, यदि इसके बाद भी उनकी पुनरावृत्ति होती है, तो उन्हें लागू किया जाना चाहिए। कुछ मामलों में ऐसे आदेश आपके कॅरियर को नुक़सान पहुंचा सकते हैं। किंतु, दीर्घावधि में उनके लिए आपको अपने समकक्ष अधिकारियों और सहयोगियों से सम्मान प्राप्त होगा। अनेक मामलों में अनुचित या असंगत आदेशों को लागू न करने से आपको होने वाले नुकसान की भरपाई हेतु आपके सहयोगी और वरिष्ठ अधिकारी आगे आ सकते हैं। सफलता का मूल्य चुकाना होता है। सफलता असत्य, असमान और अवैध स्थितियों पर हासिल नहीं की जा सकती।

संविधान के प्रति जिम्मेदार राजनीतिक कार्यकर्ता को भी इस बात पर पुनः विचार करना होगा कि शासन को कैसे सुदृढ़ बनाया जा सकता है। ऊपर वर्णित व्यवहार के मानदंड लागू करने के लिए सुदृढ़ राजनीतिक सहमति की आवश्यकता है। उन पर समूचे देश में विचार-विमर्श कराने और अमल करने की सहमति लेने की आवश्यकता पड़ सकती है। जैसा कि छह दशक पहले सरदार पटेल ने सलाह दी थी। ❑

(लेखक योजना आयोग के सदस्य हैं। श्री चतुर्वेदी ने भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी के रूप में अपने व्यावसायिक जीवन की शुरुआत की और भारत सरकार में कैबिनेट सचिव के पद से सेवानिवृत हुए। ई-मेलः bkchaturvedi@nic.in **)**

योजना
आगामी अंक

अप्रैल 2014 (विशेषांक)
भारतीय अर्थव्यवस्था- प्रदर्शन, चुनौतियां एवं संभावनाएं

मई 2014
ऊर्जा सुरक्षा

Career Launcher News www.careerlauncher.com/civils

CAREER LAUNCHER

सिविल सेवा अभ्यर्थी

Test Series Notice No. 00/2014 - 15 February 2014

सिविल सेवा (प्रारंभिक) परीक्षा, 2014

13* बार आयोजित की जाएगी

यदि आप CL की टेस्ट सीरीज़ में भाग लेते हैं तो यह आपके लिए बिल्कुल सच है। CL से जुड़ने का सबसे बड़ा लाभ यह है कि आपको हूबहू प्रारंभिक परीक्षा जैसा अनुभव प्राप्त करने के 12 अवसर प्राप्त होंगे जबकि अन्य संस्थान यह अवसर मात्र 2 या 3 बार प्रदान करते हैं। CL की टेस्ट सीरीज़ से आप के लिए प्रारंभिक परीक्षा अत्यंत सरल हो जाएगी और आपको ऐसा प्रतीत होगा कि आप 13वाँ मॉक टेस्ट दे रहे हैं। CL की टेस्ट सीरीज़ के अन्य लाभ निम्नलिखित हैं:

	UPSC	CL	अन्य
1. संपूर्ण भारत में आयोजन	✓	✓	×
2. 10,000 से अधिक अभ्यर्थी	✓	✓	×
3. सामान्य अध्ययन I & II एक ही दिन	✓	✓	×
4. हिंदी एवं अंग्रेज़ी दोनो भाषाओं में प्रश्न पत्र	✓	✓	×
5. ओएमआर शीट	✓	✓	×
6. स्कूलों में परीक्षा	✓	✓	×
7. ऑल इंडिया रैंक	×	✓	×
8. टेस्ट परिचर्चा	×	✓	×
9. पर्सनल फीडबैक	×	✓	×
10. टेस्ट के तुरंत बाद प्रश्न पत्र का हल	×	✓	✓

सिविल सेवा प्रारंभिक परीक्षा में CL के अभ्यर्थियों की सफलता की दर 6# गुना अधिक है

30.07%
CL के अभ्यर्थियों की सफलता की दर

4.7%
अन्य अभ्यर्थियों की सफलता की औसत दर

23 मार्च 2014 से टेस्ट सीरीज़ प्रारंभ
प्रधान परीक्षा 2012 एवं प्रारंभिक परीक्षा 2013 में सफल अभ्यर्थियों के लिए विशेष ऑफर

CL के 742 अभ्यर्थी सिविल सेवा प्रधान परीक्षा, 2013 के लिए योग्य पाये गये

CL | Civil Services Test Prep
www.careerlauncher.com/civils
/CLRocks

*CL के 12 मॉक टेस्ट +1 UPSC की असली सिविल सेवा प्रारंभिक परीक्षा

हमारे पास उपलब्ध आँकड़ों के आधार पर

कक्षाओं के लिए नए बैच शीघ्र प्रारंभ, विस्तृत जानकारी के लिए कृपया निकटतम् CL सेंटर पर संपर्क करें

मुखर्जी नगर: 204/216, द्वितीय तल, विराट भवन/एमटीएनएल बिल्डिंग, पोस्ट ऑफिस के सामने, फोन - 41415241/46
ओल्ड राजेन्द्र नगर: 18/1, प्रथम तल, अग्रवाल स्वीट कॉर्नर के सामने, फोन - 42375128/29
बेर सराय: 61बी, ओल्ड जे. एन. यू. कैम्पस के सामने, जवाहर बुक डिपो के पीछे, फोन - 26566616/17
साउथ कैम्पस: 283, प्रथम तल, वेंकेटेश्वरा कॉलेज के सामने, सत्या निकेतन, फोन - 24103121/39

अहमदाबाद: 2656061 | इलाहाबाद: (0)9956130010 | बंगलुरू: 41505590 | भोपाल: 4093447 | भुवनेश्वर: 2542322 | चंडीगढ़: 4000666 | चेन्नई: 28154725
हैदराबाद: 66254100 | इन्दौर: 4244300 | जयपुर: 4054623 | लखनऊ: 4108009 | नागपुर: 6464666 | पटना: 2678155 | पुणे: 32502168

YH-277/2013

लोक सेवा में सुधार
एक नये प्रबंधन दर्शन की ओर

बी. पी. माथुर

पश्चिमी देशों की सफलताओं की बढ़ती कहानियों में शासन में सुधार एक प्रमुख कारण के रूप में महसूस किया जा रहा है। ऐसी अवधारणा है कि आर्थिक और सामाजिक विकास के निराशाजनक भारतीय रिकॉर्ड के पीछे लोक सेवाओं का कमज़ोर प्रदर्शन रहा है। प्रशासनिक मशीनरी इस तरह तैयार ही नहीं की गई है कि वह लोकोन्मुखी सेवाएं दे सकें, क्योंकि नौकरशाही में कार्यप्रणाली के दोषों और अक्षमताओं की भरमार है। द्वितीय, प्रशासनिक सुधार आयोग (कार्मिक प्रशासन, 2008 की 10वीं रिपोर्ट) ने महसूस किया कि 'अक्सर प्रणालीगत अवरोध , अनावश्यक जटिलताएं और अति केंद्रीकरण ने लोक सेवकों को सकारात्मक परिणाम प्राप्त करने की दिशा में अप्रभावी और निरुपाय बना कर रख दिया है। दूसरी ओर, अधिकारों का दुरुपयोग, नकारात्मक शक्ति प्रदर्शन, कानून का उल्लघंन, निरंकुशता और असंज्ञयक मूल्यों पर लगाम नहीं कसी जा सकी है।'

देश में आज हम जिन प्रमुख चुनौतियों से दो-चार हो रहे हैं, उनमें लोक प्रबंधन प्रणाली में सुधार एक है। इस समस्या के एक बड़े हिस्से के मूल में नौकरशाही की वह संजालनुमा व्यवस्था है, जो हमें ब्रिटिश शासन प्रणाली से मिला है। संजालिक नौकरशाही के अंतर्गत एक ऐसे करियर की रूपरेखा सामने आती है, जिसमें वरियता के आधार पर प्रोन्नति, अधिकारियों के लिए नियत पारिश्रमिक और पेंशन के अधिकार आदि शामिल हैं और जिसमें पदानुक्रम की निहित व्यवस्था के साथ-साथ कठोर नियमावलियां शामिल होती हैं। अनुभवों से यह सामने आया है कि पुराने फैशन की नौकरशाही लोगों की जरूरतों के प्रति उन्मुखी नहीं होती, क्योंकि उस प्रणाली में लाल फीताशाही और औपचारिकताएं गुंथी हुई होती हैं। वे परंपराओं से चलती हैं और यथास्थितिवाद की पोषक होती हैं। आज के माहौल में जहां कंप्यूटर, इलेक्ट्रॉनिक्स और संचार के क्षेत्र में समय और स्थान की अहमियत सबसे ज्यादा है, वहां ऐसी संस्थाओं की मांग बढ़ी है, जो लोगों को उच्च गुणवत्ता सेवा देने में सक्षम हों और जटिल वैश्विक दुनिया में विविध प्रकार की चुनौतियों का सामना करने को तैयार हों। इंग्लैंड, न्यूजीलैंड, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा और सिंगापुर जैसे राष्ट्रमंडल देशों ने संजालिक नौकरशाही के मॉडल को दरकिनार कर एक नये दर्शन को अपनाया है, जिसे बढ़ती हुई प्रभावी लोक सेवा का नया लोक प्रबंधन कहा जाता है। नये लोक प्रबंधन के दर्शन का प्रमुख अवयव प्राधिकार सत्ता को नकारना, प्रदर्शन और ग्राहकों पर ध्यान केंद्रित करना है।

भारत में कई उच्चस्तरीय समितियां और आयोग बनी हैं जिनमें मौजूद प्रख्यात लोगों ने लोक प्रबंधन प्रणाली में सुधारों से संबंधित कई अनुशंसाएं की हैं लेकिन वे सभी लागू नहीं हो पायी हैं। इसके परिणामस्वरूप हम एक ऐसी अप्रचलित नौकरशाही मशीन के घेरे में फंस कर रह गए हैं, जिसमें देश के लोगों को भारी क़ीमत चुकानी पड़ रही है। लोक सेवाओं की कमजोर कार्यप्रणाली के प्रमुख कारणों में से जिम्मेदारी का अभाव, पुराने कानून, नियम और प्रविधियां, केंद्रीकरण का उच्चतम स्तर, कमज़ोर कार्यसंस्कृति, व्यावसायिक मानसिकता का अभाव और सेवाओं का राजनीतिकरण आदि प्रमुख हैं।

लोक सेवाओं को जिम्मेवार बनाना

लोक सेवाओं के कमज़ोर प्रदर्शनों के प्रमुख कारणो में से एक जिम्मेदारी का अभाव है। जिम्मेदारियां (अ) प्रोन्नति और कैरियर की वृद्धि को अधिकारी के वास्तविक कार्यप्रदर्शन के आधार पर जोडकर, (ब) लोक सेवा में प्रतिस्पर्द्धा बढ़ाकर और (स) सख्त अनुशासनात्मक व्यवस्था स्थापित कर तय की जा सकती हैं।

प्रदर्शन पर जोर

आज लोक सेवाओं में कठिन परिश्रम और मेधावी कार्यों के लिए पुरस्कृत करने पर कम ही जोर दिया जाता है। प्रोन्नति के नियमों के अनुसार ज्यादा निर्भरता वार्षिक गोपनीता रिपोर्ट पर होती है और निश्चित समय आने पर सभी को प्रोन्नति मिल जाती है और इससे सामान्यता को ही बढ़ावा मिलता है। द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (एआरसी) ने सुझाव दिये थे कि मौजूदा प्रदर्शन निर्धारण प्रक्रिया असंतोषप्रद है और उसने सुझाव दिया था कि इसे 360 डिग्री फीडबैक के आधार पर पूरी तरह पारदर्शी बनाया जाना चाहिए, सैन्य सेवाओं की तरह संख्यात्मक रेटिंग की जानी चाहिए और प्रदर्शन के मूल्यांकन के लिए तीसरे पक्ष को शामिल किया जाना चाहिए। किसी अधिकारी के करियर का सबसे महत्वपूर्ण पड़ाव के अंतर्गत एआरसी का सबसे महत्वपूर्ण सुझाव एक गहराई से जुड़ी मूल्यांकन प्रक्रिया सुनिश्चित करना था, जिसके तहत सबसे पहले 14 साल की सेवा पूरी करने के बाद समीक्षा की जाए और दूसरी बार 20 साल की सेवा पूरी करने के बाद प्रदर्शन की समीक्षा हो। अगर वह दूसरी समीक्षा के बाद अनफिट पाया जाता है तो उसकी सेवा समाप्त कर देनी चाहिए। 'सरकारी सेवक की प्रोन्नति, कैरियर की वृद्धि और सेवा नियमितीकरण पूरी तरह उसके काम के वास्तविक प्रदर्शन से जोड़ा जाए और अक्षम लोगों को बाहर का रास्ता दिखया जाए।'

वरिष्ठ कर्मियों के नियोजन में प्रतिस्पर्द्धा और विशेषज्ञ ज्ञान को लाया जाए

नीति नियंताओं का काम जटिल प्रकृति का होता है और इसके लिए विषय की विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। मौजूदा प्रणाली में वरिष्ठ पदों के अधिकांश नियोजन आईएएस अफसरों के बीच से किये जाते हैं जो सामान्य

लोग होते हैं। दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग ने महसूस किया था कि संयुक्त सचिव और ऊपर के स्तर के अधिकारियों के पैनल बनाने की प्रविधि साफ-सुथरी, वस्तुनिष्ठ और पारदर्शी नहीं है और इसमें पद की प्रकृति के अनुसार विशेषज्ञता की अकसर अनदेखी की जाती है। आयोग ने 12 ऐसे सांचों की पहचान की थी, जिसमें अधिकारों को विशेषज्ञता हासिल होनी चाहिए। आयोग ने यह अनुशंसा की थी कि सभी अखिल भारतीय और केंद्रीय लोक सेवा अधिकारियों को उनकी 13 साल की सेवा पूरी कर लेने के बाद वे सांचे अनुबंधित कर देने चाहिए और उप सचिव-निदेशक स्तर के अधिकारियों की नियुक्ति में उन सांचों की विशेषज्ञता और काम में दक्षता का ख्याल रखा जाना चाहिए। आयोग का सुझाव था कि वरिष्ठ स्तर जैसे वरिष्ठ प्रशासनिक ग्रेड और उसके ऊपर (संयुक्त सचिव स्तर) प्रतियोगिता आयोजित कर इन पदों के लिए सभी सेवाओं के अधिकारियों के लिए रास्ते खोल देने चाहिए। उच्च प्रशासनिक ग्रेड पदों (जैसे अतिरिक्त सचिव और उससे ऊपर) जैसे कुछ पदों पर खुली नियुक्ति की प्रक्रिया अपनायी जानी चाहिए। आयोग ने आगे एक ऐसे संवैधानिक केंद्रीय लोकसेवा प्राधिकार के गठन का सुझाव भी दिया था, जो उक्त सांचे से जुड़े मामलों को देखे, विभिन्न स्तरों पर नियुक्त होने वाले अधिकारियों के लिए पैनल बनाये, उनके कार्यकाल का निर्धारण करे और किन पदों के लिए किस तरह से नियुक्ति की जाएगी, इसे विज्ञापित करें।

काफी पहले सन् 1969 में पहले प्रशासनिक सुधार आयोग ने लोक सेवकों के लिए वरिष्ठ पदों पर नियुक्ति की पूर्व शर्त के रूप में विषय की विशेषज्ञता पर बल दिया था और सुझाव दिया था कि सभी सेवाओं में मध्यम और वरिष्ठ स्तर के प्रबंधन में केंद्रीय सचिवालय और नियुक्ति के अवसर अधिकारियों को मिलें और नियुक्तियां कैरियर के मध्य में एक प्रतियोगी परीक्षा के आधार पर हो, जिसमें संघ लोक सेवा आयोग द्वारा साक्षात्कार का प्रावधान किया जाए। सरकार द्वारा गठित सुरेंद्र नाथ समिति (2003) और होता समिति (2004) ने भी संयुक्त सचिव और सरकार में वरिष्ठ पदों पर नियुक्ति में विशेषज्ञता को आधार बनाने का सुझाव दिया था।

यह समय की जरूरत है कि सरकार का संचालन व्यावसायिक तरीके से हो और न सिर्फ़ केंद्रीय सचिवालय के संयुक्त सचिव और उच्च पद, बल्कि एसएजी/एचएजी/ (वरिष्ठ/उच्च प्रशासनिक ग्रेड) पद जैसे आयकर आयुक्त केंद्रीय उत्पाद कलेक्टर, महालेखाकार, सीपीडब्ल्यूडी के मुख्य अभियंता, स्वास्थ्य सेवा के निदेशक जैसे पदों को भी खुली प्रतियोगिता के लिए खोल दिया जाना चाहिए, न सिर्फ लोक सेवा के उम्मीदवारों के लिए, बल्कि सक्षम व्यावसायिकों जैसे- टैक्स अधिवक्ता, चार्टर्ड अकाउंटेंट, कॉरपोरेट एक्जीक्यूटिव, शिक्षाविदों, अभियंताओं और चिकित्सकों के लिए भी, यदि हम लोक सेवा में वास्तविक प्रभावकारिता लाना चाहते हैं। वस्तुनिष्ठता के लिहाज से इन पदों के लिए चयन संघ लोक सेवा आयोग के माध्यम से होना चाहिए। ऐसे देश जिन्होंने लोक प्रबंधन के नये आदर्शों को लागू किया है, जैसे इंग्लैंड, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड आदि, वहां लोक सेवकों के सभी उच्च पदों को खुली प्रतियोगिता के लिए खोल दिया गया है और लोक सेवा आयोग द्वारा नियुक्तियां की जाती हैं। अगर यह प्रस्ताव सच्चे अर्थों में लागू किया जाता है तो इससे कई लक्ष्यों को हासिल करना संभव हो सकेगा। इससे हरेक पद के लिए सर्वश्रेष्ठ अभ्यर्थी मिलेंगे, क्योंकि उनकी नियुक्ति विशेषज्ञता के आधार पर हो सकेगी। इससे सेवाओं में विशेषज्ञता की आवश्यकता की पूर्ति को सकेगी और उच्च पदों पर नियुक्ति के अधिकार राजनीतिज्ञों के हाथ से निकल जाएगा। इससे इन सेवाओं का राजनीतिकरण होने की संभावना भी खत्म हो जायेगी।

प्रभावी अनुशासनात्मक शासन की स्थापना

वर्तमान में अनुशासनात्मक कानून में इतनी रुकावटें और प्रताड़नापूर्ण है कि किसी कर्मी के दुर्व्यवहार और अनुशासनहीनता के आधार पर कार्रवाई करना कठिन हो जाता है। इस तरह एक बार नियुक्त हो जाने पर ऐसे कर्मियों को हटाना या उसे अवनत करना लगभग असंभव हो जाता है। एक कहावत है कि 'लोक सेवक बिना सिर की कील की तरह हैं, जिन्हे अंदर तो किया जा सकता है, लेकिन बाहर नहीं निकाला जा सकता।' इससे खराब कार्यसंस्कृति और अक्षमता को प्रोत्साहन मिलता है। लोक सेवा आचार और अनुशासनात्मक कानून के प्रावधान इतने छिद्रयुक्त और कमजोर हैं, जो ऐसे लोगों के हित में चले जाते हैं। संविधान की कार्यप्रणाली की समीक्षा करने के लिए न्यायमूर्ति वेंकटचलीहा की अध्यक्षता में गठित आयोग (2002) ने कहा था, 'वर्तमान में लागू संवैधानिक सुरक्षा उपाय निजी हित के लिए लोक कार्यालयों का उपयोग करने वाले दोषियों के ख़िलाफ़ तत्काल और उचित कार्रवाई करने से कवच प्रदान करते है'। आयोग ने सुझाव दिया था धारा 311 के तहत प्रदत्त संविधान के सुरक्षात्मक प्रावधानों की फिर से समीक्षा की जरूरत है, ताकि ईमानदार और सक्षम अधिकारियों को संरक्षण दिया जाए, जबकि अक्षम और बेईमान अधिकारियों को कार्यस्थल पर पनपने नहीं दिया जाये। दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग ने भी कुछ इसी तरह के विचार प्रकट करते हुए कहा था कि कानूनी सुरक्षा ने अधिकाधिक सुरक्षा का एक ऐसा वातावरण निर्मित कर दिया है कि बिना डर के भी अक्षमता और गलत कार्यों को चलाया जा सकता है। जरूरत इस बात की है कि अनुशासनात्मक कार्रवाइयों को इस तरह के प्रावधानों से लैस किया जाये कि प्राकृतिक न्याय के आदर्शों का पालन करते हुए गलत कर्मियों को दंडित किया जा सके।

कार्यसंस्कृति में बदलाव

वर्तमान में अधिकांश सरकारी विभाग कमजोर कार्यसंस्कृति और कम उत्पादकता के शिकार हैं। मूल्य प्रभावी सेवाएं प्राप्त करने के लिए प्रशासन का आकार कम करने, काम का वातावरण सुधारने और कतिपय सेवाओं के निजीकरण की आवश्यकता है। केंद्र और राज्य, दोनों ही सरकारों के पास नौकरशाही का विशालतम आकार है, जिसे कम किये जाने की जरूरत है। पांचवां वेतन आयोग (1997) सहित व्यय सुधार आयोग (केपी गीताकृष्णन ने नेतृत्व में, 2000-01)ने विभिन्न मंत्रालयों और विभागों के पुनर्गठन, पुनर्स्थापन और प्रभावकारिता बढ़ायी जा सके। उनकी कुछ अनुशंसाओं में हैं, (अ)बहुस्तरीय पदानुक्रम व्यवस्था में कमी हो और अधिकारी उन्मुखी प्रणाली हो जिसमें निर्णय लेने की प्रक्रिया में गति आए, (ब) मंत्रालय, जो नीति नियामक इकाइयां हैं, उनमें शाखा प्रणाली खत्म करके डेस्क अधिकारी की प्रणाली लागू की जाए, जहां से फाइलों की लोटिंग शुरू हो, (स) मंत्रालय के कर्मी जो विभिन्न संवर्गों में बटें हैं, जैसे- सहायक, अपर डिवीजन क्लर्क, लोअर डिवीजन क्लर्क, निजी सहायक इस संवर्ग को खत्म कर दिया जाये और उनकी जगह एक

बहुकार्य दक्ष व्यक्ति का पद- कार्यकारी सहायक लाया जाए, जो कंप्यूटर के संचालन में दक्ष हो, (द) सरकारी कार्यालयों को आधुनिक बनाते हुए वहां कंप्यूटर और तकनीकी गैजेटों की व्यवस्था की जाए, ताकि एक समुचित वातावरण का निर्माण हो सके। सरकारी कार्यालयों में कम उत्पादक कार्यों को एक वजह यह भी है कि काम का तरीका अमानवीय है। अधिकांश कर्मी काम के ज्ञाता कर्मी होते हैं और बड़े अधिकारी जैसा कहते है, वैसा ही करते हैं, वे उनकी समुचित अवहेलना नहीं कर सकते। उन्हें प्रेरक तरीके से कुछ जिम्मेवारियां और निर्णय लेने के अधिकार देकर सशक्त करने की जरूरत है। आवश्यकता इस बात की है कि सरकारी मशीनरी को चुस्त-दुरुस्त और आधुनिक सुविधाओं से युक्त एक कार्य दक्ष तरीके में बदल कर कार्यालयों से बाबू संस्कृति खत्म की जाए।

नियमों और प्राविधियों को सुचारू बनाना

नागरिकों के दैनंदिन जीवन से जुड़े अधिकांश कामों से जुड़े नियम और कानून, जैसे पासपोर्ट बनवाना, जमीन की रजिस्ट्री, गृह निर्माण की स्वीकृति लेना, नये व्यापार का लाइसेंस, फैक्ट्रियों का निरीक्षण आदि पुराने और अपचलित हैं और इससे लोक सेवकों को काम में देरी करने और लोगों को प्रताड़ित करने का मौका मिल जाता है। इनके नियमों को अद्यतन, सरल बनाया जाना चाहिए और लोक सेवकों के विशेषाधिकार समाप्त किये जाने चाहिए।

सरकारी कार्यालयों की प्रभावकारिता का एक बड़ा हिस्सा कार्मिक, वित्तीय और समर्थन प्रबंधन प्रणाली पर निर्भर करता है। कार्मिक प्रबंधन से जुड़े कानून इतने पूराने और दृढ़ है। कि वे विभाग को वर्तमान स्थिति में खुद को ढ़ालने का लचीलापन नहीं देते, परिणाम अक्षमता के रूप में सामने आता है। बजत उपयोगिता से जुड़े वर्तमान नियमों से पैसा अत्यधिक बर्बाद होता है, इससे गुणवत्तापूर्ण उपकरण और सेवाओं के अधिग्रहण में रुकावटें आती हैं और पैसे के मुताबिक काम नहीं हो पाता। बजट और समर्थन नियमों में बदलाव लाने की जरूरत है और विभागों को इतना लचीला बनाये जाने की जरूरत है कि अपनी ज़रूरतों के अनुसार काम कराकर ख़र्च किये गये पैसे की क़ीमत वसूल सकें। दरअसल, सारी प्रणाली अविश्वास पर टिकी है। सरकार को अपने लोक सेवकों मे विश्वास जगाने की ज़रूरत है।

निजीकरण और ठेकेदारी

प्रभावकारिता बढ़ाने और खर्च करने के लिए सरकार को बड़ी संख्या में सेवाओं को निजीकरण और आउटसोर्सिंग की ज़रूरत है, जो वह अभी खुद कर रही है। नगरपालिका द्वारा गलियों की सफाई, कूड़ा इकट्टा करना, सुरक्षा सेवा, बिजली का वितरण, नगर परिवहन आदि का निजीकरण किया जा सकता है। उदारीकरण के दौर में उन राज्यचालित संस्थानों के निजीकरण के अपने आर्थिक तर्क हैं, जो या तो घाटा दे रही हैं या फिर वे उसके आर्थिक क्षेत्राधिकार में हैं, जैसे होटल, पर्यटन, अभियांत्रिकी और कपड़ा क्षेत्र, जिनमें वह निजी क्षेत्र की चुनौतियों से पिछड़ती जा रही है और जो राष्ट्रीय संसाधनों का घाटा पहुंचा रही हैं। आर्थिक संसाधनों के अन्य क्षेत्र जैसे एयरलाइंस और टेलीकॉम को भी निजी क्षेत्र को सौंपे जाने के न्यायोचित तर्क़ हैं, क्योंकि सरकार के पास लोगों की ज़रूरतों के मुताबिक इन क्षेत्रों में सरकार के पास संसाधनों का घोर अभाव है। अनुभवों के आधार पर ऐसा देखा गया है कि लोक सेवाओं के क्रियान्वयन के क्षेत्र जहां लोक और निजी क्षेत्रों में स्व की प्रतिस्पर्द्धा है, वहां मुनाफ़े और गुणवत्ता में ज्यादा अच्छा प्रभाव देखने को मिला है।

लोक सेवकों पर विश्वास-प्रदर्शन आधारित संगठन

वर्तमान में सरकार का कामकाज अति केंद्रित है और तमाम शक्तियां मंत्रालयों और विभागीय प्रमुखों के पास निहित हैं। इस स्थिति में आमूल-चूल बदलाव की ज़रूरत है और इस क्षेत्र में काम कर रहे लोगों को वास्तविक निर्णयों की स्वतंत्रता दिये जाने की ज़रूरत है। उनके प्रति विश्वास बनाये रखने की ज़रूरत है और परिणाम प्राप्त करने के लिए उनकी क्षमताओं पर भरोसा करने की ज़रूरत है।

विकसित देशों जैसे ब्रिटेन, न्यूजीलैंड, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, सिंगापुर, जापान और अमरीका ने अपनी नौकरशाही में व्यापक बदलाव किये हैं और व्यावसायिक प्रबंधन से जुड़ी सरकारी गतिविधियों का एक बड़ा हिस्सा किसी एजेंसी या प्रदर्शन आधारित संगठनों को दे दिया है। ब्रिटेन में, जहां लोक सेवाओं में सबसे पहले सुधार लागू किया गया, एजेंसी का मुख्य कार्यकारी का चुनाव लोक और निजी क्षेत्रों में से प्रतिस्पर्द्धा के आधार पर होता है और उन्हें संविदा पर रखा जाता है। हर एजेंसी अपने पितृ संगठन के साथ प्रदर्शन से जुड़ा समझौता करती है, जिसमें वित्तीय प्रदर्शनों से संबंधित लक्ष्य, दक्षता और सेवा की गुणवत्ता पहले से स्पष्ट होती है। कार्यकारी एजेंसियों के गठन से ब्रिटिश लोक सेवाओं की गुणवत्ता और प्रभावकारिता के सकारात्मक परिणाम देखने को मिले हैं। हाउस ऑफ कामंस की ट्रेजरी एंड सिविल सर्विस कमिटी ने यह पाया कि कार्यकारी एजेंसियों से सरकारी कार्यों का पूरी तरह से रूपांतरण हो गया और इसे हाल के दशक का एकमात्र सबसे सफल सुधार कार्यक्रमों में शुमार किया। भारत को दूसरे देशों से यह सबक सीखना चाहिए। यह सरकारी मशीनरी को सक्षम, आर्थिक रूप से मजबूत और नागरिकों की जरूरतों के प्रति संवेदनशील बनाने के साथ-साथ उसे व्यावसायिक और प्रदर्शन आधारित प्रबंधन में बदलने में कारगर होगा।

चुनौतियां

लोक सेवा में सुधार सरकार के सामने बड़ी चुनौती है। सबसे बड़ी चुनौती नौकरशाही की तरफ से है, जिसके निहित स्वार्थ इसे प्रदर्शन आधारित और जवाबदेह बनाने से रोकते हैं। अक्षम, भ्रष्ट और निरपेक्ष लोक सेवा भ्रष्ट राजनीतिज्ञों को सत्ता में बने रहने मे मदद करती है, क्योंकि इससे उन्हें अपना हित साधने में मदद मिलती है। नोबेल पुरस्कार विजेता समाज वैज्ञानिक गुर्नार मिर्डाल ने भारत के बारे में वर्णित करते हुए कहा था कि वह सॉफ्ट स्टेट है और यहां के नेता कठिन और असहज निर्णय नहीं लेना चाहते। अर्थपूर्ण सुधारों के लिए उच्च स्तर पर राजनीतिक इच्छाशक्ति का होना जरूरी है। यह उचित समय है कि सरकार यह महसूस करे कि लोक सेवाओं में सुधार गरीबी उन्मूलन, अशिक्षा उन्मूलन, कुपोषण और वंचना को खत्म करने के लिए जरूरी है और वह भारत को एक खुशहाल, संपन्न और लोगों के रहने के लिए समृद्ध जगह बनाने में मदद करें। ❑

(लेखक पूर्व उप नियंत्रक और महालेखकार, भारत सरकार में अतिरिक्त सचिव और राष्ट्रीय वित्त प्रबंधन संस्थान के निदेशक रहें हैं। उन्होंने कई पुस्तकें लिखी हैं, जिनमें आने वाली पुस्तक गवर्नेंस रिफॉर्म्स फॉर विजन इंडिया एंड एथिक्स इन गवर्नेंस शामिल है। ई-मेल : drbpmathur@gmail.com **)**

भारत में सुशासन हेतु प्रयास

आर. बी. जैन

वर्ष 1947 में औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्रता और 1950 में गणतांत्रिक संविधान के लागू होने के बाद से ही भारत देशवासियों की अपेक्षाओं और आकांक्षाओं को पूरा करने तथा नई परिस्थितियों के अनुकूल सुशासन के लिए प्रशासनिक संरचना को सुधारने के प्रयास में गंभीरता से प्रयास करता रहा है। औपनिवेशिक शासन के दौरान भी यदा-कदा प्रशासनिक सुधार के उपाय किए गए थे, परंतु ये सब औपनिवेशिक शासन को सुदृढ़ता प्रदान करने के इरादे से किये गए थे। गोरवाला समिति रिपोर्ट (1950) से लेकर 1953 और 1957 में आई एपेल्बी रिपोर्ट और 1964 में गठित उच्चाधिकार प्राप्त प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग के गठन तक सरकार सुशासन के दुर्लभ लक्ष्य के लिये लगातार प्रयास करती रही है। इन समितियों और आयोग की रिपोर्टों में प्रशासन और प्रशासनिक व्यवस्था प्रक्रिया में सुधार के अनेक सुझाव दिये गए। प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग ने ही 20 रिपोर्टें दी थीं। परंतु विभिन्न कारणवश, विशेषकर राजनीतिक अनिश्चितता के कारण, 1970 और 1980 के दशकों में प्रशासनिक सुधारों को लेकर गतिविधियां कम हीं रही। परंतु बाद में, लोक प्रशासन की नवीन अवधारणा और उससे जुड़े घटनाक्रमों के कारण जनप्रशासन के क्षेत्र में अनेक सैद्धांतिक और व्यावहारिक परिवर्तनों की शुरुआत हुई। तदनन्तर डॉ. एम. वीरप्पा मोइली की मध्यस्थता में द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग का गठन किया गया, जिसकी रिपोर्ट 2005 में आई। इन सभी घटनाक्रमों का प्रभाव आज भी भारत की शासन व्यवस्था में देखने को मिलता है।

नया लोक प्रबंधन (एनवीएम) प्रतिमान एवं शासन

1990 के दशक के प्रत्येक वर्षों में अमरीका और अन्य औद्योगिक रूप से उन्नत देशों में नवीन लोक प्रबंधन (एनवीएम) के नाम से सुपरिचित लोक प्रशासन के प्रति एक नया प्रबंधकीय दृष्टिकोण अपनाया जाने लगा था। लोक प्रशासन के वैश्वीकरण के कारण एनवीएम और उससे जुड़ी सुधारों की अवधारणा विकासशील देशों में भी फैलने लगी थी। कुल मिलाकर एनवीएम का प्रतिमान एक ऐसी जन हितैषी सरकार की ओर इशारा करता है जो पारदर्शी, और जन केंद्रित है तथा जिसके प्रमुख गुण प्रतिबद्धता, उत्तरदायित्व, जवाबदेही और समावेशन हैं।

शासन व्यवस्था में एनवीएम अवधारणा का प्रयोग

इन घटनाक्रमों के प्रभाव में आकर 1990 के दशक के अंतिम वर्षों में भारत सरकार ने प्रशासनिक प्रणाली के पुनर्गठन और पुनरानुकूलन तथा लोक प्रशासन के प्रति सु-प्रबंधन का मानक प्रादर्श अपनाने की आवश्यकता का अनुभव किया। इसमें अग्रलिखित बातों को सम्मिलित किया जाना था:

- निर्णय लेने की प्रक्रिया को अधिक परिणामोन्मुखी (दक्षता, प्रभाविकता और सेवा की गुणवत्ता) बनाना।
- सरकारी कार्यालयों और संस्थाओं में कामकाज के परिवेश में सुधार लाना ताकि उनमें पारदर्शिता, जवाबदेही, संवेदनशीलता, सहभागिता और जन-हितैषी प्रबंधन के सिद्धान्तों को समेटे नयी कार्यसंस्कृति और परिवर्तित प्रशासकीय व्यवहार परिलक्षित हो।
- नौकरशाही को बदले हुए वातावरण एवं परिवेश के अनुसार अपनी कार्यशैली, व्यवहार और मानसिकता में सुधारात्मक परिवर्तन लाना। यथास्थिति के रक्षक के स्थान पर नौकरशाही को यह महसूस करना होगा कि वैश्वीकरण, उदारीकरण और निजीकरण के अभ्युदय के बाद उसे परिवर्तन के उत्प्रेरक के रूप में प्रमुख भूमिका निभानी है। पारम्परिक मूल्यों और कार्यसंस्कृति के तौर-तरीकों में परिवर्तन लाने के अलावा उसे नयी चुनौतियों को स्वीकार करने की इच्छा दिखानी होगी। नौकरशाही को नवीन तकनीकी आविष्कारों और प्रतिस्पर्धा, समानता, समतावाद और व्यापक सामूहिक सामाजिक लक्ष्यों के मूल्यों को भी अपनाने की इच्छा प्रदर्शित करनी होगी।

सुशासन और प्रशासनिक विकास में भारत का अनुभवः 21वीं सदी की दहलीज पर

शासकीय प्रणाली की विफलताओं के लिये उसके ढांचे को दोष देना उचित नहीं होगा। पिछले 65 वर्षों से भी अधिक समय में शासकीय और प्रशासकीय प्रणाली में आई छीजन के बाद भी भारत की (शासन) व्यवस्था, कुल मिलाकर न केवल अभी तक बदस्तूर कायम है, बल्कि उसने समय के प्रहारों को सराहनीय ढंग से सहा भी है। अन्य विकासशील देशों की शासन प्रणालियां इन्ही तरह की परिस्थितियों में पूर्णतया ध्वस्त होती दिखाई देती हैं।

इन वर्षों में शासन व्यवस्था का अस्तित्व बना अवश्य रहा है, परंतु समय के साथ-साथ

उसमे कुछ गंभीर विकृतियां भी उभर आई है। यह विकृतियां वुडरो विल्सन की इस उक्ति को चरितार्थ करती है कि ''संविधान के अनुसार काम करने की तुलना में उसको तैयार करना अधिक सरल है।'' इन सब भटकाव के लिए सबसे प्रमुख और बुनियादी कारण देश में राजनीतिक और प्रशासकीय अभिजात्य वर्ग द्वारा दोहरे मानदंडों (मूल्यों) का अपनाया जाना है। पते की बात यह है कि व्यवस्था को क्रियान्वित करने का प्राथमिक दायित्व इन्ही लोगों पर है।

दूसरे, भारत में संवैधानिक अधिकारों और प्रशासकीय विशेषाधिकारों के बारे में समाज के सभी वर्गों में जोश तो बढ़ रहा है, परंतु उनके अधिकारों के साथ जुड़े कर्तव्यों की ओर समुचित ध्यान नहीं दिया जा रहा है। गणतंत्र बनने के बाद के पहले दो दशकों में भारत के लोगों में सहनशीलता की जो स्तर थी, और जो उनके सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक व्यवहार की विशेषता थीं, वह अब सत्ता के संघर्ष की भूल भुल्लैया में कहीं खो-सी गई है।

तीसरे, निर्वाचित जन प्रतिनिधियों और प्रशासनिक अधिकारियों में त्वरित कार्रवाई, जवाबदेही और सहानुभूति की भावना के सर्वथा अभाव ने उत्तरदायी सरकार की धारणा को ही खोखला कर दिया है। राजनीतिक वाद-विवाद और शब्दावार तो बहुत है, परंतु नागरिकों की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को पूरा करने पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। भव्य और आडंबरपूर्ण नीतियों, योजनाओं, कार्यक्रमों और परियोजनाओं के बारे में बड़ी-बड़ी घोषणाएं अनेक बार की गई है, परंतु उनको कार्यान्वित करने के बारे में कोई योजना अथवा इच्छा नहीं दिखायी देती। परिणाम यह हुआ है कि या तो व्यवस्था में ठहराव आ गया है अथवा विकास और प्रगति की गति अत्यंत मंद हो गई है, और तुर्रा यह है कि भारत में नौकरशाही नागरिकों की शिकायतों और समस्याओं से निपटने में बहुत ढिलाई और सुस्ती बरतती रही है, जिसे एक प्रकार से अमानवीय ही कहा जाएगा। इससे भी बुरी बात यह है कि भारत की नौकरशाही की छवि विश्व में सबसे भ्रष्ट नौकरशाही के रूप में उभर रही है।

चौथी बात, भारत में निर्धन अब भी निर्धन बने हुए हैं और उनकी कुल संख्या में वृद्धि हीं हुई है। आर्थिक उपलब्धियों को जनसंख्या विस्फोट ने सफाचट कर दिया है। यद्यपि भारत का मध्य वर्ग आर्थिक रूप से शक्तिसंपन्न है, देश का सॉफ्टवेयर उद्योग अत्यन्त गतिशील और जीवंत है, तथा देश परमाणु क्षमता से संपन्न है, फिर भी भारत के बहुतेरे लोग अभी भी घोर गरीबी में रह रहे हैं। सरकार की कार्यक्षमता अभी भी दयनीय है, सार्वजनिक निवेश और विकास के लिये उपलब्ध संसाधन अभी भी बहुत कम हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, कल्याण, बुनियादी ढांचा और आम लोगों के लिये पीने के साफ पानी की सबसे बड़ी आवश्यकता अभी भी पूरी नहीं हो सकी है। गरीबों में अनेक लोग ऐसे हैं जो दरअसल, पहले से भी गई-गुजरी अवस्था में जी रहे हैं। कोई आश्चर्य नहीं है कि यूएनडीपी (संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम) द्वारा प्रतिवर्ष प्रकाशित मानव विकास रिपोर्ट में भारत का स्थान काफी नीचे पाया जाता है।

सुशासन हेतु आवश्यक रणनीतियां

इन घटनाक्रमों के परिप्रेक्ष्य में, भारत में जो मूलभूत प्रश्न उठता है, वह है ऐसी रणनीतियां तैयार करना, जो न केवल भारत के लिये अनुकूल हों, वरन जो संपोषणीय विकास को गति देने में भी सहायक हो। अच्छे प्रशासन के लिये जरूरी संस्थागत और ढांचागत नवाचारों के साथ-साथ भ्रष्टाचार मुक्त सतत विकास के लिये एक नैतिक निश्चय की भी आवश्यकता है। प्रशासन के इस नैतिक दृढ़ निश्चय से ही प्रशासकों के लिये एक सार्थक दिशा तय होगी। यदि उन्हें समाज की सेवा वास्तव में करनी है तो उन्हे अपने सारे प्रयासों को समाज के व्यापक हित की ओर मोड़ना होगा। इसके लिए व्यक्ति में नैतिक दायित्व और जवाबदेही की आवश्यकता होगी। समाज की व्यापक भलाई के लिये त्याग, दयालुता, न्याय और ईमानदार प्रयासों की आवश्यकता होगी। अंततः यह नैतिक दृढ़ निश्चय ही है, जो भ्रष्टाचार मुक्त अविरत विकास की ओर ले जाने वाली प्रशासनिक तंत्र के आधार का काम करता है।

सुशासन के मानक प्रादर्श को अपनाना

इस समय की जो आवश्यकता प्रतीत होती है वह है उत्तम प्रबंधन को एक ऐसे मानक प्रादर्श को अपनाना, जिसमें नैतिकता के साथ-साथ सुशासन के राजनीतिक और प्रशासनिक आयाम भी समाहित हों। इसमें निम्नलिखित सम्मिलित होने चाहिए :

- निर्णय लेने की प्रक्रिया में अधिक रणनीतिक अथवा परिणामोंमुखी (दक्षता, प्रभावविकता एवं सेवा गुणवत्ता) अनुकुलन;
- अत्यधिक केन्द्रीकृत सांगठनिक ढांचे के स्थान पर नवीन ग्रामीण, शहरी और नगरपालिका संस्थानों को साथ लेकर विकेन्द्रीकृत प्रबंधन परिवेश को अपनाना, जहां संसाधन आवंटन और सेवा प्रदाय के बारे में निर्णय प्रदायगी के निकट आने पर लिया जाएगा;
- जनता को सीधे रसद (आवश्यक सामग्री) पहुंचाने के विकल्पों की संभावनाएं तलाशने में लचीलापन जिससे किफायती नीतिगत परिणाम निकल सकते हैं;
- कार्यनिष्पादन में सुधार की कुंजी के तौर पर प्राधिकार और दायित्व के मिलान पर जोर देना, इसमें निष्पादन के अनुबंध की स्पष्ट व्यवस्था शामिल होगी;
- लोक सेवा संगठनों के बीच और उनके भीतर स्पर्धात्मक वातावरण का निर्माण;
- केंद्र की रणनीतिक क्षमताओं को सुदृढ़ बनाना ताकि सरकार बाहरी परिवर्तनों और विविध हितों के प्रति त्वरित लचीलेपन और न्यूनतम लागत पर कार्रवाई हेतु कदम उठा सकें;
- परिणामों और उनकी पूरी लागत पर रिपोर्ट की आवश्यकताओं के माध्यम से अधिक जवाबदेही और पारदर्शिता;
- इन परिवर्तनों के समर्थन और प्रोत्साहन के लिए सेवा कर बजट निर्माण और प्रबंधन प्रणालियां;
- राजनीतिक और प्रशासनिक दोनों स्तरों पर भ्रष्टाचार के उन्मूलन के लिये नवाचार को

अपनाना और समुचित तंत्र का विकास और लोक शिकायत निवारण प्रणाली का सुदृढ़ीकरण;

- नवीन लोक प्रबंधन के दर्शन में निहित उचित कुछ निर्देशों को मानते हुए मौजूदा पुराने नौकरशाही तौर-तरीकों के स्थान पर प्रशासनिक सेवा पद्धति को सुधारना;

- शासकीय संस्थाओं और कार्यालयों में कामकाज के वातावरण में सुधार करना ताकि उनमें नई कार्यसंस्कृति और परिवर्तित प्रशासकीय व्यवहार परिलक्षित हो; इसमें पारदर्शिता, जवाबदेही, तत्काल कदम उठाने की भावना, सहभागिता और जनहितैषी प्रबंधन की भूमिका महत्वपूर्ण होगी।

शासकीय और निजी क्षेत्र की सहक्रिया

इस बात में कोई संदेह नहीं कि वैश्वीकरण की प्रक्रिया के साथ-साथ होने वाले आर्थिक और प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों ने आधुनिक प्रशासनिक पद्धति को गहराई से प्रभावित किया है। विद्वानों का तर्क है कि वैश्वीकृत परिवेशों में प्रशासन की वास्तविक पद्धति को उन शासकीय और निजी इकाइयों की प्रशासनिक क्षमताओं से जोड़ा जा सकता है जो सार्वजनिक हित के प्रदाय में निहित रणनीतिक प्रयासों पर निर्भर होती है। अत: एक निर्णायक प्रश्न महत्वपूर्ण हो जाता है: यह सुनिश्चित करना किस प्रकार संभव है कि निजी प्रशासनिक गतिविधियां व्यापक सामाजिक हितों के प्रति संवेदी रखी जाती है? अतएव जवाबदेही का प्रश्न अच्छे शासन का एक मुद्दा और प्रमुख कारक (घटक) बन जाता है। आजकल एक नया प्रादर्श चर्चा में है, जिसे सार्वजनिक-निजी भागीदारी (पीपीसीबी) कहा जाता है। इस प्रादर्श में सरकारी एजेंसियां निजी क्षेत्र की कंपनियों अथवा संस्थाओं के साथ मिलकर सार्वजनिक हित का काम हाथ में लेती हैं। इसमें निजी क्षेत्र लाभ कमाने की प्रवृत्ति पर ध्यान केंद्रित नहीं करता। यह पद्धति भारत जैसे विकासशील देशों में अधिक अपनायी जा रही है। इस क्षेत्र में सफलता भी मिल रही है यानी यह प्रादर्श काफी सफल माना जा रहा है। इससे विकास प्रक्रिया में तेजी आती है क्योंकि लाभ कमाने की अपेक्षा लक्ष्य की प्राप्ति पर अधिक ध्यान केंद्रित किया जाता है। लाभ के लिये काम नहीं करने वाले ये संगठन सार्वजनिक-निजी हितों की खाई को पाट देते हैं ताकि सुरक्षित और प्रभावी विकास में उद्योग जगत की बढ़ती हिस्सेदारी के मार्ग में बाधक विशिष्ट प्रेरक और वित्तीय बाधाओं को दूर किया जा सके।

सुशासन की प्राथमिक आवश्यकता-उत्तरदायित्व

यदि जवाबदेही की अवधारणा का तात्पर्य उत्तरदायित्व और प्रतिसंवेदी उस सीमा से है जो लोकसेवकों और जनहित के कार्यक्रम चलाने वाले गैर-सरकारी क्षेत्रों द्वारा बरती जाती है तो उनके इस व्यवहार को नापने के लिये बहुआयामी व्यवस्था की आवश्यकता होगी। अनुक्रमानुसार अथवा ऊपर से नीचे के पदानुक्रमानुसार जवाबदेही तय करने की पारंपरिक पद्धति पर विश्वास नहीं किया जा सकता। ये उपाय जवाबदेही संस्कृति का उचित मार्गदर्शन नहीं करते। जैसे-जैसे सेवा प्रदाय प्रणालियां और जटिल रूप धारण करने लगती हैं, अन्य स्तरों पर जवाबदेही की प्रक्रिया में भी त्वरित विकास और अनुकूलन की अपेक्षा बढ़ जाती है। संस्थागत विकास प्रत्येक प्रकरण में पूरा उतरना ही चाहिये। ऊर्ध्वाधर अथवा लंबवत शक्ति को संसदीय समितियों, लोकपाल आदि को और बड़ी एवं सुदृढ़ भूमिका देकर सुधारा जा सकता है। अधिक क्षैतिजिक जवाबदेही के साधन प्रतिस्पर्धात्मक और सहयोगी पद्धति वाली प्रणालियों के लिये अलग-अलग होंगे। जवाबदेही का यह नया क्षेत्र विकसित होने में कुछ समय लगेगा। अभी इसके उपाय, नियम-कायदे और मानक भलीभांति विकसित नहीं हो सके है।

आईटी (सूचना प्रौद्योगिकी) को अपनाना और ई-गवर्नेंस की अवधारणा

सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आई क्रांति से सुशासन के लिये उसके प्रयोग पर ध्यान बढ़ा है। आज पूरे विश्व में ई-गवर्नेंस की चर्चा हो रही है। ई-गवर्नेंस सरकार और जनता के बीच सूचनाओं के आदान-प्रदान का सबसे सुचारू माध्यम है। सीमित कार्यक्रमों (एप्लीकेशंस) के बावजूद दिन-प्रतिदिन के जीवन को प्रभावित करने में यह पर्याप्त सक्षम है। जनता का सरकार के साथ जो सबका पड़ता है, मोटे तौर पर उनमें से चार उद्देश्यों को इसके जरिये पूरा किया जा सकता है: (i) बिल, कर, उपयोग शुल्क आदि का भुगतान; (ii) पंजीकरण की औपचारिकताएं, चाहे वह बच्चे के जन्म से संबंधित हों या मकान खरीदने, या फिर ड्राइविंग लाइसेंस प्राप्त करने से संबंधित हो तमिलनाडु में 72 प्रार्थना पत्र डाउनलोड किये जा सकते हैं (iii) सूचना अथवा जानकारी प्राप्त करने और (iv) शिकायत दर्ज कराने के लिये। ई-गवर्नेंस से दूरियां मिट जाती हैं, दूरस्थ गांव सरकारी कार्यालयों से जुड़ जाते हैं और सरकार तथा जनता के बीच संवाद आसान हो जाता है। इससे कर्मचारियों की संख्या कम की जा सकती है, लागत घटाई जा सकती है, सरकारी व्यवस्था में लीकेज (छीजन या गड़बड़ियों) को रोका जा सकता है। सरकारी दफ्तरों में लोगों की लगने वाली लंबी-लंबी कतारों से छुटकारा मिल सकता है और सरकारी लिपिकों के अत्याचार से बचा जा सकता है। परंतु यहां यह याद रखना होगा कि ई-गवर्नेंस, सुशासन का केवल एक साधन (औजार) मात्र है। यहां संवेदनशील एवं जवाबदेह अधिकारियों से स्वतंत्र होकर सफल नहीं हो सकता। अन्यथा यह नौकरशाह का एक खेल बनकर रह जाएगा। देश की बहुसंख्यक जनता के अशिक्षित होने के कारण इस नये आधार पर सुशासन की प्रणाली कैसे विकसित की जाए, सरकार और सभी संबंधित लोगों के लिये वास्तविक चुनौती है।

सुशासन का जनोन्मुखी प्रतिमान

कार्पोरेट जगत की प्रधानता वाली सहस्त्राब्दी के इस कालखंड में अंशधारियों के हितों पर आधारित सुशासन की नई अवधारणा को केंद्र में रखा जाता है। अंशधारियों अर्थात जनता के हित के कारण पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और गुण-दोष पर आधारित प्रबंधन जिनकी भावना सर्वोपरि होती है और "दूसरों की चिंताओं" पर निर्भर करती है। नैतिकता और सदाचार इसमें अंतर्निहित होता है। एक नैतिक संगठन और

वह भी सरकारी न केवल कतिपय मूल्यों के साथ लोगों के लिये खड़ा होता है, बल्कि वह संगठन के अंदर एक ऐसी संस्कृति को जन्म देता है, जिससे प्रत्येक सदस्य वफादारी और अपनेपन का अनुभव करता है। नेतागण इस स्थिति में व्यापक स्तर पर संवाद प्रारंभ करने की पहल करते हैं ताकि व्यावहारिक नीतियों में मूल्यों को प्रमुखता दी जाए। इसके लिये गुणवत्ता नियंत्रण, बजट निर्माण और लागत-लाभ विश्लेषण वाली आधुनिक प्रबंधन तकनीक की आवश्यकता होगी। भविष्य में सार्वजनिक अधिकारियों को जनसेवा प्रदायगी के मामले में नतीजे देने का दायित्व उठाना होगा। आधुनिक प्रबंधन और ई-गवर्नेंस, लोक प्रशासन में मूलभूत परिवर्तन लाने के दो मुख्य साधन हैं। लक्ष्य एक ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था का है जो कम खर्चीली हो। ई-गवर्नेंस परियोजनाएं न केवल सरकारी एजेंसियों और अधिकारियों को आधुनिक रूप दे रही है, बल्कि प्रशासकीय प्रक्रियाओं को सामान्य नागरिकों के लिये अधिक पारदर्शी बना रही हैं। इससे कार्मिकों पर और अधिक जवाबदेही की अपेक्षा बढ़ जाती है।

सुशासन हेतु भ्रष्टाचार से लड़ाई

उपर्युक्त विमर्श से स्पष्ट हो जाता है कि अच्छे प्रशासन की अवधारणा भ्रष्टाचार मुक्त प्रशासनिक प्रणाली पर आधारित है। अनवरत विकास के लिये भ्रष्टाचार से लड़ाई के लिये अग्रलिखित बातों की आवश्यता है: (क) भ्रष्ट व्यवहार के लिये अवसरों और प्रोत्साहनों में कमी लाना और सरकारी अधिकारियों में जवाबदेही की भावना को बढ़ावा देना, और (ख) भ्रष्टाचार विरोधी उपायों का प्रभावी कार्यान्वयन। इसका अर्थ है कि उपाय ऐसे हों जो त्वरित जांच और दोषसिद्धि के लिये एक निश्चित समय सीमा में पूरा करने के लिये तार्किक रूप से उपयुक्त हों। भ्रष्टाचार विरोधी उपायों को लागू करने और रणनीतियों को क्रियान्वित करने के लिये सुदृढ़ राजनीतिक संकल्प की आवश्यकता है। सार्वजनिक जीवन से भ्रष्टाचार दूर करने के लिय प्रशासनिक, विधिक और न्यायिक उपायों को लागू करने में नीचे से ऊपर तक लोगों की भागीदारी सबसे महत्वपूर्ण है।

उपर्युक्त मूलभूत स्थितियों के अतिरिक्त इस बात पर गौर करने की आवश्यकता है कि भ्रष्टाचार का मुकाबला करने के लिये: (क) एक राष्ट्रीय समन्वयन निकाय के गठन की आवश्यकता है जो नागरिकों की निगरानी मंडल के गठन के साथ-साथ भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष की रणनीति तैयार करने और इसको लागू करने के लिये उत्तरदायी होगा; (ख) एक उच्चाधिकार प्राप्त स्वतंत्र अभियोजन निकाय की आवश्यकता होंगी तांकि भ्रष्टाचार के सभी सात मामलों की जांच कर मुक़दमा चला सके; (ग) इन मामलों की सुनवाई के लिये विशेष अदालतों का गठन भी जरूरी है ताकि इन मामलों में शामिल लोगों को बिना किसी देरी के उनके वैधानिक अंजाम तक पहुंचाया जा सके; (घ) निर्वाचन कानूनों और आर्थिक नियमों में आमूल परिवर्तन और सुधार की आवश्यकता है जिससे लोगों को भ्रष्ट गतिविधियों में लिप्त होने का लालच ही नहीं रहे; (च) केंद्र और राज्यों में मंत्रालयों की संख्या सीमित करने का कानून बनाना होगा। इससे केवल राजनीतिक लाभ के लिये मंत्रीमंडल का विस्तार करने की लालसा पर रोक लगेगी; और (छ) भ्रष्टाचार निरोधक एजेंसियों को विशेष प्रकार की तकनीकी सहायता प्रदान करनी होगी, इसके लिए उच्च स्तरीय भ्रष्टाचार-विरोधी कार्यशालाएं आयोजित करनी होगी अथवा विदेशों में छुपाकर रखे काले धन का पता लगाने के लिये अंतर्राष्ट्रीय जांच एजेंसियों की सेवाएं लेनी होगी अथवा उनसे परामर्श करना होगा।

कालेधन का पता लगानाः कर प्रणाली में सुधार की आवश्यकता

भारत ने कालेधन अर्थात कर चुकाए बिना धन का पता लगाने के लिये एक नया मिशन शुरू किया है। इसने हाल ही में कालेधन पर एक श्वेतपत्र जारी किया है जिसे 21 मई, 2012 को संसद में रखा गया था। श्वेतपत्र के साथ ही भारत में काले धन के आकार का अनुमान लगाने के लिये एक स्वतंत्र जांच का प्रयास एक साधारणसी शुरुआत है। भारत के नीति निर्माता अब सार्वजनिक रूप से उन कमियों पर आत्म निरीक्षण कर रहें हैं जो काले बाजार (धन) को जन्म देते हैं; उस नियामक व्यवस्था की भी विवेचना हो रही है जो संसाधनों को भूमिगत कर देती है; और निगरानी (पुलिस) के उस अभाव पर भी ध्यान देने की जरूरत है जो समानांतर अर्थव्यवस्था को निर्बाध रूप से बढ़ने का अवसर देती है। श्वेतपत्र में लेखा परीक्षकों के उत्तरदायित्व में वृद्धि की भी चर्चा की गई है। इसके अतिरिक्त भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाज़ उठाने वालों (व्हिसलाब्लोवर्स) के संरक्षण और सामाजिक मूल्यों को सुदृढ़ता प्रदान करने पर भी जोर दिया गया है ताकि काले धन की समस्या से निपटा जा सके।

मुद्रस्फीति और महंगाई पर रोक लगाना

संभवत: इस समय की सबसे बड़ी आवश्यकता बढ़ती हुई मुद्रास्फीति पर रोक लगाना है, जिसके कारण सभी वस्तुओं के मूल्यों में भारी वृद्धि हुई है और लोग वित्तीय दबाव में जी रहे हैं। इसके लिये तदर्थ उपायों के बजाय एक संभावित नीति की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

प्रशासन में सदाचार और ईमानदारी सुनिश्चित करने के लिये सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है भ्रष्टाचार विहीनता, प्रभावी कानून, नियम और सार्वजनिक जीवन के सभी पहलुओं को नियंत्रित वाले नियम और उससे भी महत्वपूर्ण है इन कानूनों और नियमों का प्रभावी एवं निष्पक्ष कार्यान्वयन। एनपीएम आंदोलन ने शासकीय लागत में कमी लाने, सरकारी कर्मचारियों की संख्या में कमी करने और सांगठनिक मूल्यों में परिवर्तन के उद्देश्यों से अदभुत कुछ नैतिक सरोकारों की ओर इंगित किया है। इसमे निजीकरण पर तो बल दिया गया है परंतु इस तथ्य से इनकार नहीं किया गया है कि संगठनकर्ता और आयोजक के तौर पर अंतिम दायित्व तो सरकार का ही है। सरकार पर ही सभी राजनीतिक और प्रशासकीय प्रक्रियाओं के पर्यवेक्षण का दायित्व है। जनता की संतुष्टि के साथ-साथ सरकार को प्रशासन में दक्षता, कुशलता, प्रभाविकता और उतरदायित्व पर भी ध्यान देना होगा।

एनपीएम की अवधारणा से पारदर्शिता और उपभोक्ता उन्मुखीकरण के विचार को प्रोत्साहन मिलता है। लोक सेवाओं की आउटसोर्सिंग अर्थात् सरकारी कार्य को बाहरी एजेंसियों से करवाना और कार्य का अनुबंध करना, जैसे नये नये विचारों को अब महत्व दिया जा रहा है। इससे प्रशासनिक अधिकारियों और सरकार की ओर से जन सेवा प्रदान करने वाली एजेंसियों के कंधों पर लोक सदाचार का एक नया दायित्व आ गया है। हाल के वर्षों में सार्वजनिक सेवाओं में पारदर्शिता और जवाबदेही लाने के उद्देश्य से कई महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं। इनमें प्रमुख हैं- (क) शासकीय विभागों में नागरिक अधिकारों का अनुपालन; (ख) सूचना का अधिकार अधिनियम 2005; और (ग) जमीनी स्तर तक ई-गवर्नेंस की शुरुआत। इसके अतिरिक्त, द्वितीय प्रशासकीय सुधार आयोग 2007 की सिफ़ारिशों पर भी शीघ्र ही अमल होने की आशा है। प्रस्तावित जनसेवा विधेयक, व्हिसेलब्लोइंग विधेयक, और लोकपाल अधिनियम भी हमारे लिये आशा की एक नयी किरण लेकर आए हैं। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि हमें उन बहादुरों की चिंता हैं जो भ्रष्टाचार से लड़ रहे हैं और जो भ्रष्ट अधिकारियों को सबक सिखाने के लिये सुधारात्मक कार्रवाई करने को तत्पर रहते हैं। बड़े से बड़े अधिकारी, जनसेवक अथवा जनप्रतिनिधि, इन सभी को अपना उत्तरदायित्व पूरी ईमानदारी से निभाना होगा। इनमें नैतिक मूल्यों और सदाचार की भावना को बलवती बनाने के लिये जन प्रतिनिधियों, न्यायिक अधिकारियों और स्वयंसेवी सामाजिक संगठनों को मिलकर कदम उठाना होगा। संसदीय लोकतंत्र की जटिल संरचना में दुर्लभ हो रहे बेहतर प्रशासन को सुलभ बनाने के लिये एक नया आदर्श स्थापित करना होगा। भारत की संसद का साठ से भी अधिक वर्षों का शानदार इतिहास रहा है। परंतु आवश्यकता है अब इसे नया जीवन देने की। इसके लिये भारत में इस प्रकार के अधिक और राजनीतिक सुधारों को अपनाने की जरूरत है जो स्वतंत्रता, समानता और न्याय के अपने मौलिक आदर्शों को पुनर्स्थापित करते हों। भारत के निर्वाचन आयोग और इंटरनेशनल फाउंडेशन फॉर एलेक्टोरल सिस्टम्स ने 17 मई, 2012 को एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किये हैं जिसमें विश्वभर में लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं और सुशासन को बढ़ावा देने की वचनवद्धता व्यक्त की गई है। इस समझौते में यह स्वीकार किया गया है कि भारत उभरते हुए लोकतंत्रों के लिये एक अनूठे आदर्श का काम कर सकता है। लोकतांत्रिक मूल्यों तथा चुनावी विशिष्टता के प्रमुख आधार के रूप में भारत विश्व के चुनाव प्रबंधकों के बीच संवाद स्थापित करने में मित्रवत भूमिका निभा सकता है। ❑

(लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय में समाजविज्ञान के पूर्व डीन एवं राजनीतिशास्त्र विभाग के पूर्व प्राध्यापक और विभागाध्यक्ष रह चुके हैं। वह देश-विदेश के प्रमुख विश्वविद्यालयों और संस्थानों में व्याख्यान देने जाते रहे हैं तथा लोकप्रशासन और राजनीति शास्त्र के जाने-माने विद्वान हैं। ई-मेल : rbjain1@yahoo.com **)**

CS GS IAS
अभिनव टीम प्रयास..... सिविल सेवा को समर्पित हिन्दी माध्यम का संस्थान
The Companion IAS
Vijaypal Singh Parihar
Ojaank IAS
Ojaank Sir
Rajdeep Math's Classes
Rajdeep Sir
मंथन IAS
Dr. Shekhar Jha
Vidyalayam
R. P. Singh
Our Courses
G.S. Foundation
G.S. (PT)
G.S. (Mains)
Batch Time → 11AM & 4PM
CSAT
Batch Time
9AM 1PM & 6PM
Test Series (हिन्दी/Eng)
Every Sunday
Time → G.S. 9:30am to 11:30am
CSAT 12:30pm to 2:30pm
Online Test Series is all set to launch from March I st week
website: www.csgsias.com
Thers is only one level of Test Series i.e. Level of UPSC Exams.
हमारे Test Series का केवल एक ही स्तर है- UPSC स्तर का टेस्ट।
Module
G.S.
• General Science + Science Tech
• Economy
• Polity & Governance
• Geography
• History
CSAT
• Math & D.I.
• Reasoning
• English Comprehension
• Decision Making
B-18, IInd Floor, Opposite Aggarwal Sweets, Main Road, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-9
9818041656, 9311602617
YH 269/2013

भारतीय कृषि बाज़ार में सुधार

यू. के. एस. चौहान

वर्तमान में भारत में कृषि-उत्पादों के बाज़ार का बुरा हाल है। एक तरफ किसान अपनी उपज का उचित मूल्य न मिल पाने के कारण बदहाली व ऋण-ग्रस्तता के शिकार होते चले जा रहे हैं, दूसरी तरफ उपभोक्ता समय-समय पर क़ीमतों में आनेवाली उछाल के कारण त्रस्त हैं । ऐसे में दोनों को वैकल्पिक विपणन व्यवस्थाओं तथा आपूर्ति-शृंखलाओं की ज़रूरत है, न कि स्थापित बाज़ार व्यवस्था को नकार देने की

भारतीय संविधान के अनुसार बाज़ार का विषय राज्यों की सूची में आता है और उसके तहत बाज़ार के विनिमयन के लिए राज्य सरकारें ही कानून बना सकती हैं। आज़ादी के पश्चात शुरुआती दशकों में देश में कृषि के बाज़ार को सुव्यवस्थित करने की दिशा में पर्याप्त कदम नहीं उठाए गए। विभिन्न राज्यों के ग्रामीण इलाकों में स्थानीय हाट बाज़ार लगते थे जिनकी व्यवस्था पुराने ज़मींदारों, निजी संस्थाओं आदि के नियंत्रण में रहती थी। शहरों में कृषि उत्पादों के बड़े थोक बाज़ार भी थे जहां गांवों के हाट-बाज़ारों से बिचौलियों द्वारा लाए गए उत्पाद बिका करते थे। 1972-73 में केंद्र सरकार ने कृषि-उपज के बाज़ारों को सुव्यवस्थित करने के उद्देश्य से एक योजना प्रारंभ की जिसके अंतर्गत देश में थोक विनयमित मंडियों की स्थापना पर बल दिया गया। 1977-78 में लघु व सीमांत किसानों की कृषि उपज के विपणन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से केंद्र सरकार द्वारा ग्रामीण प्राथमिक मंडियों की स्थापना की एक योजना भी लागू की गई। तत्पश्चात् 1988-89 में इन दोनों योजनाओं को मिलाकर कृषि उपज मंडियों के विकास की एक संशोधित योजना लागू की गई जिसके अंतर्गत विभिन्न राज्यों में लगभग 3,650 मंडियों की स्थापना की गई। इन सभी मंडियों में कृषि उपज के विपणन के लिए आवश्यक संरचनात्मक सुविधाओं के विकास पर बल दिया गया और केंद्रीय योजना के तहत इन मंडियों में नीलामी के प्लेटफार्म, दुकानें, भंडार-गृह, वाहनों की पार्किंग आदि की सुविधाएं विकसित की गई। इस प्रकार धीरे-धीरे पूरे देश में विनियमित कृषि - उपज मंडियों की एक व्यापक प्रणाली स्थापित हुई। वर्तमान में देश में लगभग 6,680 थोक कृषि - उपज मंडियां तथा 21,600 से अधिक ग्रामीण प्राथमिक मंडियां संचालित हो रही हैं। इन मंडियों के विनिमयन के लिए विभिन्न राज्यों द्वारा कृषि - उपज विपणन विनिमयन संबंधी अधि नियम लागू किए गए और इस प्रकार देश के अधिकांश राज्यों में कृषि-उपज का व्यापार इन राज्य कानूनों के तहत विनिमयन के दायरे में आ गया।

देश में कृषि-उपज मंडियों के विकास का यह सारा कार्य बहुत ही योजनाबद्ध तरीके से नहीं हुआ और अलग-अलग राज्यों ने इन्हें अपने-अपने तरीके से क्रियान्वित किया। इससे पूरे देश में कृषि-विपणन के क्षेत्र में अनेक विषमताएं पैदा हो गईं। कुछ राज्यों जैसे - पंजाब, हरियाणा आदि में मंडियों की उपलब्धता काफी बेहतर है और

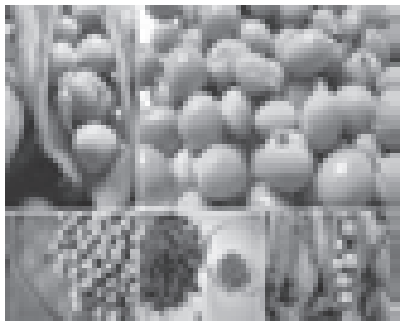

किसानों को अपने उत्पादों की बिक्री के लिए बहुत दूर-दूर तक नहीं जाना पड़ता है। किंतु ऐसे भी राज्य हैं जहां ऐसी विनियमित कृषि-उपज मंडियों की संख्या काफी सीमित है। ऐसे राज्यों के किसान आज भी अपने उत्पादों की बिक्री के लिए स्थानीय हाट-बाजारों अथवा बिचौलियों के ऊपर ही निर्भर रहते हैं। देश की अधिकांश विनियमित थोक कृषि-मंडियों में विपणन की मूलभूत सुविधाओं का नितांत अभाव है। अनेक मंडियों में खुली नीलामी के प्लेटफार्मों के अलावा अन्य कोई भी आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध नहीं है। मंडियों में कृषि-उत्पाद की इलेक्ट्रॉनिक माप-तौल के उपकरण, वाहनों की तौल के लिए वे-ब्रिज तक भी नहीं हैं। किसानों के न बिक पाने वाले माल को अथवा व्यापारियों द्वारा खरीदे गए उत्पादों को सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक भण्डारण की सुविधाएं भी अधिकांश मंडियों में नहीं हैं। शीघ्रक्षयी कृषि उत्पादों जैसे-फलों व सब्जियों के भण्डारण की सुविधा तो बहुत ही सीमित है। ऐसी स्थिति में गल्ले की मंडियों में तो भले ही कुछ हद तक किसानों तथा व्यापारियों को अपनी उपज की साफ-सफाई करने, उसे सुखाने आदि की सुविधाएं मिल जाती हैं, किंतु फलों तथा सब्जियों आदि की ग्रेडिंग तथा उनके रख-रखाव एवं सही ढंग से हैंडलिंग का काम बिल्कुल नहीं हो पाता है। इसी कारण से इन उत्पादों का काफी हिस्सा बिक्री होते-होते ही खराब हो जाता है। सफाई, ग्रेडिंग आदि के अभाव में किसानों को उनका सही

मूल्य भी नहीं मिल पाता। समुचित पैकेजिंग की सुविधाएं न होने के कारण भी फलों तथा सब्जियों का व्यापक नुक़सान होता है। इन उत्पादों को शीतीकृत करके उचित रूप में भंडारित किए जाने की सुविधाएं भी बहुत हीं कम मंडियों में हैं। अत: किसान इन्हें मंडियों में लाकर दिन समाप्त होने के पहले औने-पौने दामों पर बेचने के लिए मजबूर हो जाते हैं, क्योंकि वह अपने उत्पाद को वापिस घर तक ले जाने का जोखिम नहीं उठा सकता और उसका ख़र्च भी वहन नहीं कर सकता।

भारत में कृषि-उपज का विपणन मुख्य रूप से निजी क्षेत्र के व्यापारियों के माध्यम से होता है। एक अनुमान के अनुसार देश में लगभग बीस लाख थोक व्यापारी तथा पचास लाख खुदरा व्यापारी कृषि-उपज के व्यापार में संलग्न हैं। संविधान के अनुसार विपणन राज्य सरकारों का विषय है और तदनुसार कृषि-विपणन राज्यों द्वारा बनाए गए मंडी-कानूनों के तहत संचालित होता है। इन कानूनों के अनुसार राज्यों ने अपने कृषि-क्षेत्रों को भिन्न-भिन्न मंडी क्षेत्रों में बांटा हुआ है, जिनके भीतर विपणन-प्रणाली का विनिमयन संबंधित मंडी-समितियों द्वारा किया जाता है। इस प्रकार देश के अंतर्राज्यीय स्तर पर कारोबार करने वाले थोक व्यापारियों तक को कृषि-उपज की खरीद के लिए केवल सरकार द्वारा नियंत्रित मंडियों पर हीं निर्भर रहना पड़ता है। उन्हें किसान से कोई भी उत्पाद खरीदने के लिए संबंधित क्षेत्र की मंडी-समिति से लाइसेंस लेना पड़ता है। यदि एक थोक व्यापारी को किसी प्रदेश की अनेक मंडियों में या अन्य राज्यों की विभिन्न मंडियों में खरीद करनी हो तो उसे हर मंडी-समिति से अलग-अलग लाइसेंस लेना पड़ता हैं; मंडी-समितियों में स्थानीय व्यापारियों का वर्चस्व होता है, अत: बाहर के व्यापारियों को उनसे लाइसेंस प्राप्त करना आसान नहीं होता। यदि दिल्ली के किसी व्यापारी को नासिक के किसानों से प्याज खरीदना है या नागपुर से संतरा तो उसे इसके लिए स्थानीय लाइसेंसी पर निर्भर होना पड़ता है या फिर आजादपुर मंडी में प्याज लाने वाले किसानों के कमीशन-एजेंट पर। अनेक राज्यों में फलों व सब्जियों की विनियमित मंडियों की संख्या भी काफी सीमित है और उनका कार्यक्षेत्र बहुत ही व्यापक। ऐसी मंडियों तक किसानों के लिए अपने उत्पाद ले जाना ही असंभव है। इस प्रकास मौजूदा व्यवस्था में देश में कृषि-विपणन के सुविधा-विहीन व निहित स्वार्थ वाले छोटे-छोटे साम्राज्य स्थापित हो गए हैं जिनके तहत संचार-माध्यमों एवं गैर-कृषि विपणन-श्रृंखला के व्यापक विस्तार के बावजूद, एक तरफ तो किसान अपनी उपज का बेहतर मूल्य पाने के लिए दूर-दूर तक फैले उपभोग-क्षेत्र के व्यापारियों या खाद्य-प्रसंस्करण उद्यमियों से सीधे जुड़ नहीं पाता और दूसरी तरफ किसानों तक सीधी पहुंच न बन पाने के कारण ऐसे अंतर्राज्यीय थोक-व्यापारी अथवा खाद्य-प्रसंस्करण

देश में जैसे-जैसे बागवानी विकास पर जोर दिया गया और किसानों के बीच फलों और सब्जियों की खेती के बारे में तकनीकी ज्ञान का प्रसार हुआ, वैसे-वैसे देश के अनेक इलाकों में विशेष प्रकार के फलों अथवा सब्जियों की खेती का काफी विस्तार हुआ है। राष्ट्रीय बागवानी मिशन तथा पूर्वोत्तर भारत में बागवानी -विकास की कृषि-मंत्रालय की योजनाओं ने इस दिशा में एक बड़ा योगदान किया है।

उद्यमी शीघ्रक्षयी कृषि-उत्पादों की पूरी आपूर्ति-श्रृंखला को मजबूत बनाने के लिए जरूरी अवस्थापन -सुविधाओं के विकास के लिए आवश्यक पूंजी-निवेश करने के लिए भी आगे नहीं आ सकते।

देश में जैसे-जैसे बागवानी-विकास पर जोर दिया गया और किसानों के बीच फलों और सब्जियों की खेती के बारे में तकनीकी ज्ञान का प्रसार हुआ, वैसे-वैसे देश के अनेक इलाकों में विशेष प्रकार के फलों अथवा सब्जियों की खेती का काफी विस्तार हुआ है। राष्ट्रीय बागवानी मिशन तथा पूर्वोत्तर भारत में बागवानी-विकास की कृषि-मंत्रालय की योजनाओं ने इस दिशा में एक बड़ा योगदान किया है। इससे देश में फलों तथा सब्जियों के मार्केटिंग सरप्लस में अच्छी-खासी वृद्धि हुई है। लेकिन जलवायु व विशेष परिस्थितियों के चलते भारत में अनेक प्रमुख फलों व सब्जियों के उत्पादन-क्षेत्र प्राय: किसी विशेष भू-भाग तथा किसी विशेष मौसम तक ही सीमित हैं। अत: यदि विभिन्न कृषि-उत्पादों की आपूर्ति उनके उत्पादन-क्षेत्रों के बाहर पूरे देश में तथा पूरे साल उचित मूल्य पर होनी है तो देश में इन जिन्सों के संभरण, संरक्षण, भंडारण तथा खुदरा विक्रय-केंद्रों तक आपूर्ति की एक मजबूत श्रृंखला का विकास होना जरूरी है। साथ ही जल्द खराब होने वाले उत्पादों के लिए समुचित शीत-श्रृंखला की स्थापना भी जरूरी है, ताकि फसल-तुड़ाई के वक्त से लेकर धुलाई व पैकेजिंग, परिवहन, भंडारण, वितरण आदि की पूरी अवधि के लिए इन्हें समुचित तापमान पर बिना खराब हुए रखा जा सके। लेकिन उत्पादन तथा मार्केटिंग सरप्लस बढ़ने के साथ-साथ इन जिन्सों की विपणन- श्रृंखला में समुचित परिवर्तन न हो पाने की वजह से ही आज एक तरफ तो किसान को अपनी लागत तक निकाल पाना मुश्किल है और दूसरी तरफ उपभोक्तागण खुदरा-बाज़ार में इन्हें मनमाने दाम पर खरीदने के लिए मजबूर हैं।

आज की परिस्थितियों में जब अन्य क्षेत्रों में बाज़ार बहुत तेजी से विकसित हो रहा है और पिछले दो दशकों में आकार में कई गुना बड़ा हो चुका है, तो ऐसे में कृषि-उत्पादों के विपणन के विनिमयन के ये कानून कृषि-उपज के बाज़ार के विकास में केवल एक बाधा के रूप में ही नज़र आते हैं। इन कानूनों का सीधा प्रभाव यह पड़ा कि कृषि मंडियां एकाधिकारपरक हो गई हैं। अधिकांश मंडियों में किसानों का ध्यान रखने वाले लोगों की कोई भूमिका नहीं है। अनेक राज्यों में मंडी समितियों का निर्धारित समय पर न तो चुनाव होता है और न ही किसानों के प्रतिनिधि मंडियों के प्रबंधन में भागीदार बन पाते हैं। प्राय: ऐसी मंडी समितियां आढ़तियों व व्यापारियों के चंगुल में हीं फंसी रहती हैं और मंडी के प्रबंधक व कर्मचारी उनसे सांठ-गांठ करके किसानों के हितों की सुरक्षा करने से दूर ही रहते हैं। इन परिस्थितियों में किसान अपनी उपज को बेचने के लिए इन्हीं बिचौलियों पर ही आश्रित बना रहता है और न वह अपने माल की खुली नीलामी करा पाता है और न ही व्यापारी वर्ग खुली नीलामी के माध्यम से प्रतिस्पर्धात्मक मूल्य पर उसका माल खरीदने को तैयार होते हैं। वर्तमान बहुस्तरीय बिचौलियों वाली विपणन-व्यवस्था में हर स्तर पर प्राप्त विक्रय मूल्य का कुछ हिस्सा ऐसे बिचौलियों के लाभांश में चला जाता है जिसका सीधा प्रभाव यह होता है कि एक तरफ तो किसान

को अपनी उपज के लिए कम मूल्य पर ही संतोष करना पड़ता है तथा दूसरी तरफ अंतिम उपभोक्ता को भी माल का अधिक दाम चुकाना पड़ता है। किसी भी सक्षम कृषि-विपणन प्रणाली में यह आवश्यक है कि बिचौलियों की संख्या कम से कम हो ताकि किसानों को अपनी उपज का ज्यादा से ज्यादा दाम मिले तथा अंतिम उपभोक्ता को भी माल की क़ीमत कम चुकानी पड़े। विनियमित मंडी प्रणाली की एक बड़ी समस्या यही है कि देश में कृषि-उपज का पूरा बाज़ार टुकड़ों-टुकड़ों में बंटा नजर आता है। जहां अन्य क्षेत्रों में तेज़ी से एक देशव्यापी एवं एकीकृत बाज़ार-व्यवस्था विकसित हो रही है, वहीं मंडी कानूनों के कारण किसान अपनी उपज को राज्यव्यापी अथवा राष्ट्रव्यापी बाज़ारों से नहीं जोड़ पा रहे हैं। उनके लिए यह बाध्यकारी है कि वे अपनी उपज को संबंधित क्षेत्र के विनियमित मंडी यार्ड में हीं बेंचें। किसानों को न तो राज्य या देश के अन्य हिस्सों में स्थित मंडियों में होने वाले माल की आवक अथवा बिक्री मूल्यों की जानकारी मिल पाती है और न ही वह अपने माल को ऊंची परिवहन लागत आदि के चलते बेहतर मूल्य वाली मंडियों तक ले जाने में ही सक्षम पाता है।

कृषि उपज की मंडियों की उपलब्धता में कमी तथा उनमे विद्यमान संरचनात्मक व संचालनात्मक न्यूनताओं को देखते हुए आज इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि किसानों को उनकी उपज के विपणन के अन्य प्रकार के विकल्प शीघ्रता से उपलब्ध कराए जाएं। इसी के साथ मौजूदा कृषि मंडियों में अत्याधुनिक सुविधाओं को स्थापित किए जाने तथा मंडियों की कार्यप्रणाली को पारदर्शी तथा गतिशील बनाए जाने की भी बड़ी आवश्यकता है। निजी क्षेत्र तथा सहकारी क्षेत्र को प्रोत्साहित करके उनके माध्यम से नई मंडियों की स्थापना के लिए व्यापक पूंजी निवेश को बढ़ावा दिया जा सकता है। एक मोटे अनुमान के मुताबिक देश में कृषि-बाज़ार की संरचना के समुचित विकास के लिए लगभग बीस हज़ार करोड़ रुपये से अधिक के पूंजी-निवेश की जरूरत है। यह पूंजी निवेश सरकारी एजेंसियों के साथ-साथ निजी क्षेत्र द्वारा किए जाने से ही पूरा हो सकता है। निजी क्षेत्र की मंडियों से उपज के विपणन में भी गतिशीलता आएगी। निजी पूंजी निवेश को आकर्षित करने के लिए आवश्यक नीतिगत परिवेश तैयार किए जाने की भी जरूरत है। चूंकि देश के अधिकांश किसान छोटे व सीमांत किसान हैं, जिनके पास क्रमशः दो हेक्टेयर अथवा एक हेक्टेयर से भी कम भूमि है और उसमें थोड़ा-थोड़ा उत्पादन ही होता है, अतः अपने मार्केटेबल सरप्लस की इस थोड़ी-थोड़ी मात्रा को बाज़ार में अच्छे दाम पर बेचने की गुंजाइश ऐसे किसानों के पास नहीं होती। पीढ़ी दर पीढ़ी होने वाले ज़मीनों के बंटवारे के कारण किसानों की जोतें और भी छोटी होती जा रही हैं। इसलिए आज यह बहुत जरूरी है कि ऐसे लघु कृषक आपस में संगठित हों तथा कमोडिटी के आधार पर अपने समूह, सहकारी संस्था अथवा उत्पादक कंपनियां बनाएं और उसके माध्यम से अपनी उपज को इकट्ठा करके आधुनिक तरीक़े से बाज़ार में उचित मूल्य पर उसका विपणन करें। इस प्रकार बाज़ार सुधार कार्यक्रम के अंतर्गत किसानों को नीचे से ऊपर तक संगठित करना, उन्हें बाज़ार प्रणाली की जानकारी देना तथा अपने उत्पादों के विपणन के लिए बाज़ार में संगठित रूप से उतरने हेतु तैयार करना ही सरकार का मुख्य ध्येय होना चाहिए। आज भारतीय कृषि क्षेत्र की सबसे चुनौती भी यही है।

कृषि उपज के विपणन को गतिशील बनाने तथा उसके माध्यम से किसानों को अधिक आय दिलाने वाली व्यवस्था को स्थापित करने के उद्देश्य से भारत सरकार के कृषि मंत्रालय ने वर्ष 2003 में एक नया मॉडल मंडी कानून बनाया तथा उसे अपनाए जाने के लिए राज्य सरकारों को प्रेरित किया, ताकि देश में कृषि विपणन क्षेत्र का विस्तार हो सके और किसानों के समक्ष प्रतिस्पर्धात्मक विकल्प उपलब्ध हो सकें।

कृषि उपज के विपणन को गतिशील बनाने तथा उसके माध्यम से किसानों को अधिक आय दिलाने वाली व्यवस्था को स्थापित करने के उद्देश्य से भारत सरकार के कृषि मंत्रालय ने वर्ष 2003 में एक नया मॉडल मंडी कानून बनाया तथा उसे अपनाए जाने के लिए राज्य सरकारों को प्रेरित किया, ताकि देश में कृषि विपणन क्षेत्र का विस्तार हो सके और किसानों के समक्ष प्रतिस्पर्धात्मक विकल्प उपलब्ध हो सकें। इस संशोधित कानून का मुख्य लक्ष्य यही कि किसान अपनी उपज का समुचित मूल्य प्राप्त कर सकें। इस मॉडल कानून के अंतर्गत ऐसे प्रावधान सम्मिलित किए गए, जिनके तहत निजी व सहकारी क्षेत्र में कृषि मंडियों की स्थापना सुगम हो। उसमें बड़ी व्यापार - शृंखलाओं तथा खाद्य-प्रसंस्करण उद्यमियों द्वारा कसानों से उपज की सीधी खरीद किए जाने की व्यवस्था हो। ऐसी सीधी खरीद की दृष्टि से संविदा खेती का काफी महत्व है, अतः मॉडल कानून में संविदा खेती के तहत उपज की बिक्री के लिए जाने वाले अनुबंधों से संबंधित व्यवस्थाएं भी प्रतिपादित की गई। संविदा खेती में लघु व सीमांत किसानों को शोषण का सामना न करना पड़े, इस दृष्टि से मॉडल कानून में इस बात का भी प्रावधान रखा गया कि अनुबंध के अंतर्गत किसानों को कंपनी की तरफ से दी जाने वाली सुविधाएं स्पष्ट रूप से अंकित हों तथा करार पूरा न होने की अवस्था में उसके क्या-क्या परिणाम होंगे, यह भी साफ लिखा हो। यह भी प्रावधान किया गया कि संविदा फेल हो जाने की दशा में किसान को उसके परिणामस्वरूप किसी भी सूरत में अपनी ज़मीन के स्वामित्व अथवा कब्जे से हाथ न धोना पड़े। मॉडल कानूनों में किसानों के स्वयं के बाज़ार स्थापित करने की व्यवस्था भी है, इसी प्रकार विशेष कमोडिटी तथा इलेक्ट्रॉनिक व्यापार के प्रोत्साहन देने की व्यवस्था भी है। निजी क्षेत्र की बड़ी इकाइयां अनेक अधिसूचित क्षेत्रों में अथवा पूरे राज्य में एक साथ सीधी खरीद अथवा संविदा खेती के लिए सामने आना चाहेगी, इसके लिए उन्हें मंडी समिति के स्तर के बजाय राज्य स्तर पर पंजीकरण, लाइसेंस तथा फीस इत्यादि जमा करने की व्यवस्था रखी गई । मंडी के प्रबंधन तथा विस्तार कार्यक्रमों आदि में निजी क्षेत्रों की भागीदारी को बढ़ाने तथा मार्केटिंग विभाग के तहत राज्य स्तरीय ग्रेडिंग स्टैण्डर्डस ब्यूरो व प्रशिक्षण व विस्तार केंद्र जैसी संस्थाएं स्थापित किए जाने का भी प्रावधान रखा गया। इन सब सुधारों के लागू होने पर एक ऐसा नीतिगत वातावरण सृजित हो सकता है, जिसके तहत निजी क्षेत्र के प्रसंस्करण उद्यमी, आपूर्ति शृंखला के स्वामी तथा निर्यात करने वाले व्यापारी कृषि विपणन के क्षेत्र में आवश्यक अवस्थापना सुविधाओं के विकास के लिए व्यापाक पूंजी-निवेश करने में प्रवृत्त होंगे तथा देश में

जरूरी शीतगृह- शृंखलाओं की स्थापना के साथ-साथ वे सीधी खरीद की व्यवस्था के अंतर्गत किसानों को तकनीकी व बाज़ारोन्मुखी खेती के लिए प्रेरित करके कृषि के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन लाने का मार्ग प्रशस्त करेगें।

दुर्भाग्य की बात है कि कृषि उपज के बाज़ार के सुधार से जुड़े इस महत्वपूर्ण मॉडल कानून को राज्य सरकारों ने ज्यादा महत्व नहीं दिया और जिन्होंने अपने कानूनों में कुछ संशोधन किए भी वे केवल दिखावे के लिए और निष्प्रभावी ढंग से किए। भारत सरकार द्वारा उपलब्ध कराए गए मॉडल कानून के आधार पर अभी तक देश के 16 राज्यों के मंडी कानूनों में ही संशोधन किए गए हैं। ये राज्य हैं - आन्ध्र प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, असम, मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, सिक्किम, नगालैंड, राजस्थान, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक व त्रिपुरा। बिहार सरकार द्वारा बिना किसी वैकल्पिक व्यवस्था की स्थापना किए ही एक सितंबर, 2006 से राज्य के मंडी अधिनियम को ही निरस्त कर दिया जिससे वहां के किसानों के लिए एक अलग तरह की समस्या पैदा हो गई। केरल, मणिपुर, अंडमान व निकोबार द्वीप समूह, दादर व नागर हवेली, दमन व दीव तथा लक्षद्वीप में मंडी कानून पहले से ही नहीं लागू हैं। अधिकांश राज्यों ने इन संशोधनों के तहत संविदा खेती, कृषि उपज की कंपनियों व उपभोक्ताओं द्वारा सीधी खरीद तथा निजी क्षेत्र में वैकल्पिक कृषि बाज़ारों की स्थापना के प्रावधान किए हैं। अधिकांश राज्यों में इन संशोधनों के अनुरूप नियमावलियां जारी किए जाने में भी काफी विलंब किया, इसलिए केंद्र सरकार ने इस काम को गति प्रदान करने के लिए वर्ष 2007 में एक मॉडल नियमावली भी तैयार करके राज्यों को उपलब्ध कराई। प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह की अध्यक्षता में 29 मई, 2007 को संपन्न हुई राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में लिए गए संकल्प में यह लक्ष्य रखा गया था कि सभी राज्य मार्च, 2008 तक अपने-अपने कृषि उपज विपणन कानूनों में आवश्यक संशोधन करके उनके अंतर्गत नियमावलियों को अधिसूचित कर देंगे ताकि बाज़ार सुधार कार्यक्रमों को लागू करने का काम पूरा हो सके। किंतू छह वर्ष बीत जाने के बावजूद यह काम आज भी अधूरा है।

जहां पारंपरिक रूप से किसान आस-पास की ग्रामीण मंडियों अथवा थोक मंडियों में ही अपना माल ले जाकर उपभोक्ताओं अथवा व्यापारियों को बेचने के लिए मजबूर थे, वहीं इन बाज़ार-सुधार कार्यक्रमों के फलस्वरूप किसानों को अपनी उपज की बिक्री के लिए नए-नए विकल्प उपलब्ध होने लगे हैं। आपूर्ति शृंखला व खुदरा बाज़ार की शृंखलाओं के संचालक आज किसानों के खेत से ही खाद्यान्न व ताजे फल व सब्जियों जैसे कृषि - उत्पादों को खरीदने के लिए तत्पर हैं। उनके द्वारा इस हेतु संग्रहण केंद्र आदि स्थापित करने के लिए भी प्रयत्न किए जा रहे हैं। संविदा खेती का अनेक फसलों के क्षेत्र में विस्तार हो रहा है तथा अनेक कंपनियां आकर्षक पैकेजों के साथ

जहां पारंपरिक रूप से किसान आस-पास की ग्रामीण मंडियों अथवा थोक मंडियों में ही अपना माल ले जाकर उपभोक्ताओं अथवा व्यापारियों को बेचने के लिए मजबूर थे, वहीं इन बाज़ार-सुधार कार्यक्रमों के फलस्वरूप किसानों को अपनी उपज की बिक्री के लिए नए-नए विकल्प उपलब्ध होने लगे हैं।

किसानों के समूहों अथवा सहकारी संस्थाओं के साथ अनुबंध कर रही हैं। ऐसी एजेंसियां किसानों को तकनीकी जानकारी व खेती के लिए आवश्यक बीज, रसायन व अन्य चीजें भी उपलब्ध करा रही हैं। अनेक राज्य किसान-बाज़ारों अथवा उपभोक्ता बाज़ारों की स्थापना की दिशा में भी महत्वपूर्ण कदम उठा रहे हैं। केरल, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, ओडिसा, पंजाब आदि के किसान बाज़ार किसानों को उपज का अच्छा मूल्य दिलाने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। सीधी खरीद के विकल्प के अंतर्गत किसानों को अपनी उपज का 15 से 20 प्रतिशत तक अधिक मूल्य प्राप्त हो रहा है। हिमाचल प्रदेश व पंजाब जैसे राज्यों में कंपनियों द्वारा स्थापित खरीद-केंद्रों के माध्यम से फल व सब्जियों की आपूर्ति का एक नया सिलसिला विकसित हुआ है, जो समेकित शीत-शृंखला से संपन्न है जिससे ताजे उत्पादों का फसल - बाद का नुक़सान बहुत कम होता है। किसानों को बाज़ार से जुड़ी जानकारी उपलब्ध कराने की दृष्टि से निजी क्षेत्र की अनेक कंपनियां विभिन्न नामों से ऐसे केंद्रों की स्थापना कर रही हैं जो किसानों को बाज़ार का ज्ञान देने के साथ-साथ उन्हें बाज़ारोन्मुख खेती की आवश्यक सहायता व सेवाएं भी देती हैं और किसानों के माल की सीधी खरीद भी करती हैं। इनमें आईटीसी की 'ई-चौपाल', महिद्रा के 'महिन्द्रा शुभ लाभ', 'हरियाली किसान बाजार' जैसे नाम प्रमुख हैं। 'टाटा किसान संसार' तथा 'कारगिल फार्म गेट बिजनेस सेंटर' भी अहम भूमिका निभा रहे हैं। केंद्र सरकार द्वारा टर्मिनल मार्केट, एग्री मार्ट जैसे नए प्रकार के कृषि बाज़ारों की स्थापना की पहल भी की जा रही है तथा कृषि बाज़ारों के आधुनिकीकरण एवं सुदृढ़ीकरण के लिए बाज़ार-सुधार कार्यक्रम लागू कर चुके राज्यों को आर्थिक सहायता प्रदान किए जाने की एक नई केंद्रीय अनुदान योजना भी लागू की गई है। इस योजना के तहत कृषि-बाज़ार से जुड़ी अवस्थापना सुविधाएं विकसित करने वाले निजी पूंजी निवेशकों को ऋण-संबद्ध अनुदान दिए जाने की व्यवस्था भी की गई है।

कृषि विपणन के क्षेत्र में लागू किए जाने वाले सुधारों को तेजी से अमली जामा पहनाने के उद्देश्य से देश में वैट के कानून को लागू किए जाने के लिए व्यवस्था की तर्ज़ पर भारत सरकार ने राज्यों के कृषि विपणन के प्रभारी मंत्रियों की एक प्राधिकार समिति का गठन भी किया है। इस समिति की अध्यक्षता महाराष्ट्र के कृषि विपणन के प्रभारी मंत्री कर रहे हैं। इस समिति ने विभिन्न राज्यों के मंत्रियों, मंडी बोर्डों तथा शासकीय विभागों के प्रतिनिधियों एवं कृषि-विपणन से जुड़ी निजी क्षेत्र की संस्थाओं के साथ कई दौर में विचार-विमर्श किया और इस सबके उपरांत एक कार्ययोजना को स्वरूप दिया है, जिसके तहत देश में कृषि-उपज की मंडियों की व्यवस्था को सुधारने तथा किसानों को उनकी उपज का बेहतर मूल्य दिलाने के लिए निम्न संस्तुतियां की गई हैं :

सभी राज्यों द्वारा शीघ्रातिशीघ्र अपने कृषि उपज के बाज़ार में सुधार लाने के लिए अपने मंडी अधिनियम तथा उसकी नियमावली में केन्द्र सरकार द्वारा प्रस्तावित मॉडल अधिनियम तथा मॉडल नियमावली के अनुरूप आवश्यक संशोधन लागू करने चाहिए।

किसानों को उनकी उपज का बेहतर मूल्य मिल सके इसके लिए उन्हें संगठित करने का प्रयास करते हुए उनके स्वयं सहायता समूहों तथा उत्पादक कंपनियों आदि के गठन को बढ़ावा देना चाहिए।

मंडियों में व्यापारियों तथा आढ़तियों को लाइसेंस दिलाने की व्यवस्था को उदार बनाया जाना चाहिए ताकि नए व्यापारी व खरीददार आसानी से इस क्षेत्र में उतर सकें और बाज़ार में प्रतिस्पर्धा बढ़े। इसी के साथ ही व्यापारियों व उद्यमियों को उनकी आवश्यकतानुसार एक से अधिक मंडियों अथवा पूरे प्रदेश में प्रभावी होने वाले लाइसेंस दिए जाने की व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि उन्हें प्रत्येक मंडी समिति में अलग-अलग आवेदन करते हुए भटकना न पड़े।

विपणन-केंद्रों से विहीन क्षेत्रों में नई विनियमित मंडियों की स्थापना के अलावा राज्य सरकारों को विभिन्न मंडी क्षेत्रों में छूट प्रदान करते हुए निजी मंडियों की स्थापना को बढ़ावा देना चाहिए तथा शहरी क्षेत्रों में किसानों द्वारा सीधे अपना उत्पाद लाकर उपभोक्ताओं को बिक्री करने के अवसर प्रदान करने के लिए कृषक- बाज़ार स्थापित करने चाहिए।

मंडियों में प्रबंधन की व्यवस्था सुधारी जाए तथा प्रोफेशनल संचालकों को प्रबंधन की जिम्मेदारी दी जाए।

किसान बाज़ारोन्मुख खेती में रुचि लें तथा उन्हें ऐसी उपज का उचित मूल्य मिले इसके लिए ठेका खेती को बढ़ावा दिया जाए तथा यह व्यव्था भी की जाए कि इस पद्धति के तहत किसानों का शोषन न हो।

संगठित खुदरा क्षेत्र की कंपनियों एवं कृषि - प्रसंस्करण से जुड़ी औद्योगिक इकाइयों तथा किसानों के बीच सीधी आपूर्ति श्रृंखला को प्रोत्साहन दिया जाए तथा इसके लिए ऐसे खरीदारों को मंडी के नियंत्रणों से छूट दी जाए और फल तथा सब्जियों जैसे उत्पादों को इस हेतु मंडी शुल्क से मुक्त भी किया जाए। यदि राज्य सरकारों को इससे राजस्व की हानि हो तो केन्द्र सरकार उसकी भरपाई की व्यवस्था भी करे।

राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के अंतर्गत अनिवार्य रूप से 10 से 15 प्रतिशत तक की धनराशि विपणन के लिए आवश्यक सुविधाओं के विकास पर व्यय की जाए और कृषि - उपज मंडियों के भीतर तथा बाहर कृषि - विपणन से जुड़ी सुविधाओं के विकास के लिए निजी पूंजी निवेश को बढ़ावा दिया जाए।

किसी भी दशा में मंडी शुल्क तथा अन्य प्रकार के शुल्क कुल मिलाकर 2 प्रतिशत की अधिक दर से न लिए जाएं तथा आढ़तिया कमीशन भी किसी भी जिन्स पर 4 प्रतिशत से अधिक न लिया जाए।

कृषि उत्पादों के मुक्त परिवहन के लिए उनके रास्तों से चैकिंग के लिए लगाए गए गेट/बैरियर समाप्त किए जाएं।

कृषि उपज के अंतर्राज्यीय व्यापार व वाणिज्य के विनियमन के संबंध में कृषि मंत्रालय द्वारा विचाराधीन केन्द्रीय कानून के विधेयक पर शीघ्र विचार किया जाए तथा उसे प्राथमिकता के आधार पर फल तथा सब्जियों जैसी जिंसों के विपणन को सुधारने के लिए लागू किया जाए।

केंद्र सरकार ने देश में खुदरा व्यापार के क्षेत्र में अवस्थापना-सुविधाओं की कमी तथा लंबी व विखंडित आपूर्ति- श्रृंखला के कारण होने वाले कृषि-उत्पादों के अपक्षय तथा बिचौलिये व्यापारियों की बहुस्तरीय व्यवस्था के कारण विभिन्न वस्तुओं के उत्पादकों, विशेष रूप से किसानों तथा उपभोक्ताओं को होने वाले आर्थिक नुक़सान को देखते हुए पिछले साल एकल एवं बहु-ब्रांड वाले उत्पादों के संगठित खुदरा व्यापार के क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को और उदार बनाए जाने का भी निर्णय लिया है। इसके तहत 10 जनवरी, 2012 से एकल ब्रांड वाले उत्पादों के व्यापार में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की सीमा बढ़ाकर शत-प्रतिशत कर दी गई, किंतु ऐसे व्यापार में 51 प्रतिशत से अधिक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश करने वाली कंपनियों पर न्यूनतम 30 प्रतिशत तक की क़ीमत के सामान की खरीद देश के भीतर स्थित लघु उद्यमियों, ग्रामीण उद्योगों, दस्तकारों व कारीगरों से हीं किए जाने की शर्त भी लगा दी गई। बाद में 20 सितंबर, 2012 से बहुब्रांड वाले उत्पादों के व्यापार के लिए भी 51 प्रतिशत की सीमा तक का प्रत्यक्ष विदेशी निवेश संबंधित राज्य सरकार की सहमति के आधार पर 10 लाख तक की आबादी वाले शहरों तथा जिन राज्यों में ऐसे शहर न हों, वहां राज्य सरकार की वरीयता वाले शहरों अथवा राज्य के सबसे बड़े शहर में संबंधित नगर-क्षेत्र के भीतर अथवा उसकी सीमा के बाहर की 10 किलोमीटर की परिधि के क्षेत्र में खुदरा स्टोर खोलने के लिए अनुमान्य कर दिया गया बशर्ते कि ऐसा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश न्यूनतम 10 करोड़ अमरीकी डॉलर का हो। इसके अंतर्गत बिना ब्रांड वाले फल-फूल, सब्जी, खाद्यान्न, दालें तथा मांस-मछली जैसे उत्पादों को भी शामिल किया गया। ऐसे व्यापार के लिए भी न्यूनतम 30 प्रतिशत तक की खरीद हमेशा अधिकतम 10 लाख डॉलर तक के पूंजी-निवेश के भीतर बने रहने वाले घरेलू लघु उद्योगों से किए जाने की शर्त रखी गई। साथ ही शुरुआती प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का कम से कम 50 प्रतिशत हिस्सा तीन साल की अवधि के भीतर व्यापार की पृष्ठगत अवस्थापना सुविधाओं, जैसे प्रसंस्करण, उत्पादन, वितरण, डिज़ाइन एवं गुणवत्ता में सुधार, भंडार-गृहों के निर्माण एवं भंडारण व कृषि-विपणन की सुविधाओं के विकास आदि पर ख़र्च किया जाना भी अनिवार्य बनाया गया।

पिछले महीने केंद्र सरकार द्वारा बहुब्रांड उत्पादों के खुदरा व्यापार में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की शर्तों को थोड़ा और उदार किया गया है, जिनके तहत अब निवेशक अनिवार्य घरेलू खरीद के लिए 20 लाख डॉलर तक की लागत वाले लघु-उद्योगों को शामिल कर सकेंगे तथा यदि बाद में उनका कुल पूंजी निवेश इससे अधिक भी हो जाता है तब भी उन्हें अपनी व्यापार श्रृंखला से जोड़े रख सकेंगे। खरीद के इन स्रोतों में अब कृषि क्षेत्र की सहकारी संस्थाएं भी शामिल हो सकेंगी। इसी के साथ ही अब राज्य सरकार की अनुमति के आधार पर ऐसे खुदरा स्टोर 10 लाख से कम जनसंख्या वाले शहरों के भीतर अथवा उनकी सीमा के बाहर की 10 किलोमीटर की परिधि के भीतर भी खोले जा सकेंगे। मेरे विचार में तो जरूरत इस बात की भी है कि घरेलू उत्पादों की खरीद की न्यूनतम अनिवार्य सीमा को बढ़ाकर कम से कम 50 प्रतिशत रखा जाए तथा किसानों को फायदा पहुंचाने तथा कृषि-विपणन की सुविधाओं के विकास को बढ़ावा देने के लिए घरेलू खरीद की न्यूनतम

अनिवार्यता के तहत कृषि उत्पादों की खरीद की भी एक अनिवार्य न्यूनतम सीमा तय की जाए। सरकार की इस नई नीति की सफलता आंकने की कसौटी प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की मात्रा के बजाय यही सुनिश्चित किया जाना होना चाहिए कि ऐसे विदेशी निवेशक वास्तव में अपने निवेश का 50 प्रतिशत हिस्सा बैक – एंड इंफ्रास्ट्रक्चर में लगाएं और न्यूनतम 30 प्रतिशत तक की घरेलू खरीद की शर्त का अनुपालन करें। व्यापार संबंधी प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की नीतियों को लागू करते समय हमें घरेलू व्यापार को संरक्षण देनेवाली शर्तों का अनुपालन सुनिश्चित कराने के लिए क्रियान्वयन के स्तर पर सतर्क रहना होगा तथा एक मजबूत निगरानी तंत्र स्थापित करना होगा।

अब देखना यही है कि राज्य सरकारें इन सब सुझावों पर किस तेजी से और किस सीमा तक अमल करती हैं। अंतर्राज्यीय कृषि–विपणन को विनियमित करने वाले केंद्रीय कानून के सहारे देश में एक समेकित कृषि – उपज के बाज़ार को स्थापित करने का प्रयास तो कृषि मंत्रालय की फाइलों में पहले ही दम तोड़ चुका है।

प्राधिकार समिति की शेष सिफ़ारिशों के बारे में राज्य सरकारें क्या कार्रवाई करती हैं, यह तो कुछ समय बाद ही पता चलेगा। हाल ही में कुछ राज्यों ने फलों तथा सब्जियों को मंडी कानूनों के तहत अधिसूचित उत्पादों की सूची से बाहर निकालकर उन्हें गैर – विनियमित किए जाने के बारे में विचार करना शुरू किया हैं। लेकिन मेरे विचार में ऐसा करना किसानों के लिए घातक सिद्ध होगा, क्योंकि ऐसे में उन्हें इनके विपणन के लिए मिल रही वर्तमान सुविधाएं भी मिलनी कठिन हो जाएंगी। निजी क्षेत्र का व्यापक इंफ्रास्ट्रक्चर खड़ा होने में अभी समय लगेगा। भारत में कृषि–उत्पादों के बाज़ार का वर्तमान में बुरा हाल है। एक तरफ किसान अपनी उपज का उचित मूल्य न मिल पाने के कारण बदहाली व ऋणग्रस्तता के शिकार होते चले जा रहे हैं, दूसरी तरफ उपभोक्ता समय–समय पर क़ीमतों में आनेवाली उछाल के कारण त्रस्त है। ऐसे में को वैकल्पिक विपणन व्यवस्थाओं तथा आपूर्ति–शृंखलाओं की जरूरत है, न कि स्थापित बाज़ार व्यवस्था को नकार देने की। वैकल्पिक व्यवस्थाएं स्थापित होने से ही बाज़ार में प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी और किसानों को उपज का अच्छा मूल्य मिलेगा। उसी के जरिये उपभोक्ताओं को भी उचित दामों पर कृषि–उत्पाद मिलेगी। समुचित शीतगृह–शृंखलाएं स्थापित होने पर ही शीघ्रक्षयी कृषि उत्पादों का भंडारण हो सकेगा और उनका सड़ना–गलना तथा औने–पौने दामों पर बिकना बंद होगा तथा एक न्यायोचित मूल्य पर सालभर बाज़ार में उनकी आपूर्ति सुनिश्चित की जा सकेगी। उम्मीद है कि केंद्रीय कृषि मंत्रालय, खाद्य प्रसंस्करण मंत्रालय तथा राज्य सरकारें मिलकर शीघ्र इस दिशा में कोई नई व्यवस्था जरूर करेंगी, ताकि भारतीय कृषि में उत्पादन की दृष्टि से हो रही प्रगति का वास्तविक लाभ देश के किसानों को मिल सके। ❑

(लेखक भारत सरकार के खाद्य मंत्रालय में संयुक्त सचिव हैं। ई–मेलः umeshkschauhan@gmail.com **)**

ENGLISH

Muntosh Mishra "भारत"

7 Days' Trial Classes Free

★ Complete Grammar

★ स्वयं के विचार को Simple English मे लिखना सिखाने पर विशेष ध्यान।

★ Precis और Comprehension अपने शब्दों में लिखना सिखाने पर विशेष ध्यान।

★ (1987-2013) तक के UPSC (Main) के Precis और Comprehension के difficult words का हिन्दी Class में उपलब्ध

★ (2007-2013) तक के UPSC (Main) के Question का Solution Class में उपलब्ध

★ Class दुबारा करने पर कोई शुल्क नहीं

★ Satisfaction नहीं होने पर Fees 45 दिनों तक कभी भी वापस

THE WELL™

THE SANCTUM OF SUCCESS

308, Top Floor, Jyoti Bhawan
In Front of Post Office
Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-9

9811141396, 9899324319

YH271/2013

गांधीजी का स्त्री विमर्श

सुभाष सेतिया

बहुत कम लोग जानते हैं कि गांधीजी महिलाओं की समानता और समाज में उन्हें सम्मान दिए जाने के मामले में अपने समय से कहीं आगे थे। समाज में महिलाओं की स्थिति को लेकर गांधीजी ने जो दृष्टि बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अपने भीतर विकसित की और जिसे अपने आचरण में उतारा, वह आज इक्कीसवीं शताब्दी में भी काफी क्रांतिकारी लग सकती है

प्रसिद्ध इतिहासकार और गांधी जी के जीवनीकार रामचन्द्र गुहा ने हाल में एक भेंटवार्ता में कहा कि गांधीजी अभी जीवित हैं क्योंकि वे अब भी लोगों में क्षोभ और क्रोध जगाते हैं। वे महात्मा गांधी की जीवनी में लिखते हैं कि गांधीजी विश्वभर के अकेले अंतर्राष्ट्रीय स्तर के महापुरुष हैं। सच कहा जाए तो आधुनिक युग की बड़ी विभूतियों से गांधीजी इसलिए अलग खड़े दिखाई देते हैं क्योंकि अपने समय का शायद ही कोई ऐसा मुद्दा हो जिस पर गांधीजी के अपने विचार या राय न हो। उन्होंने भारत की राजनीति में अहिंसक विरोध यानी सत्याग्रह का जो अभिनव प्रयोग किया वो उनकी मृत्यु के साढ़े छह दशक बाद और भी अधिक सक्रियता के साथ दुनिया के अनेक देशों में अपनाया और आज़माया जा रहा है। उन्होंने राजनीति के अलावा धर्म-अध्यात्म से लेकर स्वच्छता और सेक्स तक के विषयों पर न केवल सैद्धांतिक विवेचन किया बल्कि व्यावहारिक प्रयोग भी किए। इसी सार्वकालिक दृष्टि का ही प्रताप है कि गांधीजी ने अपने जीवनकाल में जो ख्याति प्राप्त की उससे कई गुना अधिक लोकप्रियता और स्वीकार्यता उन्हें संसार से चले जाने के बाद मिल रही है।

गांधीजी के दर्शन में समाज के हर वर्ग को स्थान मिला है। बहुत कम लोग जानते हैं कि गांधी जी महिलाओं की समानता और समाज में उन्हें सम्मान दिए जाने के मामले में अपने समय से कहीं आगे थे। समाज में महिलाओं की स्थिति को लेकर गांधी जी ने जो दृष्टि बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अपने भीतर विकसित की और जिसे अपने आचरण में उतारा, वह आज इक्कीसवीं शताब्दी में भी काफी क्रांतिकारी लग सकती है। कभी-कभी यह बात बहुत अचरज-भरी लगती है कि अन्य अनेक सामाजिक मामलों में परंपरावादी रीति-नीति का समर्थन करने वाले गांधी जी महिलाओं से जुड़े प्रश्नों पर गहरी उदारतावादी और समतावादी दृष्टि कैसे अपना पाए। उनका आचरण तथा उनके लेख, भाषण, पत्र आदि इस तथ्य के जीवंत प्रमाण हैं कि वे नारी को पुरुष से किसी भी बात में कम नहीं आंकते थे और सहिष्णुता जैसे गुणों में तो औरतों को पुरुषों से अधिक समर्थ और सक्षम मानते थे। यही कारण है कि उन्होंने कांग्रेस में महिलाओं को नेतृत्व का पूरा अवसर दिया। विभिन्न आंदोलनों में औरतों को शरीक करने के साथ-साथ उनके सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक और राजनीतिक उत्थान के कार्यक्रम भी चलाए। इसमें ध्यान देने की बात यह है कि नारी-मुक्ति का शोर मचाने की बजाय उन्होंने महिला समानता को सहज ढंग से स्वतंत्रता आंदोलन का अभिन्न अंग बना दिया।

यह भी कह सकते हैं कि महिला-अधिकारों के संबंध में आज जो अनुकूल वातावरण हमें दिखाई दे रहा है, उसकी नींव गांधीजी सरीखे महानुभावों ने बहुत पहले रख दी थी। इसी संदर्भ में प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता इला भट्ट का वह कथन एकदम सटीक प्रतीत होता है जो उन्होंने गांधी ऑन वुमेन पुस्तक की भूमिका में लिखा है। वे लिखती हैं- 'महिलाओं ने उनके नेतृत्व में चले जन-आंदोलन में सहज ढंग से भाग लिया। इससे भारतीय महिलाओं के जीवन में हमेशा के लिए एक मोड़ आ गया। मैं यह कहना चाहूंगी कि यदि गांधीजी यह मोड़ न लाए होते तो मैं वह न होती जो मैं आज हूं। यह बात आज की हर महिला पर लागू होती है।'

गांधीजी यों तो समूची मानवजाति का सम्मान करते थे, परंतु महिलाओं के लिए उनके हृदय में अत्यन्त गहरी सहानुभूति और आदर का भाव मौजूद था। यही कारण है कि जिस ब्रिटिश सत्ता के ख़िलाफ़ उन्होंने संघर्ष छेड़ दिया था, उसी देश की महिलाओं के साहस और निडरता की उन्होंने भूरी-भूरि प्रशंसा की। जब ब्रिटेन की महिलाओं ने वोट का अधिकार प्राप्त करने के लिए आंदोलन चलाया तो गांधीजी ने खुलकर उनके संघर्ष का समर्थन किया और 23 फरवरी, 1907 के इंडियन ओपीनियन अख़बार में लिखा: 'क्या भारतीय पुरुष कायर बने रहेंगे या अंग्रेज़ महिलाओं द्वारा दिखाए गए पौरुष का अनुसरण करेंगे और जागेंगे?

समूचे स्वाधीनता आंदोलन के दौरान उन्होंने अनेक महिलाओं को न केवल स्वतंत्रता संघर्ष

में कूदने के लिए प्रेरित किया, बल्कि उन्हें नेतृत्व करने का भी अवसर दिया। स्वाधीनता संघर्ष के इतिहास में सरोजिनी नायडु, सुचेता कृपलानी, ऐनी बेसेंट, सुशीला नैय्यर, विजय लक्ष्मी पंडित, अरुणा आसफ अली तथा कई अन्य महिला नेताओं ने कांग्रेस को सशक्त बनाने में योगदान किया। इसके अलावा बहुत-सी महिलाओं ने महात्मा गांधी की प्रेरणा से सामाजिक उत्थान तथा अन्य रचनात्मक कार्यों को अपनाया। यही नहीं, गांधीजी ने कुछ विदेशी महिलाओं को भी अपने व्यवहार व स्नेह से इतना प्रभावित किया कि वे अपना वतन छोड़कर न केवल भारत में बस गईं, बल्कि भारतीय नाम और जीवन पद्धति भी अपनाई और रचनात्मक कार्यों में सक्रिय सहयोग दिया। इनमें सरला बेन तथा मीरा बेन जैसे नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

महिलाओं के प्रति गांधीजी के सकारात्मक दृष्टिकोण का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि वे महिलाओं को पुरुषों के मुक़ाबले अधिक सुदृढ़ और सहृदय मानते थे। वे नारी को अबला कहने के भी सख़्त ख़िलाफ़ थे। उनकी यह धारणा उनके आचरण, लेखों तथा व्याख्यानों में अनेक बार प्रकट हुई।

महिलाओं के प्रति गांधीजी के सकारात्मक दृष्टिकोण का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि वे महिलाओं को पुरुषों के मुक़ाबले अधिक सुदृढ़ और सहृदय मानते थे। वे नारी को अबला कहने के भी सख़्त ख़िलाफ़ थे। उनकी यह धारणा उनके आचरण, लेखों तथा व्याख्यानों में अनेक बार प्रकट हुई। इस संदर्भ में महात्मा गांधी का यह उद्धरण द्रष्टव्य है: 'उन्हें अबला पुकारना महिलाओं की आंतरिक शक्ति को दुत्कारना है। यदि हम इतिहास पर नज़र डालें तो हमें उनकी वीरता की कई मिसालें मिलेंगी। यदि महिलाएं देश की गरिमा बढ़ाने का संकल्प कर लें तो कुछ ही महीनों में वे अपनी आध्यात्मिक अनुभूति के बल पर देश का रूप बदल सकती हैं। '

महिलाओं की इस आंतरिक शक्ति को गांधीजी सत्याग्रह जैसे अहिंसक हथियार के लिए सर्वथा उपयुक्त मानते थे। वे कहा करते थे कि अहिंसा और सत्याग्रह के मार्ग पर चल रही महिलाएं सहज रूप से बड़ी से बड़ी बाधाओं का सामना कर सकती हैं। उनका यह भी दृढ़ विश्वास था कि सत्याग्रह ने महिलाओं को घर की चारदीवारी से बाहर निकालकर समाज एवं देश की सेवा करने का मौका दिया है। यह बात उनके इस कथन से स्पष्ट होती है : 'मैंने महिला-सेवा को रचनात्मक कार्यक्रम में शामिल किया है, क्योंकि सत्याग्रह ने स्वत: ही महिलाओं को जिस तरह अंधेरे से बाहर निकाल दिया है, वैसा इतने कम समय में और किसी भी उपाय से नहीं हो सकता था।'

ज़ाहिर है, भावनात्मक स्तर पर सम्मान और समानता के समर्थनभर से महिलाओं को समाज में वास्तविक बराबरी नहीं दिलाई जा सकती। इस संबंध में गांधीजी का स्पष्ट मत था कि औरतों का शैक्षिक स्तर सुधारकर उन्हें आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाना बहुत ज़रूरी है। यह कम महत्वपूर्ण नहीं है कि करीब 100 साल पहले ही गांधीजी ने महिला समानता के लिए आर्थिक स्वावलंबन की आवश्यकता को पहचान लिया था। उनके खादी आंदोलन का एक उद्देश्य स्वदेशी की भावना को उजागर करना और दूसरा उद्देश्य देश की गरीब जनता, विशेषकर महिलाओं को, जोकि सामाजिक बंधनों के कारण घर से बाहर जाकर काम-धंधे नहीं कर पाती थीं, घर पर चरखा या तकली चला कर कुछ धन अर्जित करने का साधन उपलब्ध कराना था। खादी उद्योग के माध्यम से गांवों, कस्बों व शहरों की लाखों निर्धन महिलाओं को देशभक्ति की अनुभूति के साथ-साथ रोज़गार भी मिला और उनके जीवन में खुशहाली आई।

महात्मा गांधी चाहते थे कि महिलाएं आर्थिक तथा दैहिक शोषण के साथ-साथ सदियों से चली आ रही सोच से उपजी मानसिक गुलामी से भी मुक्ति पाने की चेष्टा करें। वे विभिन्न महिला संगठनों की बैठकों, आश्रमों की सभाओं, गोष्ठियों, उत्सवों, त्योहारों तथा अन्य अवसरों पर महिलाओं में आत्मविश्वास जगाने का कोई मौका हाथ से जाने नहीं देते थे। 20 जनवरी, 1918 को मुंबई में 'भगिनी समाज' की बैठक को संबोधित करते हुए गांधीजी ने सुझाव दिया कि उन्हें किसी महिला को अपना अध्यक्ष चुनना चाहिए। इसी तरह 8 मई 1919 को मुम्बई में ही महिलाओं की एक सभा में गांधी जी ने कहा: 'यह आवश्यक है कि महिलाएं देश में हो रहे विकास में अपना योगदान करें।' 29 जून, 1919 को अहमदाबाद में 'वनिता आश्रम' की बैठक को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा 'मैं 1915 से देश के विभिन्न भागों की अपनी यात्राओं के दौरान कहता आया हूं कि जब तक महिलाएं परुषों के बराबर खड़ी नहीं होंगी और अपना अधिकार नहीं जताएंगी तब वे अपनी पहचान नहीं बना पाएंगी'।

महात्मा गांधी स्त्रियों के सामाजिक उत्थान के लिए भी बहुत चिंतित थे। महिलाओं के जीवन को प्रभावित करने वाली सामाजिक कुरीतियों के बारे में उनके मन में काफी कड़वाहट थी। वे मानते थे कि बाल-विवाह, पर्दा प्रथा, सती प्रथा और विधवा-विवाह -निषेध जैसी कुरीतियों के कारण ही महिलाएं उन्नति नहीं कर पातीं और शोषण, अन्याय तथा अत्याचार, असमानता झेलने को विवश होती हैं। उन्होंने इन कुप्रथाओं के उन्मूलन के लिए कोई संगठित आंदोलन तो नहीं चलाया, किंतु विभिन्न मंचों पर अपने व्याख्यानों और लेखों के माध्यम से वे इन सामाजिक कुरीतियों पर कठोर प्रहार करते रहे।

महात्मा गांधी स्त्रियों के सामाजिक उत्थान के लिए भी बहुत चिंतित थे। महिलाओं के जीवन को प्रभावित करने वाली सामाजिक कुरीतियों के बारे में उनके मन में काफी कड़वाहट थी। उन्होंने इन कुप्रथाओं के उन्मूलन के लिए कोई संगठित आंदोलन तो नहीं चलाया, किंतु विभिन्न मंचों पर अपने व्याख्यानों और लेखों के माध्यम से वे इन सामाजिक कुरीतियों पर कठोर प्रहार करते रहे।

(शेषांश पृष्ठ 52 पर)

विकास यात्रा

वैज्ञानिक अनुसंधान एवं विकास परियोजनाएं

वैज्ञानिक अनुसंधान और विकास को बढ़ावा देने के अभियान के रूप में प्रधानमंत्री ने विभिन्न परियोजनाओं के लिए 9,000 करोड़ रुपये के परिव्यय की घोषणा की। इनमें उच्च कार्य-निष्पादन गणना संबंधी राष्ट्रीय मिशन और तमिलनाडु में एक न्यूट्रिनो-आधारित वेधशाला संबंधी परियोजना भी शामिल है। उच्च कार्य-निष्पादन गणना संबंधी राष्ट्रीय मिशन के लिए 4,500 करोड़ रुपये और राष्ट्रीय भौगोलिक सूचना प्रणाली के लिए 3,000 करोड़ रुपये का परिव्यय निर्धारित किया गया है। न्यूट्रिनों आधारित वेधशाला 1,450 करोड़ रुपये की लागत से तमिलनाडु के पश्चिम बोडी हिल्स में लगाने का प्रस्ताव है। इसके अंतर्गत वायु मंडलीय न्यूट्रिनोज का अध्ययन किया जाएगा।

महिला स्वयं सहायता समूहों द्वारा लिए जाने वाले ऋणों पर ब्याज में सब्सिडी

सरकार ने ग्रामीण महिलाओं द्वारा संचालित स्वयं सहायता समूहों द्वारा लिए जाने वाले ऋणों पर ब्याज में 1,400 करोड़ रुपये की सब्सिडी की घोषणा की। यह योजना 1 अप्रैल, 2013 से महिला स्वयं सहायता समूहों द्वारा लिए गए ऋणों पर लागू होगी। आजीविका कार्यक्रम-राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (एनआरएलएम) के अंतर्गत ऐसे ऋणों पर ब्याज में छूट देना एक महत्वपूर्ण उपाय है। इस नए उपाय के अनुसार 150 सर्वाधिक पिछड़े जिलों, जो नक्सली संकट से सर्वाधिक ग्रस्त हैं, में सभी बैंक, महिला स्वयं सहायता समूहों को 3 लाख रुपये तक के ऋण 7 प्रतिशत ब्याज पर उपलब्ध कराएंगे। महिला स्वयं सहायता समूहों को समय पर पुनर्भुगतान के लिए 3 प्रतिशत छूट और दी जाएगी। इस प्रकार ऐसे ऋणों पर वास्तविक ब्याज केवल 4 प्रतिशत लगेगा। इसके अतिरिक्त सभी महिला स्वयं सहायता समूहों को बकाया ऋणों (01 अप्रैल, 2013 से लिए गए 3 लाख रुपये तक के ऋणों) पर केवल 7 प्रतिशत की दर से ब्याज देना होगा। 1 अप्रैल, 2013 से जनवरी 2014 की अवधि के लिए ब्याज में अंतर की राशि रिफंड की जाएगी। शेष जिलों में, जहां महिला स्वयं सहायता समूहों को राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन संबंधी शिकायते रही हैं और जो पुनर्भुगतान करने में नियमित रहे हैं, उन्हें रिफंड आधार पर ब्याज में छूट दी जाएगी, और उन्हें 3 लाख रुपये तक के ऋण पर 01 अप्रैल, 2013 से केवल 7 प्रतिशत ब्याज देना होगा।

2013-14 के दौरान एनआरएलएम के लिए कुल बजटीय आवंटन 2,600 करोड़ रुपये था, जिसमें से 650 करोड़ रुपये 150 जिलों में ब्याज सब्सिडी के रूप में खर्च किए जा रहे हैं, जबकि अन्य जिलों में ब्याज सब्सिडी पर 750 करोड़ रुपये खर्च किए जा रहे हैं।

निर्भया कोष के अंतर्गत दूसरी परियोजना

रुपये 1,000 करोड़ के निर्भया कोष के अतर्गत एक समेकित कम्प्यूटर प्लेटफार्म की स्थापना संबंधी दूसरी परियोजना को मंजूरी दी गयी है। यह प्लेटफार्म विपदाग्रस्त महिलाओं की टेलीफोन कॉलों का जवाब देने में कारगर सिद्ध होगा। एक समेकित कम्प्यूटर संचालित डिस्पैच प्लेटफार्म 321.69 करोड़ रुपये की लागत से 114 शहरों में स्थापित करने का प्रस्ताव है। दिन-रात (24-7) सातों दिन काम करने वाली आपतकालीन राहत यूनिट जियोग्राफिकल पोजीशनिंग सिस्टम (जीपीएस) अथवा जियोग्राफिकल इन्फारमेशन सिस्टम का इस्तेमाल करते हुए किसी भी आपतकालीन कॉल को दर्ज कर सकेगी। दिन-रात सातों दिन काम करने वाली हेल्पलाइन चिकित्सा और आपदा सेवाओं, बाल-आपातकाल, नि:सहाय महिलाओं और बच्चों सहित सभी प्रकार की आपात स्थितियों के समय सहायता प्रदान कर सकेगी। इन आपात स्थितियों में हिंसा, महिलाओं के साथ छेड़छाड़, दहेज की मांग, यौन हमला, सताया जाना अथवा घर या सार्वजनिक स्थल पर अन्य किसी प्रकार के दुर्व्यवहार जैसे संकट शामिल हैं। 10 लाख से अधिक आबादी वाले अथवा राज्यों के मुख्यालयों से संबंधित 71 शहरों और अपराधों की अधिकता की आशंका वाले 41 जिला मुख्यालयों में शहरवार हाईटेक नियंत्रण कक्ष स्थापित किए जाएंगे। 71 शहरों में 23.123 करोड़ आबादी और 41 जिलों में 16.027 करोड़ आबादी को इस सिस्टम के अंतर्गत कवर किया जाएगा। इस तरह देश में कुल कवरेज 32.6 प्रतिशत हो सकेगा।

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम में चौथे चरण की शुरुआत

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम के चौथे चरण (2012-17) की शुरुआत 14,295 करोड़ रुपये के बजट परिव्यय के साथ की गयी थी, जिसमें 11,394 करोड़ रुपये की सरकारी सहायता शामिल थी। कुल व्यय में सरकार की हिस्सेदारी 63 प्रतिशत थी। इस कार्यक्रम का लक्ष्य देश में एड्स के मरीजों की संख्या में कमी लाना और एक भलीभांति परिभाषित एकीकरण प्रक्रिया के जरिये 5 वर्ष की अवधि में एड्स के बचाव के उपायों को मजबूती प्रदान करना है। एन्टी-रिट्रोवाइरल थेरैपी (एआरटी) प्राप्त करने के लिए पात्रता की शर्तों में बढ़ोत्तरी की गयी है ताकि एड्स के साथ रह रहे व्यक्तियों का उपचार प्रारंभिक अवस्था में शुरू किया जा सके। इससे न केवल एड्स के साथ रह रहे लोगों की आयु में बढ़ोत्तरी होगी बल्कि नए संक्रमणों का प्रसार भी रुकेगा। इस कार्यक्रम के अंतर्गत ऐसे व्यक्तियों के लिए तीसरी एआरटी भी शुरू की गयी है, जिन पर दूसरी एआरटी का प्रभाव समाप्त हो चुका है। अन्य महत्वपूर्ण उपायों में माता पिता से बच्चों में संक्रमण रोकने के लिए बहु-औषधि प्रणाली की शुरुआत प्रवासी व्यक्तियों के लिए स्रोत पर, यात्रा के दौरान और लक्ष्य पर पहुंचने के समय किए जाने वाले उपायों को सुदृढ़ करना शामिल है। इसके अतिरिक्त सामुदायिक भागीदारी के जरिये किन्नरों में इस बीमारी को फैलने से रोकना, बीमारी फैलने की आशंका वाले क्षेत्रों के लिए कार्यनीतियों पर ध्यान केन्द्रित करना, इंजेक्शन से नशीली दवा लेने वालों के लिए ओपीओइड सब्स्टिट्यूशन थिरैपी तैयार करना आदि शामिल है।

ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण व्यवस्था की मज़बूती

नचिकेत मोर
दीप्ति जॉर्ज

कुछ दशकों से ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय मज़बूती प्रदान करना बैंकिंग नीति में महत्वपूर्ण तत्व रहा है और इसमें कोई शक नहीं है कि इसमें सफलता भी मिली है। हालांकि लागत, जोखिम और प्रभावशीलता की दृष्टि से कुल मिलाकर हालत अभी भी खराब ही है। भारत में ऋण का अनुपात जीडीपी का 70 प्रतिशत है। कृषि में यह 36 प्रतिशत से भी कम है। यह दर्शाता है कि सभी नीतियों में प्राथमिकता देने के बावजूद इस क्षेत्र में औपचारिक ऋण की पहुंच कम रही है। यह किसानों पर अनौपचारिक रूप से संदेह का वातावरण बनने के कारणों का परिणाम है। वर्ष 2009 में मात्र 14 प्रतिशत सीमांत किसानों को संस्थागत ऋण दिया गया। एक हेक्टेयर से कम कृषि भूमि वाले किसान को सीमांत किसान कहा जाता है। शेष सीमांत किसानों ने अपनी जरूरतें पूरी करने के लिए अनौपचारिक स्रोतों से ऋण लिया। क्षेत्रीय आधार पर भी ऋण वितरण में भारी असंतुलन है। बिहार जैसे राज्यों का कुल ऋण अनुपात जीडीपी का 16 प्रतिशत से भी कम है जबकि देश की जीडीपी में इसकी हिस्सेदारी न्यूनतम है। वर्ष 2007-12 के दौरान 38 प्रतिशत कृषि ऋण दक्षिण भारतीय राज्यों को दिया गया जबकि कुल फ़सल क्षेत्र में इनकी हिस्सेदारी 20 प्रतिशत से भी कम थी। पूर्वी और पूर्वोत्तर राज्यों को महज आठ प्रतिशत कृषि ऋण मिल सका जबकि इनकी फसली रकबा अधिक था। इसी अवधि में मध्य भारत की कुल फसल भूमि 27 प्रतिशत थी जबकि कृषि का आंकड़ा केवल 13 प्रतिशत का रहा। यह ऋण वितरण भी फसलीकरण की व्यवस्था के अनुरूप और लगातार नहीं रहा।

वास्तव में ऋण वितरण माहवार किया जाना चाहिए था। खरीफ जून, जुलाई, सितंबर और रबी दिसंबर, जनवरी में ऋण वितरण होना चाहिए था लेकिन बैंकों ने अधिकतर ऋण वितरण मार्च में किया गया जोकि कृषि की दृष्टि से महत्वपूर्ण महीना नहीं है। कृषि क्षेत्र में ऋण वितरण की सबसे बड़ी समस्या गैर-निष्पादित परिसंपत्ति एनपीए की है जोकि लगभग पांच प्रतिशत है। यह अन्य क्षेत्रों के मुकाबले बहुत अधिक और दोगुना है। कृषि क्षेत्र के लिए ऋण की लागत राष्ट्रीय बैंकों के लिए 30 प्रतिशत को पार कर गयी है। बैंकों को इस क्षेत्र के लिए तीन प्रतिशत से नीचे की दर से और आधार दर दो प्रतिशत से अधिक की दर से ऋण उपलब्ध कराने की जरूरत है।

भारत में ग्रामीण ऋण का वितरण राष्ट्रीयकृत बैंकों के जरिये होता है। पिछले वर्षों के परिणामों को देखते हुए धीरे-धीरे यह साफ हो गया कि बैंकों का मौजूदा शाखा ढांचा लागत जोखिम और प्रभावशीलता की दृष्टि से लघु ऋण और प्राथमिकता वाले ऋण वितरण के नज़रिये से अनुकूल नहीं है। संचालन की लागत 30 प्रतिशत को पार करती है जबकि इसमें ब्याज लागत शामिल नहीं है। लघु ऋण वितरण के क्षेत्र में गैर-निष्पादित परिसंपत्ति का अनुपात 10 प्रतिशत या इससे अधिक है। हालांकि बैंकों की बैलेंस शीट में अधिक पारदर्शितता नहीं है। इसलिए यह आंकड़ा और अधिक हो सकता है। इसके अलावा नीतिगत रूप से बैंकों को न केवल प्राथमिक क्षेत्रों का लक्ष्य हासिल करना होता है बल्कि इसे बैलेंस शीट में भी दर्शाना होता है। भारतीय और वैश्विक अनुभवों से यह पता चलता है कि राष्ट्रीय बैंकों को इस तरह के अभियानों के लिए या तो बैंकों के

भीतर ही अलग शाखाएं स्थापित करनी चाहिए या समर्पित सहयोगी बैंकों की स्थापना करनी चाहिए। ये संस्थान अपने निर्धारित काम पर अपना ध्यान केंद्रित करेंगे और ज़रूरत के अनुसार निर्णय लेंगे। ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण वितरण के लिए निर्णय प्रक्रिया का केंद्रीकरण करने की ज़रूरत नहीं है। ये संस्थान सीधे ग्राहकों के साथ बात करेंगे और फ़ैसले लेंगे। राष्ट्रीय बैंक अपना ऋण लक्ष्य प्राप्त करने के लिए स्थानीय संस्थानों जैसे क्षेत्रीय बैंक या भारतीय रिजर्व बैंक से निगमित गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के साथ भागीदारी कर सकते हैं। इससे राष्ट्रीय बैंकों को इस ऋण को अपनी बैलेंस शीट में रखने की ज़रूरत नहीं होगी और उनके लाभ पर कोई जोखिम नहीं होगा। इस प्रक्रिया के भारत और विदेशों में बेहतर उदाहरण मौजूद हैं। राष्ट्रीय महत्व के बैंकों की बैलेंस शीट पर कम गुणवत्ता और उच्च जोखिम वाल ऋण का असर समाप्त करना सुनिश्चित करने के लिए और लागत तथा जोखिम पर नियंत्रण रखने के लिए बैंकों को बैलेंस शीट में पारदर्शिता बढ़ानी होगी। बैलेंस शीट में विस्तृत जानकारी देनी होगी और वर्ष में कम से कम एक बार सार्वजनिक परीक्षण कराना होगा।

ग्रामीण ऋण के विकास में मूल रूप से ऋण प्रदान करने की कठोर और मशीनी प्रणाली मुख्य बाधा है। इसके अलावा ग्रामीण ऋण के विकास और संबंधित संस्थानों के विकास में कुछ और महत्वपूर्ण तत्व हैं जिनमें बदलाव करने से विकास को गति दी जा सकती है। इससे ग्रामीण ऋण में गुणात्मक मात्रात्मक सुधार आएगा और लागत में असर पड़ेगा।

ग्रामीण क्षेत्रों में लागत जोखिम और प्रभावशीलता के तीनों तत्वों पर काबू पाने में देश में सहकारी ढांचे में संचालित होने वाले ग्रामीण बैंक कुछ हद तक सही साबित हुए हैं। लेकिन इसके साथ ग्रामीण बैंक प्रबंधन की समस्या और वर्षा की कमी से होने वाले नुक़सान पर काबू पाने में नाकाम रहे हैं। इसके अलावा ये बैंक क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था के साथ भी तालमेल नहीं बिठा पाए हैं। भारतीय सहकारी संस्थान पिछले वर्षों के दौरान इन दोनों मुददों पर बुरी तरह से असफल साबित हुए हैं। बचे हुए सहकारी बैंकों की इन समस्याओं से निपटने के लिए सरकार राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक नाबार्ड और भारतीय रिजर्व बैंक लगातार प्रयास कर रहे हैं। लेकिन इन सहकारी बैंकों की समस्याएं पहले से ज्यादा जटिल हो गयी हैं और इससे निपटने के लिए क्षेत्रीय बैंकों और नाबार्ड के भीतर ही क्षमताएं विकसित करने की जरूरत है। इन बैंकों के लिए बीमा और प्रतिभूतिकरण जैसे नए उत्पाद विकसित किए जाने चाहिए। देश में फिलहाल बहुत सारे क्षेत्रीय और स्थानीय बैंक काम कर रहे हैं। इस लिए यह बेहतर होगा कि नए संस्थान बनाने की बजाय इन बैंकों को ही सुदृढ़ किया जाए। ये सभी बैंक समान समस्याओं का सामना करते हैं और इसलिए इनकी समस्याओं के समाधान के उपाय तलाशने पर जोर दिया जाना चाहिए।

क्षेत्रीय बैंकों की तरह ही भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा निगमित गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों ने भी लागत जोखिम और प्रभावशीलता की समस्याओं का निदान तलाशा है। इन कंपनियों की सबसे बड़ी ताकत यह है कि ये कंपनियां आम जनता से राशि जमा नहीं कर सकती और इनको पूंजी बाज़ार से या बैंकों से पूंजी जुटानी होती है। इसका फायदा यह होता है कि ये कंपनियां लगातार उच्च शिक्षित और विशेषज्ञों, देनदारों की लगातार निगरानी में होती है और ये कंपनियों ऐसा ऋण जारी करने से रोक देती हैं जिनमें वापसी की संभावना कम होती है। यह सुविधा क्षेत्रीय या स्थानीय बैंकों को उपलब्ध नहीं है। हालांकि ऋण के लिए पूंजी बाज़ार ठीक से विकसित नहीं है और इसके लिए मूल रूप से कड़ा नियामकीकरण और ऋण पूंजी बाज़ार संबंधी सरकारी-कायदे कानून जिम्मेदार हैं। इस कारण से इस क्षेत्र के लिए बैंकों को भी पूंजी जुटाने में परेशानियों का सामना करना पड़ता है। खुदरा बैंकिंग नहीं करने वाले थोक बैंकिंग के कारोबार में इन संस्थानों को समाहित करना होगा जिससे वे अपने विकास के रास्ते में आने वाली इन बाधाओं को हटा सके। इससे इन बैंकों को अपने मूल चरित्र में बदलाव की जरूरत नहीं होगी और अपनी स्थिरता को मज़बूत कर सकेंगे।

ग्रामीण ऋण के विकास में मूल रूप से ऋण प्रदान करने की कठोर और मशीनी प्रणाली मुख्य बाधा है। इसके अलावा ग्रामीण ऋण के विकास और संबंधित संस्थानों के विकास में कुछ और महत्वपूर्ण तत्व हैं जिनमें बदलाव करने से विकास को गति दी जा सकती है। इससे ग्रामीण ऋण में गुणात्मक मात्रात्मक सुधार आएगा और लागत में असर पड़ेगा।

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है कि भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की एक प्रमुख समस्या बैंकों का आकार छोटा होना है। भारतीय अर्थव्यवस्था जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए देश के बैंकिंग क्षेत्र का आकार छोटा है। बैंकिंग का आकार छोटा होने का असर यह होता है कि ऋण का एक बड़ा हिस्सा सरकार द्वारा बांड और खाद्य सब्सिडी के रूप में इस्तेमाल कर लिया जाता है। इस कारण से यह पूंजी ऋण के रूप में अर्थव्यवस्था में नहीं जा पाती है और इसके विकास पर असर पड़ता है। अगर सरकार द्वारा तय की गयी इस बाध्यता को हटा लिया जाए और इन्हें बैलेंस शीट से मुक्त कर दिया तो भारतीय पूंजी बाज़ार में गैर-बैंकिंग क्षेत्र की कंपनियों और ग्रामीण भारत के वित्तीय स्रोत बनने की पूरी क्षमता मौजूद है। भारतीय बैंक इन दोनों क्षेत्रों की आवश्यकताओं को आसानी से पूरा कर सकते हैं। इसके अलावा बैंकों खास तौर पर सरकारी बैंकों को अपनी ब्याज दर बहुत ही कम स्तर पर रखने की जरूरत है। सरकार भी ग्रामीण ऋण की ब्याज दर पर सब्सिडी दे सकती है। ऐसा नहीं होने के कारण परिणाम यह होता है कि बड़ी संख्या में ऋण लेने वाले छोटे किसानों और भूमिहीन मजदूरों को इंकार कर दिया जाता है। यह एक

दीर्घकाल के हितों को देखते हुए गरीबी उन्मूलन और विकास दर बढाने के लिए सभी कारोबारी क्षेत्रों को महत्ता देना आवश्यक है। प्राथमिकता वाले क्षेत्रों की परिभाषाओं को बार-बार तय करने की ज़रूरत है। इसके लिए कारोबारी और भौगोलिक क्षेत्र में जीडीपी के अनुपात के आंकड़ों और ऋण विकास की दर का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। इसका इस्तेमाल एपीएसएल का लक्ष्य निर्धारित करने में किया जा सकता है।

ऐसा क्षेत्र है जिसकी मांग बैंक पूरा करना चाहते हैं। इसके बावजूद यह मांग पूरी नहीं हो पाती है। इस क्षेत्र में नवाचार या नयी शुरुआत करने की संभावनाएं भी बेहद कम होती है। इस मांग को पूरा करने का सबसे बेहतर उपाय यह होगा कि बैंकों को अपने जोखिम प्रबंधन पर ऋण जारी करने दिया जाए और सरकार किसी भी तरह का लाभ जैसे ब्याज छूट और ऋण माफी सीध ` किसानों को ही दे। इसके लिए किसी ऋण प्रणाली की जरूरत नहीं होनी चाहिए। ऋण वापसी के नैतिक मूल्यों और लेनदारों के प्रदर्शन को आंकने के लिए एक व्यापक तरीका अपनाया जाना चाहिए। इसके लिए ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण प्रदान करने वाले सभी संगठनों स्व सहायता समूह किसान क्रेडिट कार्ड और सामान्य क्रेडिट कार्ड को मिलाकर एक क्रेडिट ब्यूरो बनाया जाना चाहिए और इसमें लेनदारों से संबंधित जानकारी उपलब्ध होनी चाहिए। भारतीय रिजर्व बैंक ने इसको लघु वित्त संस्थानों में सफलतापूर्वक लागू किया है।

प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में ऋण जारी करने के कायदे-कानूनों में एकरूपता लाना एक अन्य प्रमुख समस्या है। यह व्यवस्था बैंकों को किसी कारोबारी क्षेत्र या भौगोलिक क्षेत्र में विशेष प्रणाली लागू करने से रोकती है। किसी कठिन जिले या कारोबारी क्षेत्र में ऋण जारी करने पर विशेष ध्यान देने वाली व्यवस्था एडजस्टिड प्रायोरिटी सेक्टर लैंडिंग एपीएसएल प्रणाली बैंक को एक या एक अधिक कारोबारी और भौगोलिक क्षेत्रों में ध्यान केंद्रित करने की व्यवस्था करती है। बैंकों को इसका चयन करने की छूट देने से इस समस्या का समाधान हो सकता है और बैंकिंग व्यवस्था प्राथमिकता वाले पूरे क्षेत्र को ऋण उपलब्ध करा सकती है। इस योजना में जिले के आकलन के लिए क्रीसिल इंक्लूसिक्स का इस्तेमाल किया जा सकता है। इसमें जिले की वित्तीय समावेशन की जानकारी होती है। कारोबारी क्षेत्र के आकलन के लिए विशेष क्षेत्र की कम उपलब्धियों को समग्रता में देखते हुए आधार बनाया जा सकता है। प्राथमिकता वाले क्षेत्र में ऋण वितरण पीएसएल के लक्ष्य 40 प्रतिशत को देखते हुए बैंकों को एपीएसएल के लिए 50 प्रतिशत ऋण वितरण का लक्ष्य निध र्ारित करने की आवश्यकता होगी। ऋण की आपूर्ति और मांग के समय में तालमेल ठीक करने के लिए प्रति तिमाही बैलेंस शीट के आंकड़ों का मिलान करना होगा। पीएसएल के लिए ऋण लक्ष्य 40 प्रतिशत और एपीएसएल के लिए यह लक्ष्य 50 प्रतिशत होगा। कुछ ऐसे भी मामले सामने आए हैं जबकि सामान्य वर्ग के ऋण वितरण के लिए पीएसएल नीति समाप्त कर दी गयी और विशेषकर भूमिहीन मजदूरों को ऋण जारी नहीं किया गया।

दीर्घकाल के हितों को देखते हुए गरीबी उन्मूलन और विकास दर बढाने के लिए सभी कारोबारी क्षेत्रों को महत्ता देना आवश्यक है। प्राथमिकता वाले क्षेत्रों की परिभाषाओं को बार-बार तय करने की ज़रूरत है। इसके लिए कारोबारी और भौगोलिक क्षेत्र में जीडीपी के अनुपात के आंकड़ों और ऋण विकास की दर का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। इसका इस्तेमाल एपीएसएल का लक्ष्य निर्धारित करने में किया जा सकता है। हालांकि यह सब करने के लिए अन्य चीजों के अलावा योजना आयोग को देश में जिलेवार प्रत्येक कारोबारी क्षेत्र की जीडीपी की रिपोर्ट शृंखलाबद्ध ढंग से प्रकाशित करनी होगी। भारतीय रिजर्व बैंक को जिलेवार ऋण रिपोर्ट का प्रकाशन करना होगा जिससे कि इसके आधार पर सटीक विशलेषण किया जा सके।

पीएसएल लक्ष्य की उपलब्धियों और बैंक बैलेंस शीट के प्रबंधन के संबंध में ऐसे बहुत सारे मुद्दे हैं जोकि आपस में जुड़े हुए हैं। वित्तीय बाज़ार के प्रतिभागियों के बीच परिसंपत्ति, उत्तरदायित्व और जोखिम का तेज़ी से स्थानांतरण करने के लिए यह आवश्यक है कि एक जबरदस्त बाज़ार विकसित किया जाए। इस तरह के बाज़ार विकसित करने से सभी संबंधि त संस्थानों के बीच पीएसएल और अन्य परिसंपत्तियों की खरीद-फरोख्त हो सकेगी। यह पूरी तरह से गुणवत्ता पर आधारित होगा और विभिन्न संस्थानों के बीच विवादों के निपटारे का साधन भी होगा। फिलहाल ऐसा बाज़ार नहीं होने के कारण पीएसएल का लक्ष्य हासिल नहीं कर पाने की स्थिति में बैंक भारी जुर्माना चुका रहे हैं। इससे बचने के लिए बैंक पीएसएल परिसंपत्ति अर्जित करने के लिए जद्दोजहद करते हैं। यद्यपि बैंक इससे भलीभांति अवगत हैं कि लागत और जोखिम की दृष्टि से वे इसके लिए बेहतर रूप से सक्षम नहीं है। बैंक कारोबारी और भौगोलिक क्षेत्र में पूरी तरह से अपना ध्यान परिपक्वता पर लगाए रहते हैं जबकि यह उनकी स्थिरता के लिए ख़तरा बन सकता है। जोखिम स्थानांतरण बाज़ार विकसित करने से बैंक और गैर-बैंकिंग तथा अन्य प्रतिभागियों के बीच विशेषज्ञ ऐसा ऋण ढांचा विकसित करने में सक्षम होंगे जो कम लागत और जोखिम पर अंतिम ग्रामीण परिवार और उद्यम तक भी पहुंचेगा। यह माहौल बनाने के लिए यह जरूरी होगा कि प्रतिभूतिकरण संस्थान को कर छूट दी जाए जिससे कि वह प्रभावी जोखिम स्थानांतरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सके और सभी तरह के ब्याज लेनदार से वसूल करने की आवश्यकता खत्म कर सके। इसके अतिरिक्त बैंक की आधार दर आठ प्रतिशत वार्षिक से अधिक नहीं होनी चाहिए। बैंकों को बांड या ऋण या प्राथमिक और गौण बाज़ार से खरीदे हुए परिसंपत्तियों को परिपक्वता की अवधि तक रखने की अनुमति देनी चाहिए। यह सुविधा प्रदान करने के लिए विशेष वित्तीय संस्थानों जैसे-नाबार्ड राष्ट्रीय आवास बैंक और भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक सिडबी को अपनी शाखाओं का और ज्यादा सहयोग करने के लिए अधिक बाजारोंमुख होना होगा। उदाहरण के लिए नाबार्ड सहकारी बैंकों का वित्तीय प्रदर्शन सुधारने के लिए उनकी बैलेंस शीट के आधार पर पुनर्वित्त करने की बजाय उनको नुक़सान के आधार पर उचित दर से गारंटी दे सकता है।

ग्रामीण ऋण व्यवस्था को मजबूत करने के लिए पूरक आधारभूत ढांचे का विकास करना बहुत महत्वपूर्ण है। इसके तहत उपभोक्ताओं से संबंधित आंकड़े एकत्र करने वाले संस्थानों जैसे क्रेडिट ब्यूरो और वैकल्पित आंकड़े संग्रहण केंद्र विकसित करने होंगे। इनमें गोदाम विशेष तौर पर छोटे किसानों को सीधे इलेक्ट्रॉनिक रसीद उपलब्ध कराने वाले गोदाम भूमि का लेखा-जोखा रखने वाले कार्यालय केंद्र कर संग्रह करने वाले सचल कार्यालय और पुरानी परिसंपत्तियों की खरीद-फरोख्त करने वाले बाज़ार का विकास करना होगा। ❑

(नचिकेत मोर केयर इंडिया बोर्ड के अध्यक्ष हैं और वे भारतीय रिजर्व बैंक, आई के पी सेंटर फॉर टेक्नोलॉजीज इन पब्लिक हेल्थ तथा क्रिसिल के बोर्डों में सदस्य हैं। हाल ही में उन्होंने लघु व्यापार एवं कम आय वाले परिवारों के लिए व्यापक वित्तीय सेवाओं से संबद्ध भारतीय रिजर्व बैंक की समिति के अध्यक्ष के रूप में काम किया। वे नये बैंक लाइसेंसों से संबद्ध रिजर्व बैंक की उच्चस्तरीय सलाहकार समिति के सदस्य हैं।

दीप्ति जॉर्ज आई एफ एम आर फाइनेंस फाउंडेशन की सदस्य हैं और वे वित्तीय समावेशन के बारे में नियामकों और नीति-निर्माताओं के साथ फाउंडेशन की नीतिगत समर्थन कार्य-सूची निर्धारित करने में शामिल रही हैं।

ई-मेल : erin-jeremiah@icteph.org.in
Deepti.George@izmr.co.in **)**

भ्रष्टाचार से निपटने के लिये पारदर्शिता, जवाबदेही और दंड का त्रिकोण

आनंद प्रधान

इसमें कोई दो राय नहीं है कि देश में भ्रष्टाचार की जड़ें जितनी गहरी और व्यापक हो चुकी है वे सिर्फ प्रशासनिक सुधारों से नहीं बल्कि व्यापक राजनीतिक सुधारों खासकर चुनावी सुधारों और राजनीतिक दलों के लोकतंत्रीकरण से संभव हैं। वर्तमान संदर्भ में अच्छी बात यह है कि देश में भ्रष्टाचार खासकर संस्थागत भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ एक व्यापक जनभावना दिखाई पड़ रही है

"इस रिपोर्ट का अंत निश्चय ही एक आशा के साथ होना चाहिए। भारतीयों ने हमेशा भौतिकता से दूर एक दुनिया की कल्पना की है और अध्यात्म को जीवन जीने के तरीके के बतौर अपनाया है। हमारे महाकाव्य अच्छे चारित्रिक व्यवहार, बुरे पर अच्छे की विजय और संतों के बुद्धिमत्ता के उदाहरणों से भरे पड़े हैं। आज भी हमारे बच्चों को महान राजाओं जैसे विक्रमादित्य की ईमानदारी, उदारता और धर्मपरायण की कहानियां सुनाई जाती हैं। कोई कारण नहीं है कि क्यों आज रामराज्य लाने की कोशिश नहीं की जा सकती है।

आधुनिक भारत में गरीबी, अभाव और वर्ग संघर्ष के बीच धीरे-धीरे एक आत्मविश्वास से भरा, समावेशी और सशक्त भारत जगह बना रहा है। ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल के भ्रष्टाचार इंडेक्स पर भारत की स्थिति में लगातार उल्लेखनीय सुधार हुआ है और उम्मीद है कि यह आगे भी जारी रहेगा, हमारे देश के जागरूक लोगों की सतर्कता इसे सुनिश्चित करेगी।"

(द्वितीय प्रशासनिक सुधार (वीरप्पा मोइली) आयोग की शासन में नैतिकता रिपोर्ट के निष्कर्ष से)

इसमें कोई दो राय नहीं है कि शासन में भ्रष्टाचार आज देश के सामने सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है। भ्रष्टाचार का घुन न सिर्फ शासन-प्रशासन को अंदर से खोखला कर रहा है बल्कि राष्ट्रीय जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित कर रहा है। राजनीतिक दलों और सरकार से लेकर न्यायपालिका और मीडिया तक और कारोबार से लेकर खेलों तक शायद ही कोई क्षेत्र होगा जिसे भ्रष्टाचार ने प्रभावित नहीं किया है। हैरानी की बात नहीं है कि भ्रष्टाचार के इस संक्रामक रोग के मारक विस्तार और राष्ट्रीय/सार्वजनिक जीवन के रंग-रंग में प्रवेश करते जाने के कारण शासन का इकबाल कमजोर हुआ है और आम लोगों में उसके प्रति अविश्वास बढ़ा है। यह साफ तौर पर एक अराजकता को निमंत्रण है क्योंकि शासन के इकबाल के कमजोर पड़ने और नागरिकों के बढ़ते अविश्वास के कारण अलोकतांत्रिक-फासीवादी प्रवृत्तियां जोर पकड़ रही हैं।

सच यह है कि आज प्रशासनिक सुधारों के पक्ष में सबसे बड़ा तर्क यह भ्रष्टाचार हीं है जो किसी भी सुधार के लिए सबसे बड़ा अवरोध साबित हो रहा है। आश्चर्य नहीं कि प्रशासनिक सुधारों के लिए वीरप्पा मोइली की अध्यक्षता में गठित द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग ने भ्रष्टाचार पर नियंत्रण को सबसे प्रमुख चुनौती के रूप में रेखांकित करते हुए इस प्रश्न को सुधारों के बुनियाद में रखा। आयोग ने इस मुद्दे पर 'शासन में नैतिकता' संबंधी अपनी चौथी रिपोर्ट में विस्तार से चर्चा की है। यह रिपोर्ट बहुत महत्वपूर्ण है और शासन में पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए राजनीतिक-न्यायिक-प्रशासनिक सुधारों से लेकर ईमानदार लोक सेवकों को संरक्षण देने तक अनेको सिफ़ारिशें और सुझाव देती है।

यह सच यह है कि इनमें से कुछ सिफारिशों को लागू किया गया है और कुछ और लागू होने की प्रक्रिया में है। लेकिन अफ़सोस की बात यह है कि इसकी ज्यादातर सिफ़ारिशों को अनदेखा कर दिया गया या उन पर राजनीतिक सहमति न बन पाने के कारण कार्रवाई नहीं हो पाई। निश्चय ही, भ्रष्टाचार के सांस्थानिक स्वरूप ग्रहण करते चले जाने और इस व्यवस्था में निहित स्वार्थी तत्वों के हितों के कारण इन सुधारों को आगे बढ़ा पाना भी अपने आप में एक चुनौती है। लेकिन अच्छी बात यह है कि हाल के वर्षों में देश में भ्रष्टाचार से निर्णायक रुप से निपटने के मुद्दे पर न सिर्फ़ एक बहुत ताक़तवर जनमत तैयार हुआ है बल्कि आम लोगों में जागरुकता बढ़ी है। आम लोग भ्रष्टाचार को और सहने के लिए तैयार नहीं है और इसके कारण राजनीतिक वर्ग को भी भ्रष्टाचार के प्रति 'शून्य सहनशीलता' (जीरो टालरेंस) की नीति की घोषणा करनी पड़ रही है।

यह सिर्फ संयोग नहीं है कि नव उदारवादी आर्थिक सुधारों को शुरू हुए इस साल जब दो दशक पूरे हो चुके हैं। शीर्ष पदों पर भ्रष्टाचार का मुद्दा देश के सामने सबसे बड़े सवाल के रूप में खड़ा है। हालांकि आज से दो दशक पहले जब नव उदारवादी आर्थिक सुधारों की शुरुआत हुई थी तो इन सुधारों के पक्ष में सबसे बड़ा तर्क यह दिया गया था कि इससे लाइसेंस-कोटा-परमिट राज का खात्मा हो जायेगा और इस कारण

भ्रष्टाचार पर अंकुश लग जायेगा। लेकिन पिछले दो दशकों के अनुभव से साफ है कि भ्रष्टाचार खत्म होना तो दूर, उल्टे उसका आकार और प्रसार बहुत ज्यादा बढ़ता जा रहा है।

तथ्य यह है कि भ्रष्टाचार और घोटाले एक नियम की तरह हो गए हैं। कोई भी सरकारी नीति, फैसला, परियोजना और कार्यक्रम की कल्पना भ्रष्टाचार के बिना नहीं की जा सकती है। यही नहीं, भ्रष्टाचार का एक तरह से केंद्रीकरण -सा हो गया है। शासन और प्रशासन के हर स्तर पर हर काम और फ़ैसले की कीमत तय हो गई है। हर काम और फ़ैसले में सबका हिस्सा तय है। कहतें हैं कि फैसले तक पहुंचने की प्रक्रिया में हर दस्तखत की कीमत है और सबका हिस्सा तय है।

यह यूं ही नहीं है कि पिछले दो दशकों से एक के बाद दूसरे बड़े घोटाले ने राष्ट्रीय जीवन को उद्वेलित कर रखा है। भ्रष्टाचार और घोटाले राष्ट्रीय पहचान बनते जा रहे है। आश्चर्य नहीं कि ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल की ताज़ा रिपोर्ट में भारत भ्रष्ट देशों की सूची में तीन पायदान और नीचे गिरकर सत्तासीवें स्थान पर पहुंच गया है। यहां तक की भ्रष्ट देशों की सूची में भारत अफ्रीका और एशिया के कई देशों से भी नीचे है। इसका संबंध निश्चय ही, पिछले कुछ सालों में शीर्ष पदों पर भ्रष्टाचार के एक के बाद दूसरे बड़े मामले सामने आने से है।

क्या भ्रष्टाचार का संबंध नव उदारवादी आर्थिक सुधारों से है या यह एक तरह का याराना पूंजीवाद का नतीजा है? ऐसा लगता है कि इन सुधारों के साथ भ्रष्टाचार का भी पूरी तरह से उदारीकरण हो गया है। इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि आज़ादी के बाद से भारत से जो कालाधन अवैध तरीके से देश से बाहर गया, उसका 68 प्रतिशत 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद से गया है। कुछ साल पहले जारी हुई ग्लोबल फिनान्सियल इंटीग्रिटी (जीएफआई) रिपोर्ट के मुताबिक 1948 से 2008 के बीच अवैध तरीके से देश से लगभग 213 अरब डॉलर की रकम विदेशों में खासकर आफशोर बैंकों में चली गई। अगर इस रकम को मुद्रास्फीति के साथ एडजस्ट करें तो भ्रष्ट और घोटालेबाज मंत्रियों, नेताओं, अफसरों, उद्योगपतियों, व्यापारियों, ठेकेदारों और माफियाओं ने इन साठ वर्षों में कोई 432 अरब डॉलर की रकम लूटकर विदेशों में भेज दिया।

लेकिन उससे महत्वपूर्ण बात यह है कि इसका 68 प्रतिशत यानी 314 अरब डॉलर आर्थिक सुधारों के शुरू होने के बाद गया है। इस रिपोर्ट के मुताबिक, 1991 के आर्थिक सुधारों के पहले जहां प्रतिवर्ष औसतन 9.1 प्रतिशत की दर से अवैध कालाधन विदेशी बैंकों में जा रहा था वह सुधारों की शुरुआत के बाद उछलकर सीधे 16.4 प्रतिशत सालाना की दर से जाने लगा। यही नहीं, इस रिपोर्ट के अनुसार, 2002 से 2008 के बीच औसतन हर साल 16 अरब डालर यानी 736 अरब रुपये का कालाधन अवैध तरीके से देश से बाहर चला गया। यहां एक और तथ्य पर गौर करना जरूरी है कि देश में भ्रष्टाचार और घोटलों के अलावा सार्वजनिक संपदा की लूट से कमाए गए कालेधन का सिर्फ 72 प्रतिशत ही विदेशों में जाता है, बाकि 28 फीसदी देश में ही रह जाता है।

ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल की ताज़ा रिपोर्ट में भारत भ्रष्ट देशों की सूची में तीन पायदान और नीचे गिरकर सत्तासीवें स्थान पर पहुंच गया है। यहां तक की भ्रष्ट देशों की सूची में भारत अफ्रीका और एशिया के कई देशों से भी नीचे है। इसका संबंध निश्चय ही, पिछले कुछ सालों में शीर्ष पदों पर भ्रष्टाचार के एक के बाद दूसरे बड़े मामले सामने आने से है।

जीएफआई रिपोर्ट के अनुसार, देश के कुल जीडीपी का लगभग 50 प्रतिशत कालेधन की अर्थव्यवस्था है। कालेधन की इस भूमिगत अर्थव्यवस्था का बड़ा हिस्सा भ्रष्टाचार, घोटालों, सार्वजनिक संपदा की लूट और टैक्स चोरी के जरिये पैदा होता है। माइनिंग लाइसेंसों और पट्टों की मारामारी मची हुई है। यह मारामारी इसलिए तेज़ हुई है क्योंकि उदारीकरण के बाद माइनिंग क्षेत्र को निजी क्षेत्र के लिए खोल दिया गया। इसके खुलते ही लौहअयस्क से लेकर अन्य खनिजों के खनन के लिए अधिक माइनिंग पट्टों और लाइसेंसों को कब्जाने की कंपनियों में होड़ लग सी गई है। लेकिन प्राक्रतिक संसाधनों की दुर्लभता के कारण उन्हें हासिल करने के लिए दिए जाने वाले 'सुविधा शुल्क' में भी उसी अनुपात में वृद्धि हुई

पिछले दस-पंद्रह वर्षों में इस वैध और अवैध खनन को मंत्रियों-अफसरों और कंपनयिों ने सोने का अंडा देनेवाली मुर्गी की तरह इस्तेमाल किया है। यही नहीं, माइनिंग उद्योग की ताकत का अंदाजा इन आरोपों से भी लगाया जा सकता है कि देश के कई राज्यों जैसे- कर्नाटक, झारखंड, आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़ और ओडिशा में वास्तव में ये माइनिंग कंपनियां और खनन माफिया ही सरकारें चला रहे हैं। इसे ही कुछ अर्थशास्त्री और विश्लेषक याराना पूंजीवाद (क्रोनी कैपिटलिज्म) यानी रिश्तेदारों, चहेतों और करीबियों के एक छोटे से समूह को वैध-अवैध तरीकों से फायदा पंहुचानेवाला पूंजीवाद कहते हैं। कहने की जरूरत नहीं है कि उदारीकरण के बाद यह क्रोनी कैपिटलिज्म कम होने के बजाय फला-फूला है।

असल में, नव उदारवादी आर्थिक सुधारों के साथ भ्रष्टाचार में वृद्धि कई कारणों से हुई है। पहली बात तो यह है कि यह धारणा अपने आप में एक मिथ है कि लाइसेंस-कोटा-परमिट राज खत्म हो जाने से भ्रष्टाचार खत्म हो जायेगा। सच यह है कि भ्रष्टाचार पूंजीवाद व्यवस्था का अभिन्न हिस्सा है। लाइसेंस-कोटा-परमिट राज भी एक तरह का नियंत्रित पूंजीवाद था। जिसमें हर लाइसेंस-कोटा-परमिट की क़ीमत थी। लेकिन नियंत्रित और बंद अर्थव्यवस्था होने के कारण दांव इतने उंचे नहीं थे, जितने आज हो गए हैं। नव उदारवादी अर्थव्यवस्था में भी लाइसेंस-कोटा-परमिट राज खत्म नहीं हुआ बल्कि कुछ मामलों में उसका रूप थोड़ा बदल गया है जबकि कुछ में अब भी वही पुराना लाइसेंस-कोटा-परमिट है। अलबत्ता, अब उनका आकार बहुत बढ़ गया है।

इस कारण इस ख़बर से शायद ही किसी को हैरानी हुई होगी कि दुनिया के भ्रष्टतम देशों की काली सूची में भारत तीन पायदान और खिसककर 87 वें स्थान पर पंहुच गया है। यह जानकर भी शायद ही किसी को हैरानी होगी कि ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल द्वारा इस सप्ताह जारी भ्रष्ट देशों सूची में भारत का स्थान चीन, ब्राज़ील, भूटान, दक्षिण अफ्रीका, बोत्सवाना जैसे दर्जनों देशों से भी नीचे हैं। असल में, यह भ्रष्टाचार के प्रति सार्वजनिक जीवन में बढ़ती स्वीकार्यता और

सहनशीलता का सबूत है। आश्चर्य नहीं कि सुप्रीम कोर्ट को भी हाल में आजिज आकार तंज करना पड़ा कि क्यों न भ्रष्टाचार को कानूनी मान्यता दे दी जाए?

लेकिन भ्रष्टाचार को आधिकारिक तौर पर कानूनी मान्यता भले हासिल नहीं हो पर सभी व्यवहारिक अर्थों में भ्रष्टाचार को सांस्थानिक और अलिखित कानूनी मान्यता मिल चुकी है। आज भ्रष्टाचार सार्वजनिक जीवन के रग-रग में इस क़दर समा गया है कि वह उसकी सबसे बड़ी पहचान बन गया है। यह एक आम धारणा बन चुकी है कि सत्ता के शीर्ष से लेकर उसके सबसे निचले पायदान तक बिना हथेली गर्म किए या 'कट' दिए या 'सुविधा शुल्क' चुकाए कोई काम या फाइल आगे नहीं बढ़ सकती है।

अब तो हालत यह हो गई है कि राजनीतिक भ्रष्टाचार को लेकर कोई शिकायत करने पर राजनेता और पार्टियां, दूसरी पार्टियों के भ्रष्टाचार के उदाहरण गिनाने लगती है। इस आरोप-प्रत्यारोप में मूल मुद्दा अक्सर पीछे छूट जाता है। भ्रष्टाचार के आरोपों में अब शायद ही कोई मंत्री या मुख्यमंत्री या केंद्रीय मंत्री इस्तीफा देता है। यह भ्रष्टाचार के प्रति बढ़ती सहनशीलता का ही एक और प्रमाण यह है कि पिछले कुछ महीनों में सूचना के अधिकार का इस्तेमाल करके सरकारी संस्थानों में भ्रष्टाचार और अनियमितताओं का पर्दाफाश करने वाले कई कार्यकर्ताओं की हत्या कर दी गई लेकिन किसी के कान पर जूं तक नहीं रेंगी।

हद तो यह कि सार्वजनिक तौर पर इस धारणा का धीरे-धीरे मान्यता मिलती जा रही है कि सार्वजनिक-सांस्थानिक व्यवस्था की गतिशीलता और बेहतर कार्यक्षमता के लिए भ्रष्टाचार की 'चिकनाई' (ग्रीज) जरूरी हो गई है। इसे एक तरह का अनिवार्य 'प्रोत्साहन' मान लिया गया है जो नौकरशाही और अन्य सार्वजनिक संस्थाओं को सक्रियता की शर्त बन गया है। आश्चर्य नहीं कि अगर किसी के ख़िलाफ़ भ्रष्टाचार की शिकायत करने पर आपको यह तर्क़ सुनने को मिले कि कोई बात नहीं, काम तो हो रहा है। यानी भ्रष्टाचार नहीं, काम देखिये। गरज यह कि विकास चाहिए तो भ्रष्टाचार सहने के लिए तैयार रहिये क्योंकि उसके बिना व्यवस्था काम ही नहीं करती है।

इस तरह, भ्रष्टाचार अब सार्वजनिक जीवन का एक ऐसा सत्य है जिसके अलावा बाकी सभी बातें मिथ्या लगती हैं। जब प्रधानमंत्री भ्रष्टाचार के प्रति शून्य सहनशीलता (जीरो टालरेंस) की बातें करते हैं, सुप्रीम कोर्ट के जज भ्रष्टाचार पर तंज करते हैं, विपक्षी दल के नेता स्वीस बैंकों से कालाधन वापस लाने की मुहिम चलाने का ऐलान करते हैं और मीडिया में भ्रष्टाचार के किस्से छपते हैं तो यह सभी बातें भ्रष्टाचार के अमर सत्य के आगे 'मिथ्या' लगती है। यह इतना बड़ा 'सच' है कि भ्रष्टाचार के खिलाफ जितने अभियान चलते हैं, जितने कानून बनते हैं, जितने छापे पड़ते हैं, भ्रष्टाचार के तहत

सवाल है कि क्या भ्रष्टाचार को और बढ़ने से रोका या उस पर अंकुश लगाया जा सकता है? हालांकि इस सवाल पर देश में एक गहरी निराशा का माहौल है लेकिन इसके साथ यह भी सच है कि हाल के वर्षों में भ्रष्टाचार के मुद्दे पर नागरिक समाज के साथ-साथ न्यायिक सक्रियता और राजनीतिक पहलकदमियों से उम्मीद बंधी है कि भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाया जा सकता है।

मांगी जाने वाली घूस, सुविधा शुल्क या किकबैक की रकम उसी अनुपात में और बढ़ जाती है।

सिद्धांत बिलकुल स्पष्ट है: ''जितना अधिक जोखिम, उतनी बड़ी घूस की रकम।'' यही कारण है कि कई विश्लेषक भ्रष्टाचार को मुद्दा बनाये जाने या इसे रोके जाने के उपाय करने को ग़ैरजरूरी मानने लगे है। उनके मुताबिक इससे कोई फायदा तो नहीं होता उल्टे बेवजह भ्रष्टाचार की लागत बढ़ जाती है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि सार्वजनिक जीवन और संस्थाओं से भ्रष्टाचार के निर्मूलन को लेकर कैसी निराशा और हताशा का माहौल है।

सवाल है कि क्या भ्रष्टाचार को और बढ़ने से रोका या उस पर अंकुश लगाया जा सकता है? हालांकि इस सवाल पर देश में एक गहरी निराशा का माहौल है लेकिन इसके साथ यह भी सच है कि हाल के वर्षों में भ्रष्टाचार के मुद्दे पर नागरिक समाज के साथ-साथ न्यायिक सक्रियता और राजनीतिक पहलकदमियों से उम्मीद बंधी है कि भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाया जा सकता है।

संस्थागत भ्रष्टाचार से मुकाबले के लिए एक ओर सूचना के अधिकार के जरिये शासन को पारदर्शी बनाने और दूसरी ओर, लोकपाल जैसी संस्था के गठन और व्हिसल-ब्लोअर कानून से ईमानदार लोकसेवकों को संरक्षण जैसे उपायों से विश्वास पैदा हुआ है। इसके साथ ही, सिटिजन चार्टर कानून से नागरिकों के सशक्तीकरण, शासन-प्रशासन नागरिकों के प्रति जवाबदेह बनाने और लोकसेवकों को प्रभावी और सक्षम बनाने में मदद मिलेगी। लेकिन इसके साथ ही आर्थिक नीतियों के स्तर पर याराना पूंजीवाद से निपटने की व्यवस्था को भी मजबूत करना पड़ेगा और भ्रष्टाचार के आपूर्ति पक्ष यानी निजी क्षेत्र को भी भ्रष्टाचार विरोधी निगरानी तंत्र के दायरे में लाना होगा। सोशल ऑडिट को प्रभावी बनाने से लेकर सरकारों को और अधिक जवाबदेह बनाने के लिए मिथ्या, दावा; कानून जैसे उपायों पर भी विचार किया जाना चाहिए।

लेकिन बावजूद इसके इसमें कोई दो राय नहीं हैं कि देश में भ्रष्टाचार की जड़ें जितनी गहरी और व्यापक हो चुकी हैं वे सिर्फ प्रशासनिक सुधारों से नहीं बल्कि व्यापक राजनीतिक सुधारों खासकर चुनावी सुधारों और राजनीतिक दलों के लोकतंत्रीकरण से संभव हैं। अच्छी बात यह है कि देश में भ्रष्टाचार खासकर संस्थागत भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ एक व्यापक जनभावना दिखाई पड़ रही हैं। यह जनमत राजनीतिक तंत्र पर भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ पारदर्शिता, जवाबदेही और कड़े दंड के त्रिकोण पर आधारित सुधारों की प्रक्रिया को तेज़ करने का दबाव बनाए हुए हैं। इससे प्रशासनिक सुधारों की गति तेज़ हुई है। दोहराने की जरूरत नहीं है कि इस मौके पर मोइली आयोग की सिफ़ारिशों का महत्व और प्रासंगिकता और बढ़ गई है। ❑

(लेखक भारतीय जनसंचार संस्थान (आईआईएमसी), नयी दिल्ली में पत्रकारिता के एसोसिएट प्रोफेसर हैं और हिंदी पत्रकारिता पाठ्यक्रम के पाठ्यक्रम निदेशक हैं। ई-मेल : apradhan28@gmail.com **)**

संघ/राज्य लोक सेवा आयोग (प्रारम्भिक) परीक्षा हेतु

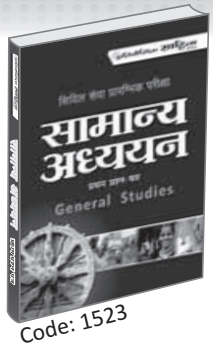

Code: 1523

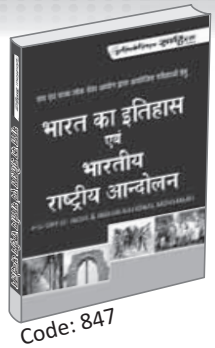

Code: 847

प्रथम प्रश्न-पत्र

1523 सिविल सेवा प्रा. परीक्षा सामान्य अध्ययन
1524 सिविल सेवा प्रा. परीक्षा सामान्य अध्ययनः हल प्रश्न–पत्र
847 भारत का इतिहास एवं भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन
849 भारतीय राजव्यवस्था एवं भारत का संविधान
A1076 भूगोल
850 विश्व एवं भारत का भूगोल
A1091 भारतीय अर्थव्यवस्था
851 भारतीय अर्थव्यवस्था
A1089 सामान्य विज्ञान
853 सामान्य विज्ञान
172 भारतीय कला एवं संस्कृति
A1090 पारिस्थितिकी, पर्यावरण, जैव–विविधता एवं विज्ञान–प्रौद्योगिकी
1393 सिविल सेवा प्रा. परीक्षा सामान्य अध्ययनः प्रैक्टिस वर्क-बुक

द्वितीय प्रश्न-पत्र

A1077 सिविल सर्विसेज एप्टीट्यूड टेस्ट
A1080 तार्किक एवं विश्लेषणात्मक योग्यता
A1078 समंक व्याख्या एवं पर्याप्तता
A1096 मौलिक आंकिक योग्यता
852 सामान्य मानसिक योग्यता
766 सामान्य बुद्धि एवं तर्कशक्ति परीक्षण
A723 तर्कशक्ति परीक्षण
A939 सामान्य बुद्धि एवं तर्क परीक्षण

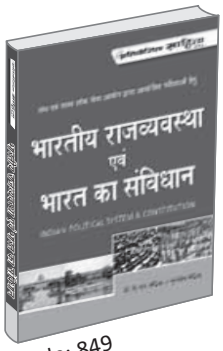

Code: 849

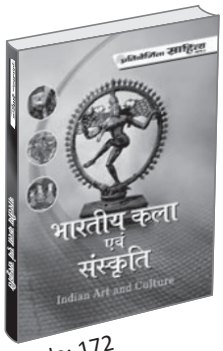

Code: 172

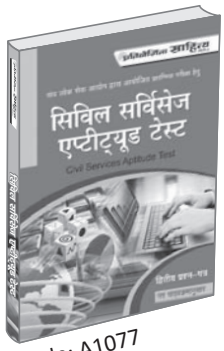

Code: A1077

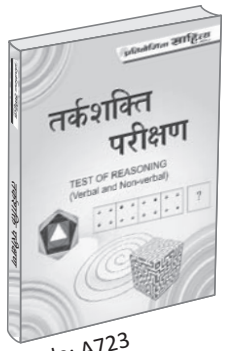

Code: A723

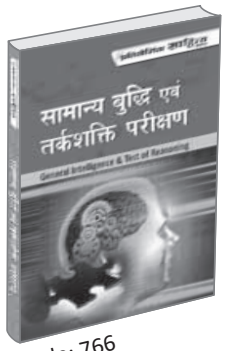

Code: 766

मुख्य परीक्षा हेतु

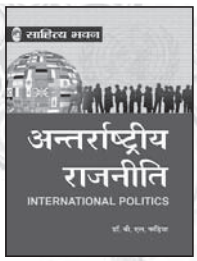

Code: 057

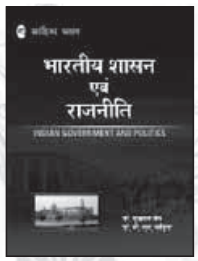

Code: 085

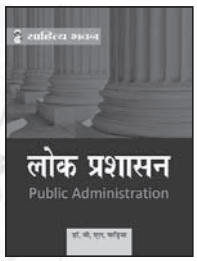

Code: 059

Code: 1333

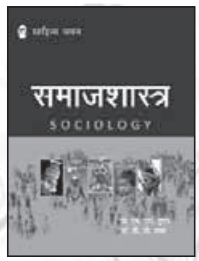

Code: 096

Code: 298

प्रतियोगिता साहित्य सीरीज

For More information Call : +91 89585 00222 info@psagra.in www.psagra.in

YH-267/2013

वैश्विक नियमन के युग में प्रशासन

बीजू पॉल अब्राहम

वैश्विक वित्तीय संकट और इसके परिणामों ने वैश्विक सरकारों को यह अहसास कराया है कि वे भी वैश्विक वित्त, उत्पादों और सेवा बाज़ार से आमतौर पर इतने ज्यादा प्रभावित हुए हैं, जितना वे कभी नहीं थें। विश्व की सरकारों ने भी वैश्विक संकट के प्रति ध्यान देना और आपस में सामंजस्य बनाना शुरू किया है और वे सरकारों के अंदर जी 20 जैसे मंचों पर विस्तृत चर्चा कर रही है। हालांकि इन सामंजस्यपूर्ण हस्तक्षेपों के प्रभाव कुछ-कुछ नज़र भी आने लगे हैं, लेकिन इसमें विकासशील देशों का प्रशासनिक ढांचे से जुड़ी उलझनें मौजूद हैं, जैसे वैश्विक नियमन का प्रसार और घरेलू नियमनों के मानक पर होने वाली कठिनाइयां।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया के जोर पकड़ने के दो प्रमुख कारण रहें हैं। पहला, खासकर विकासशील देशों में वैश्विक स्तर पर व्यापार और निवेश अवरोधों को कम करना और दूसरा, तकनीक का अनवरत विकास, जिससे सेवाओं की वैश्विक पहुंच सुनिश्चित हुई। जैसा कि ज्ञात है, सरकारों ने विश्व स्तर पर अपने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को विकसित करने की कोशिशें की है और अपने घरेलू बाज़ार में निवेश का रास्ता भी खोला है। इससे निवेश के लिए पूंजी की गत्यात्मकता काफी बढ़ी है। और साथ ही साथ सरकारों के बरअक्स निवेश की शक्तियां भी बढ़ी है। व्यापार के और निवेश के मोर्चे पर सरकारों ने ऊंचें मानक इस डर में तय किये कि कहीं निवेश भाग न जाएं और हर जगह एक निवेश मित्र माहौल बनाने की कोशिशें की गयीं। अपनी अर्थव्यवस्थाओं में विदेशी निवेश को प्रोत्साहन देने के लिए वैश्विक नियमनों के साथ-साथ घरेलू नियमनों में भी सामंजस्य देखा जा रहा है। सरकरों में एक-दूसरे के बीच नियमनों की प्रविधियां कम करके दूसरे राज्यों के साथ इस बात की प्रतिस्पर्धा भी देखी जाती है, ताकि ऐसी स्थिति बनायी जा सके जिसमें राष्ट्रीय परिदृश्य में घरेलू उत्पादकों और उपभोक्ता हित में जो नियमन जरूरी है, उहें या तो खत्म कर दिया जाए या फिर उनमें संशोधन कर उन्हें अनुकूल बनाया जाए।

वैश्वीकरण के कुछ दूसरे नकारात्मक प्रभाव भी हैं। प्रदूषण और पर्यावरण क्षरण के प्रभाव राष्ट्रीय सीमाओं के बाहर खासकर क्षेत्रीय सीमाओं और उससे बाहर भी महसूस किये जा रहे हैं। बढ़ती हुई वैश्विक यात्राओं से नयी किस्म के बीमारियां एक से दूसरी जगह फैल रही है। ऐसी वैश्विक समस्याओं के वैश्विक समाधान जरूरी होते हैं और इनके समाधान के लिए वैश्विक स्तर पर भी सामंजस्य की जरूरत होती है।

सामंजस्य और इसके प्रभाव

वैश्विक नियमन में ऐसा कुछ भी नया नहीं है, सिवाय इसके कि इसका प्रभाव हाल के वर्षों में काफी व्यापक हुआ है। विविध क्षेत्र जैसे व्यापार, निवेश, बैंकिंग, पर्यावरण, स्वास्थ्य और बौद्धिक संपदा अधिकार आदि में सरकारों ने वैश्विक मानकों को स्वीकार किया है, जो घरेलू स्तर पर पहले से अपनाये जाते रहे हैं। जहां तक सामंजस्य का सवाल है, इसके कुछ लाभ हैं, तो कुछ क़ीमतें भी चुकानी पड़ती हैं। वैश्विक मानक घरेलू फर्मों को उनकी क्षमताओं के मामले में बाज़ार का विस्तार करने, घरेलू बाज़ार में प्रतिस्पर्धा करने और कभी-कभी घरेलू उपभोक्ताओं को बढ़ते मूल्य की वजह से उत्पाद तक पहुंचने से रोकती भी हैं। इस प्रकार नियमनों का वैश्वीकरण विश्व स्तर पर प्रशासनिक प्रणाली पर एक अतिरिक्त जिम्मेदारी भी डाल देती हैं। विकसित देशों के प्रशासकों पर यह चुनौती दो स्तरों की हैं। पहली, उन्हें न सिर्फ़ वैश्विक नियमों की जटिलताओं को राष्ट्रीय सदर्भों में समझना पड़ता है, बल्कि उन्हें एक राष्ट्रीय प्रशासनिक यांत्रिकी भी विकसित करनी होती है, ताकि वे ऐसे वैश्विक नियमनों की जटिलताओं से उत्पन्न कुछ कल्याणकारी मानकों में कमी से जूझ सकें। वैश्विक वित्त संकट ने वैश्विक स्तर पर एक ऐसी समझ पेश की है कि वैश्विक समाज के बावजूद घरेलू नीतियां वैश्विकरण के असफल होने के बाद के परिणामों के प्रति ज्यादा संवेदनशील होती है।

शीत युद्ध के बाद से ही नियमनों का सामंजस्य गहराता गया है। पूर्वी गुट के टूटने और अर्थव्यस्था के खुल जाने के बाद, जो तब एक सुरक्षित दीवार के अंदर संरक्षित की गयी थी, वैश्विक व्यापार और निवेश में गुणात्मक वृद्धि दर्ज की गयी है। इस स्थिति में बहुपक्षीय संगठनों की भूमिका में इजाफा किया गया है, जो वैश्विक व्यापार बढ़ाने, पर्यावरणीय और वित्तीय नियमनों को सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार है। इस दिशा में सन, 1995 में विश्व व्यापार संगठन की स्थापना एक महत्वपूर्ण पड़ाव था। पूर्व में स्थापित गैट समझौता जो तब तक निर्मित वस्तुओं के व्यापार तक सीमित था, उसका विस्तार अब वैश्विक बहुपक्षीय व्यापार संगठन तक हो गया, जो सेवा व्यापार और घरेलू नियमनों से लेकर बौद्धिक संपदा अधिकार के संरक्षण का न्यूनतम मानक लागू करता था। व्यापार से जुड़ा निवेशपक्षी समझौता (ट्रिम्स) में डब्ल्यूटीओ सदस्यों देशों की जरूरत होती थी, ताकि उनके निवेश नियमनों को उदार बनाया जा सके और विदेशी निवेशों के लिए आसान बनाया जा सके।

व्यापार उदारीकरण के अतिरिक्त इस क्रम में श्रम का समायोजन और पर्यावरण पर भी काफी जोर दिया। विकसित देशों द्वारा सफलता प्रतिरोध के बाद अंतर्राष्ट्रीय व्यापार नियमनों में न्यूनतम पर्यावरण मानक और श्रम मानक को लागू किया गया। पर्यावरण के क्षेत्र में क्योटो प्रोटोकॉल एक ऐसा वैश्विक प्रयास था, जिसमें लक्ष्य के मुताबिक उत्सर्जन का स्तर प्राप्त करने और उसे कम करने का संकल्प दुहराया गया। हालांकि यह जरूरी नहीं था, फिर भी भारत जैसे देशों ने वैश्विक मानकों के अनुरूप ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को करने का अपना खुद का लक्ष्य तय किया। अंतर्राष्ट्रीय वित्त संस्थाएं जैसे बैंक ऑफ इंटरनेशनल सेटलमेंट्स ने भी प्रचुर पूंजी प्रदान करने और सदस्य देशों में बैंकों की जरूरतों के मुताबिक पूंजी संरक्षित रखने के प्रयास शुरू किये।

जहां एक ओर नीतियों में बढ़ते सामंजस्य ने बिना शक वैश्विक व्यापार और निवेश को बढ़ावा दिया और यह सुनिश्चित किया कि वैश्विक समस्याएं जैसे पर्यावरण आदि को हल करने के सामंजस्यपूर्ण प्रयास किये जाएं, इस बात पर गहरी चिंता भी व्यक्त की गयी कि सामंजस्पूर्ण मानकों के प्रभाव के मद्देनजर सामंजस्य का तरीका वस्तुत: कैसा हो, वैश्विक समझौतों का पालन करना राष्ट्रीय विधेयकों के क्रियान्वयन से ज्यादा कठिन और अलग किस्म का होता है। अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के अंदर सरकारी प्रतिनिधियों द्वारा बातचीत के दौरान ऐसे समझौतों पर व्यापक तौर पर वाद-विवाद और चर्चाएं नहीं हो पाती, जैसा कि घरेलू विधेयकों के पास करने के समय पालन किया जाता है। भारत सहित कई देशों में सरकार द्वारा अंतर्राष्ट्रीय समझौतों पर हस्ताक्षर करने के बाद भी उन्हें अमल में लाये जाने के पूर्व राष्ट्रीय विधेयक द्वारा स्वीकृत नहीं किया जाता। इससे ऐसे समझौतों की वैधता पर ही प्रश्नचिन्ह लग जाते हैं।

कतिपय अंतर्राष्ट्रीय समझौतों का प्रभाव कम कल्याणकारी होता है, जिसके कारण विश्व के देशों की सरकारें उनका पालन करने में खुद को असमर्थ पाती हैं। उदाहरण के लिए बौद्धिक संपदा अधिकार समझौते के व्यापार से जुड़े मुद्दों ने विकासशील देशों की दवा कंपनियों को पेटेंट दवाओं की जेनेरिक वर्जन बनाने में काफी समस्याएं पैदा कर दी हैं। हालांकि उक्त समझौते में ऐसे देश जो अपने देश में स्वास्थ्य आकस्मिकी की समस्याएं झेल रहें हैं, उन्हें पेटेंट के नियमों की अनदेखी कर दवाओं तक पहुंचने के प्रावधान दिये गए हैं, उन्हे स्वयं अंतर्राष्ट्रीय नियमनों की सहुलियतों के अनुरूप ऐसे काम करने होते हैं ताकि दूसरे देशों द्वारा प्रतिक्रियात्मक प्रतिबंधों का सामना न करना पड़े। जैसा कि विश्व के अधिकाधिक देश क्षेत्रीय व्यापार समझौतें से बंधे हैं, उन्हें पर्यावरण मानकों और श्रम मानकों के मामलें में छूट देने को बाध्य किया जाता है, जिससे घरेलू उद्योग और श्रमिकों के हित प्रभावित होते हैं।

वैश्विक नियमनों के सामंजस्य के प्रभावों ने इस अपरिहार्य प्रश्न का जन्म दिया है कि कैसे विकासशील देशों की प्रशासनिक क्षमताओं को उभरती चुनौतियों का सामना करने के योग्य विकसित किया जाए। जाहिर है, प्रशासन के तीन बिंदु ऐसे हैं जो भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए सामने रखे जा सकते हैं। क्षमता निर्माण, ज्ञान प्रंबधन और मौजूदा संदर्भ में उत्तरदायित्व का विकास।

प्रशासनिक क्षमताओं का सुधार

वैश्विक नियमनों के सामंजस्य के प्रभावों ने इस अपरिहार्य प्रश्न का जन्म दिया है कि कैसे विकासशील देशों की प्रशासनिक क्षमताओं को उभरती चुनौतियों का सामना करने के योग्य विकसित किया जाए। जाहिर है, प्रशासन के तीन बिंदु ऐसे हैं जो भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए सामने रखे जा सकते हैं। क्षमता निर्माण, ज्ञान प्रंबधन और मौजूदा संदर्भ में उत्तरदायित्व का विकास। तेज़ी से होते तकनीकी विकास अक्सर सरकारों की क्षमताओं से पार चले जाते हैं और वे इसकी जटिलताओं को समझ नहीं पातीं। वे सार्वजनिक हित में इसकी प्रतिक्रिया में कदम उठाने लगती हैं। जीव विज्ञान में निरंतर विकास से बीमारियों को ठीक करने में क्रांतिकारी सफलता मिली है, लेकिन इससे कई नैतिक सवाल भी उठने लगे हैं। संचार तकनीक के विकास ने सूचनाओं तक पहुंच बढ़ा दी है, लेकिन इससे निजता हनन के सवाल भी उठने लगे हैं। ऊर्जा तकनीक जैसे हाल के वर्षों में हाइड्रोलिक फ्रैक्चरिंग और शेल गैसों की ड्रिलिंग में विकास से वाहनों के लिए वैकल्पिक इंधन के विकल्प सामने आये हैं, लेकिन इनके पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों पर चिताएं पैदा कर दी हैं। इन विविध क्षेत्रों में तकनीक के विकास के क्रम में जरूरी है कि सरकारें उचित नियमन बनाएं। इनके संदर्भ में नीतियों का सामंजस्य न सिर्फ घरेलू स्तर पर बल्कि वैश्विक स्तर पर होना चाहिए। बहरहाल, यदि नियमनों को प्रभावी बनाना है तो इन्हें तकनीक के विकास के सापेक्ष रखते हुए प्रशासनिक प्रणाली में बेहतर क्षमताओं के मार्ग भी खोलने होगें। तकनीकी योजनाओं और पूर्वानुमानों के क्षमताओं में वृद्धि इनके नियमनों के संदर्भ में सक्रियता की मांग करती हैं। तकनीकी विकास और इसके प्रभावों के बारे में भरपूर समझ भी उन सरकारों के लिए महत्वपूर्ण हैं, जो वैश्विक नियमनों के वक्त अंतर्राष्ट्रीय चर्चाओं में भाग लेती हैं।

जहां पूर्वानुमान और तकनीकी विकास के आकलन करने वाले संगठन मौजूद हैं, वहीं जो एक चीज नज़र नहीं आती वह है, तकनीकी नियमनों से संबंधित सरकारी विभागों में एक संतोषपूर्ण समन्वित कार्य का अभाव। नियमन बहुधा तकनीक से पीछे रह जाते हैं। पुर्वानुमानों और नियमनों के व्यापक समन्वितिकरण से ही तकनीकी विकास के साथ-साथ तालमेल बिठाना सुनिश्चित किया जा सकता है और यह निवेशकों और उपभोक्ताओं दोनों के लिए एक स्थायी नियमयुक्त वातावरण का निर्माण कर सकता है। इस समन्वित प्रक्रिया में मौजूदा नियमन ढांचे में बहुत ज्यादा प्रशासनिक सुधार और मूलभूत बदलाव की आवश्यकता नहीं है। बेहतर समग्रता संयुक्त कार्यसमूहों के माध्यम से भी प्राप्त की जा सकती है। इनके लोक सेवकों और तकनीकी संगठनों को शामिल कर विशिष्ट क्षेत्रों में तकनीकी विकास का पूर्वानुमान लगाते हुए और इस दिशा में नियमनों की जटिलताओं को भांप कर यह काम किया जा सकता है। इसके तहत विभिन्न विभागों में कार्यरत वैज्ञानिकों को एक निश्चित अवधि के लिए शामिल कर प्रभावी नियमनों को लागू करने के लिए अधिकारियों को शामिल की मदद की जा सकती है। इसके अलावा देश-विदेश के सरकारी विभागों में कार्यरत अधिकरियों को शामिल कर उन्हें तकनीकी विकास के समरूप ढाला जा सकता है, जहां नियमनों की जटिलताएं अक्सर देखी जा सकती हैं।

ज्ञान प्रबंधन एक अन्य क्षेत्र है, जिस पर ध्यान दिया जाना जरूरी है। पूर्व में जब तकनीकी विकास की गति अपेक्षाकृत धीमी थी, प्रशासक विषय के विशेषज्ञों से सलाह लेकर ऐसे तकनीकी विकास की जटिलताओं का सामना करते थे। वे तब ऐसी नीतियां बनाते थे ताकि बदलावों के नकारात्मक प्रभावों के ज्यादा से ज्यादा कम किया जा सके। हालांकि द्रुत गति से हो रहे तकनीकी बदलावों के समयानुरूप बदलते तकनीकी वातावरण से साम्य बिठाना काफी मुश्किल होता है। अगर इन बदलावों को प्रभावी बनाना है, तो प्रशासकों को त्वरित बदलावों को अपनें अनुरूप ढालना जरूरी है। तेजी से बदलते वातावरण से प्रभावी सकारात्मक परिणाम प्राप्त करने के लिए प्रचूर सूचना और ज्ञान प्रबंधन प्रणाली जरूरी सूचनाओं के क्रियान्वयन के लिए प्रशासकों के पास होना आवश्यक है। ज्ञान प्रबंधन प्रणाली संगठनों को संगठनों के अंदर विभिन्न स्तरों पर खास विषयों पर अधिग्रहण करने और समस्याओं के त्वरित निष्पादन के लिए जरूरी तत्व है। बड़ी प्रशासनिक प्रणालियों में एक किस्म का अनकहा ज्ञान संचित होता है और समस्याओं से कैसे निपटें, इसमें सक्षम बनाता है। अक्सर यह ज्ञान एक प्रशासक के पास होता है या फिर एक सरकारी विभाग में होता है, जो कम ही सरकार के अन्य स्तर तक पहुंच पाता है और इन सूचनाओं से लाभ नही उठाया जाता। बड़े निगमों और यहां तक कि बाहर की कुछ सरकारों ने ऐसी प्रभावी ज्ञान प्रणाली विकसित की है, जिससे संगठन के अंदर संचित ज्ञान जिनके लिए उपयोगी हो सकते हैं, वहां तक पहुंच जाता है। विशिष्ट विषयों पर प्रशासकों के इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे अपने ज्ञान को कूट ढांचें में सांझा करें, जो प्रणाली के अंतर्गत दूसरों को भी उपलब्ध हो सके। ज्ञान प्रबंधन प्रणाली सूचनाओं तक पहुंच बनाने और विषय के विशेषज्ञों के योग्य हो जो समस्याओं के निवारण में मार्गदर्शक की भूमिका निभा सकें।

जबकि नियमन अधिक प्रमाणिक और वैश्विक होते जा रहें हैं, ऐसे नियमनों को स्थानीय स्तर पर भी महसूस किया जाने लगा है। ऐसे नियमनों का ढांचा विविध प्रणालियों पर अलग-अलग प्रभाव डालता है। उदाहरण के लिए शेल के लिए बिना हाइड्रोलिक फ्रेकिंग एक स्थान पर भूजल स्तर के प्रति चिंता पैदा कर सकता है, तो दूसरे क्षेत्र में भूगर्भ के अंदर के अवयवों के प्रति चिंता पैदा कर सकता है। व्यापार गतिरोध एक क्षेत्र में शायद छोटे और मध्यम उद्योगों को प्रभावित कर सकते हैं, जहां उद्योगों की भरमार और प्रदूषण है, लेकिन ऐसे क्षेत्र जहां उद्योगों की जरूरत है, वहां उन्हे उदार बनाने की आवश्यकता है, क्योंकि वहां उद्योग है ही नहीं। नियमनों का विविध स्वरूप का अर्थ यह है कि ऐसा नीतिगत ढांचा सभी स्थितियों के लिए सर्वथा अनुकूल नहीं हो सकता। नियमनों को ज्यादा लचीला होना चाहिए और प्रशासकों का स्थानीय जरूरतों के अनुरूप नियमनों को लागू करने में ज्यादा स्वतंत्रता देने की आवश्यकता है। एक राष्ट्रीय नीतिगत ढांचा सभी राज्यों और क्षेत्रों के लिए एक समान नहीं हो सकता और नीतियों का जरूरत के अनुरूप लचीला बनाये जाने की आवश्यकता है।

वैश्विकरण की बढ़ती रफ्तार ने राष्ट्रीय सरकारों के सामने गंभीर चुनौतियां खड़ी की हैं, तब से जब से नब्बे के दशक की शुरुआत में यह प्रक्रिया शुरू हुई। भविष्य में इसकी और भी गंभीर चुनौतियां सामने आयेंगी। तेज़ी से होता तकनीकी विकास, उत्पादन और सेवाओं का वैश्विकरण और घरेलू निवेशकों के लिए घटती सीमाएं सरकारों को विवश करेंगीं कि वे तेजी सें वैश्विक मानकों के अनुरूप घरेलू नियमनों का सामंजस्य बिठाए।

वैश्विकरण की बढ़ती रफ्तार ने राष्ट्रीय सरकारों के सामने गंभीर चुनौतियां खड़ी की हैं, तब से जब से नब्बे के दशक की शुरुआत में यह प्रक्रिया शुरू हुई। भविष्य में इसकी और भी गंभीर चुनौतियां सामने आयेंगी। तेज़ी से होता तकनीकी विकास, उत्पादन और सेवाओं का वैश्विकरण और घरेलू निवेशकों के लिए घटती सीमाएं सरकारों को विवश करेंगीं कि वे तेजी सें वैश्विक मानकों के अनुरूप घरेलू नियमनों का सामंजस्य बिठाए। हालांकि राष्ट्रीय सराकारों के ऊपर यह बड़ी जिम्मेदारी है कि वे ऐसा प्रशासनिक ढांचा बनायें, जो इस सामंजस्य के घरेलू प्रभावों के प्रति खुद को तैयार कर सकें। इससे यह सुनिश्चित हो सकेगा कि ऐसे सामंजस्य नकारात्मक प्रभावों से ज्यादा सकारात्मक प्रभाव पैदा करेंगें और यह सामंजस्य को और भी बढ़ावा देगा। ❑

(लेखक इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट, कोलकाता में पब्लिक पॉलिसी एंड मैनेजमेंट ग्रुप के प्राध्यापक हैं। ई-मेल : abraham@iimcal.ac.in **)**

अपने लेख हमें ई-मेल करें

आप हमें अपने लेख और पत्र ई-मेल भी कर सकते हैं। ई-मेल करने के लिए कृतिदेव फांट इस्तेमाल करें और वर्ड ओपन फाईल yojanahindi@gmail.com पर भेजें। एक से अधिक लेखकों के नाम केवल विशेष शोध लेखों पर हीं दें। जिन रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न नहीं होगा वे स्वीकार नहीं की जा सकेगी। रचना के प्रकाशन के संबंध में किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार अथवा फोन न करें। विशेष अवसरों के लिए लेख तीन माह पूर्व प्राप्त हो जाने चाहिए। रचनाओं के साथ यथासंभव प्रासंगिक चित्र भी भेजें। डाक से भेजे जाने वाले लेखों की एक प्रति सीडी में भी भेजें। वापसी के लिए कृपया टिकट लगा और पता लिखा लिफ़ाफ़ा संलग्न करें।

सामान्य अध्ययन **Foundation Prelims cum Mains Batch** (पृथक रूप से हिन्दी माध्यम में)

IAS

सिविल सेवा कोचिंग के क्षेत्र में एक नई क्रांति

PCS

(न्यूनतम शुल्क पर सामान्य अध्ययन के सभी विशेषज्ञ एक ही छत के नीचे)

KUMAR'S IAS

शुल्क

सामान्य अध्ययन

Foundation Batch (Prelims cum Mains)

₹ 12,500 (प्रथम 100 विद्यार्थियों के लिए)

सत्र प्रारंभ

26th March

नामांकन प्रारंभ - 15th मार्च से
पहले आओ पहले पाओ के आधार पर

विशेष नोट

KUMAR'S IAS सेवार्थ एवं कल्याणकारी भावना से संचालित किया जाने वाला संस्थान है जो **IAS / PCS** की तैयारी न्यूनतम शुल्क पर उच्चतम गुणवत्ता के साथ कराने हेतु प्रतिबद्ध है इसके अतिरिक्त यह संस्थान आम व्यक्ति की समस्याओं के प्रति भी संवेदनशील है।

अतः संस्थान **IAS / PCS** की तैयारी करने वाले सभी अभ्यर्थियों से प्राप्त कुल **Fees** का **2%** गरीबों, विधवा महिलाओं, अनाथ बच्चों तथा वृद्ध व्यक्तियों के कल्याण पर खर्च करने को दृढ़ संकल्पित है साथ ही संस्थान आप सभी सक्षम व्यक्तियों से भी इस दिशा में सहयोग की एक अपील करता है।

धन्यवाद!

KUMAR'S IAS संस्थान में Fees अन्य संस्थानों की तुलना में सबसे कम है क्योंकि.....

KUMAR'S IAS की स्थापना **Kumar Sir** द्वारा **2006** में अपनी **Mother** की प्रेरणा से की गई थी, और उन्हीं की प्रेरणा से **Kumar Sir** ने संस्थान को केवल आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग को ध्यान में रखकर संचालित किया लेकिन कुछ समय पूर्व उनकी **Mother** की **Death** हो जाने के कारण आज भी **Kumar Sir** संस्थान को सेवार्थ भावना पर ही संचालित कर रहे है। इसलिए कोई भी अभ्यर्थी **KUMAR'S IAS** में आकर कम **Fees** के बारे में कोई प्रश्न न करें और ना ही अन्य संस्थान **KUMAR'S IAS** की सेवार्थ भावना पर कोई नकारात्मक टिप्पणी करें।

KUMAR'S IAS

DELHI HEAD OFFICE

A-31/34, Basement, Jaina Exten.
Comp., Dr. Mukherjee Nagar, Delhi
011-47567779

0-888-222-4455
0-888-222-4466
0-888-222-4477
0-888-222-4488

AGRA BRANCH OFFICE

7, IInd Floor, Jawahar Nagar,
Bye Pass Road, Khandari, Agra
0562-6888886

0-8393900022
0-8393900033
0-8393900044
0-8393900055

CENTRAL ENQUIRY : 0-8882388888

Email : kumariasacademy@gmail.com
Website : www.kumarsias.com

CENTRAL ENQUIRY : 0-8882388888

YH-276/2013

प्रशासनिक सुधारों की कुंजी : ई-प्रशासन

कैलाश चन्द्र पपनै

देश में परिवर्तन की बयार बह रही है। प्रमुख राजनीतिक मुद्दों के स्वरूप में भारी बदलाव आ रहा है और देश भर में एक प्रकार का विचार मंथन चल रहा है। आसन्न लोक सभा चुनावों को देखते हुए इस प्रक्रिया में और भी तेज़ी आ रही है। भ्रष्टाचार, जिसे प्राय: शिष्टाचार का हिस्सा मान लिया गया था अब सार्वजनिक बहस का हिस्सा है और एक नई व्यवस्था बनाने के लिए चल रहे विचार मंथन में प्रमुखता हासिल करता जा रहा है। शासन में पारदर्शिता व जवाबदेही सुनिश्चित करने और जनभागीदारी बढ़ाने के उपायों के तहत शासन में आधुनिक प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल कर ई-शासन को अपनाने को भी एक समाधान के रूप में देखा जा रहा है।

देश की अर्थव्यवस्था के विस्तार और उदारीकरण के बाद के सालों में विकास दर में तेज़ी आई है। लोगों की आय में वृद्धि हुई है तथा उपभोग के क्षेत्र का भी विस्तार हुआ है। निजीकरण को बढ़ावा मिलने से उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं के नये क्षेत्र भी सामने आए हैं। इसी के साथ अर्थव्यवस्था में नियमन की जरूरत भी पैदा हुई है। लोगों की आकांक्षाएं बढ़ी हैं और उनमें जागरुकता भी पैदा हुई हैं। लोग सरकारों से पहले की तुलना में कहीं अधिक अपेक्षाएं रखते हैं। लोग सरकार के कामकाज पर पैनी नज़र रखने लगे हैं और सुशासन की अपेक्षा रखते हैं। सुशासन के अभाव में भ्रष्टाचार भी पनपता है। पिछले कुछ वर्षों में केंद्र सरकार की समावेशी सामाजिक पहल की योजनाओं के लिए भारी धनराशि ख़र्च की गई है जिससे ख़र्च में पारदर्शिता और जवाबदेही की आवश्यकता पैदा हुई है। सरकारी परियोजनाओं पर ठीक से अमल के अलावा अर्थव्यवस्था के समुचित संचालन के लिए भी सुशासन का अपना महत्व है। सामान्य अर्थों में सुशासन का यही अर्थ है कि नागरिक अपनी जरूरतों को लेकर सरकारी विभागों के साथ आसानी से संपर्क कर सकें और बिना हुज्जत के उनको वांछित सेवाएं प्राप्त हो सकें, विधि का शासन चले और भ्रष्टाचार से छुटकारा मिले। इसके लिए कोई जादुई समाधान लागू नहीं किया जा सकता है। अनेक क्षेत्रों में अनेक उपायों को लागू करने की आवश्यकता होती है।

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की अहम भूमिका

हाल के कुछ सालों में ई-प्रशासन के माध्यम से सरकार व आम लोगों के बीच सीधे संपर्क को सुगम बनाया गया है। ई-शासन की मदद से रेल टिकटों के आरक्षण, कर-विवरणिका दाखिल करने, कर वापसी की रकम प्राप्त करने, जन्म व मृत्यु प्रमाण-पत्र तथा भूमि अभिलेख लेने व पंजीकरण आदि जैसे अनेक कामों में पारदर्शिता आई है और भ्रष्टाचार पर अंकुश लगा है। बारहवीं योजना के दृष्टि-पत्र में स्वीकार किया गया है कि आम आदमी और सरकार के बीच काम आ जाने पर भ्रष्टाचार आड़े आता है तो जन असंतोष पैदा होता है। अत: यह आवश्यक है कि जन सेवाओं के प्रदाताओं को मित्रवत बने रहना चाहिए और निर्धारित समय सीमा के भीतर सेवा प्रदान करनी चाहिए। इसके लिए संबद्ध निकाय या संस्थान को, जिनमें मुख्य सेवा प्रदाता के रूप में राज्य सरकारें शामिल हैं, आवश्यक सुधारों को लागू करना होगा। इन सुधारों को फलदायी बनाने में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) की अहम भूमिका हो सकती है। सामाजिक सेवाएं प्रदान करने तथा सामान्य रूप से शासन व्यवस्था में सुधार के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी आवश्यक क्षमता विस्तार को संभव बनाती है। इसकी मदद से सेवाओं में सुधार के क्षेत्र में नये आयाम जोड़े जा सकते हैं जिसके लिए प्रशासन को नवाचार के लिए तैयार रहना होगा। इस प्रकार के बदलाव का आधार तैयार करने के अलावा न केवल शहरों में बल्कि गांवों तक भी ब्रॉड बैंड सेवाओं को पहुंचा कर संचार क्रांति को सर्वव्यापी बनाना होगा। बारहवीं पंचवर्षीय योजना में सुशासन और सेवा प्रदाताओं की क्षमता में सुधार के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के व्यापक इस्तेमाल को बढ़ावा दिया गया है। इसी प्रकार से दी जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए सिटिजन चार्टर भी सहायक हो सकता है। लोकपाल व लोकायुक्त जैसी नई व्यवस्था से भी भ्रष्टाचार पर नकेल कसने में मदद मिल सकती है। योजना आयोग का मानना है कि शासन व्यवस्था में सुधार न केवल आम नागरिकों को सीधे तौर पर लाभान्वित करता है वरन देश में निवेश के वातावरण में भी सुधार लाता है जिससे अंतत: सकल घरेलू उत्पाद भी बढ़ता है। तमाम प्रयासों

के बावजूद संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में एक सौ लोगों में से प्रत्येक 1.1 को ही ब्रॉड बैंड की सुविधा सुलभ है जबकि विश्व औसत 9.9 प्रति सैंकड़ा का है। तुलनात्मक दृष्टि से विश्व में ब्रॉड बैंड प्रसार की सूची के अनुसार भारत का 122 वां स्थान है। यूनेस्को की रिपोर्ट के अनुसार भारत में अब तक ब्रॉड बैंड सेवाओं के विस्तार से प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से रोज़गार के 90 लाख अवसरों का सृजन हुआ है। यदि ब्रॉड बैंड सेवाओं के विस्तार में एक प्रतिशत का भी इज़ाफ़ा हो सके तो सन् 2015 तक भारत के सकल घरेलू उत्पाद में 2.7 अरब डॉलर की (लगभग 0.11प्रतिशत) वृद्धि हो सकती है। इंटरनेट उपभोक्ताओं की संख्या (लगभग 12.6 प्रतिशत) की दृष्टि से विश्व सूची में भारत का 145वां स्थान है।

प्रशासनिक सुधारों की परंपरा

यों तो देश में प्रशासनिक सुधारों के नाम पर उठाये गए क़दमों की लंबी सूची है और दो बार प्रशासनिक सुधार आयोगों का गठन भी किया जा चुका है। व्यवस्था में सुधार का मार्ग सुझाने में इनकी भी भूमिका रही है परंतु टेक्नोलॉजी के विकास ने सुधार की संभावनाओं को पंख लगा दिये हैं। इनमें से प्रमुख हैं ई-शासन का विचार।

ई- शासन का विचार भी उन्नत प्रौद्योगिकी की देन है। मूलत: इसका अर्थ है कि सरकार के कामकाज में सूचना व संचार प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल किया जाए ताकि शासन सरल, नैतिक, उत्तरदायी और जवाबदेह बन सके। ई-शासन की विचारधारा इस बात पर केंद्रित है कि सरकार की सेवाओं को नागरिकों और व्यापारिक प्रतिष्ठानों के दरवाजे तक पहुंचाया जाए। परंतु प्रौद्योगिकी स्वयं में पर्याप्त नहीं हो सकती है। ई-शासन में सुधार के केन्द्र में प्रक्रियाएं, तैयारियॉं, प्रौद्योगिकी और लोग हैं। ई-शासन की सफलता के लिए सरकार के कामकाज के तरीकों, प्रक्रियाओं और संगठनात्मक पहलुओं का पुनर्गठन करना भी जरूरी हो जाता है। इसके बिना ई-शासन के प्रयास फलदायी नहीं हो सकते हैं। प्रक्रियाओं में सफलतापूर्वक बदलाव के बाद ही प्रौद्योगिकी का नंबर आता है। इसके बाद परिवर्तन के टिकाऊ बनाये रखने के लिए विभाग या संस्थान के भीतर कर्मचारियों के बीच नई प्रक्रियाओं और प्रौद्योगिकी की स्वीकार्यता सुनिश्चित करनी होती है। यह एक ऐसी समस्या है जो सामने आती रही है। प्रारंभिक एवं प्रायोगिक स्तर पर बदलाव के प्रयास अत्यंत सफल रहते हैं परंतु जब इन्हें स्थाई रूप देना होता है तो स्वीकार्यता में कमी देखी जाती है। यही वजह है कि आंतरिक स्वीकार्यता पर विशेष रूप से ध्यान देना होता है। ई-शासन के अंतर्गत सेवाओं को तीन हिस्सों में बांटा जा सकता है। पहले हिस्से में सूचना प्रदान करने को रखा जा सकता है जो कि अपेक्षाकृत आसान है। दूसरे हिस्से में दक्षता के साथ प्रक्रियाओं को संपन्न करवाना और फिर तीसरे हिस्से में वास्तविक रूप से सेवा प्रदान करना है। दूसरे व तीसरे चरण की निर्बाध सफलता ही उपभोक्ता को वास्तविक संतोष प्रदान कर सकती है।

यूनेस्को की रिपोर्ट के अनुसार भारत में अब तक ब्रॉड बैंड सेवाओं के विस्तार से प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से रोज़गार के 90 लाख अवसरों का सृजन हुआ है। यदि ब्रॉड बैंड सेवाओं के विस्तार में एक प्रतिशत का भी इज़ाफ़ा हो सके तो सन् 2015 तक भारत के सकल घरेलू उत्पाद में 2.7 अरब डॉलर की (लगभग 0.11प्रतिशत) वृद्धि हो सकती है। इंटरनेट उपभोक्ताओं की संख्या (लगभग 12.6 प्रतिशत) की दृष्टि से विश्व सूची में भारत का 145वां स्थान है।

ई-शासन और बदलाव की चुनौतियों की गंभीरता का ठीक आकलन करते हुए संसद की संचार प्रौद्योगिकी संबंधी स्थाई समिति (चौदहवीं लोक सभा) ने अपनी 22वीं रिपोर्ट में जिसका शीर्षक 'ई-शासन परियोजनाओं पर अमल' था, में कहा - ''समिति का मत है कि मैन्युअल प्रक्रियाओं को संचालित करने वाले वर्षों पुराने कानून और नियम इलेक्ट्रॉनिक आधार पर चलने वाली प्रक्रियाओं के संचालन के लिए उपयुक्त नहीं हो सकते हैं। ई-शासन की सफलता के लिए पृथक कानूनी रूपरेखा व नियमों की आवश्यकता होगी। इसलिए समिति सिफारिश करती है कि सभी संबद्ध कानूनों और नियमों की विस्तार से समीक्षा की जाए और उनमें ऐसे उपयुक्त बदलाव किये जाएं जो साइबर युग की टेक्नोलॉजी के अनुरूप हों और नागरिकों को ई-शासन की परियोजनाओं का अधिकतम लाभ उठाने में सक्षम बना सकें।''

दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग ने भी संसदीय समिति की राय से सहमति व्यक्त की और कहा कि सरकार की तमाम प्रक्रियाओं को नए सिरे से निर्धारित करने का काम बहुत बड़ा है। इस काम को एक समय सीमा में संपन्न करने के लिए वैधानिक ढांचा और अन्य मंजूरियां जरूरी होंगी। वास्तव में आयोग ने ई-शासन के सारे ताने-बाने के लिए कानूनी ढांचे के अनुमोदन की आवश्यकता को प्रतिपादित किया।

सरकार ने सूचना प्रौद्योगिकी के शासन में समावेश के जो क़दम उठाये हैं उनके नतीजे आश्चर्यजनक रहे हैं और सुधार की दिशा में मील का पत्थर सिद्ध हुए हैं। जनवरी 2014 में कोच्चिं में ई-शासन के बारे में संपन्न हुए 17 वें सम्मेलन में बताया गया कि देश के जिन 50 जिलों में ई-शासन पहल लागू की गई है उनमें केरल के सभी 14 जिले शामिल हैं। केरल में सन् 2002 में ई-साक्षरता की योजना के अंतर्गत जिन 'अक्षय' शिक्षा केंद्रों की स्थापना की गई थी उन्हें अब सामान्य सेवा केंद्रों का रूप दिया गया है जहां नागरिक अनेक प्रकार की ई-सेवाओं की सुविधाओं का लाभ ले सकते हैं। इन केंद्रों में आधार कार्ड पंजीकरण, ई-जिला सेवाएं, अनेक प्रकार के बिलों के भुगतान, राशन कार्ड आवेदन, वाहन लाइसेंस के भुगतान, किसानों के आंकड़ों के पंजीकरण तथा विश्वविद्यालयों के शुल्क का भुगतान सहित अनेक सुविधाएं सुलभ हैं। इस समय केरल में 2,300 ई-सेवा केंद्र सक्रिय रूप से काम कर रहे हैं। इनमें से दो-दो केंद्र प्रत्येक पंचायत क्षेत्र में काम कर रहे हैं। ई-सेवा पोर्टल के दायरे में 10 विभागों की 503 सेवाएं शामिल हैं। उम्मीद है कि केरल 2016 तक पूरी तरह से डिजिटल होने का गौरव प्राप्त कर लेगा। केरल के ई-शासन के अनुभवों का समावेश देश के अन्य राज्यों में भी ई-सेवा से जुड़ी पहल में करना होगा।

ई-शासन मिशन मोड में

प्रशासन में आम जन की भागीदारी और स्थानीय निकायों में ई-शासन को सुदृढ़ बनाने से क्रांतिकारी बदलाव आना निश्चित है। इनसे

धन का सदुपयोग और जवाबदेही सुनिश्चित करना संभव हो सकेगा। सुधारों की प्रक्रिया में तेजी लाने की दृष्टि से ई-शासन के चार स्तंभों लोगों, प्रक्रियाओं, टेक्नोलॉजी और संसाधनों के समुचित उपयोग पर ध्यान देने की जरूरत को स्वीकार किया गया है। नागरिकों या व्यापारिक व अन्य प्रतिष्ठानों के साथ सरकार के संपर्क का अहम तत्व सरकार की तरफ से लिया जाने वाला निर्णय होता है जिसके लिए सरकार को आवश्यक आदान के रूप में जानकारी व सूचनाओं की आवश्यकता होती है। केंद्र सरकार ने अपनी राष्ट्रीय ई-शासन योजना के तहत एक ई-शासन मिशन मोड परियोजना तैयार की जो निर्णय लेने की प्रक्रिया में सहायक सिद्ध हो सकेगी। इसमें सूचना व जानकारी को तुरंत प्राप्त करने में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) की अहम भूमिका रहती है। इस प्रणाली में सूचना व जानकारी को उपयुक्त तरीक़ों से व सुगमता से संचित किया जाता है। वर्षों से जड़ जमाई हुई प्रक्रियाओं में बदलाव के लिए सावधानी व नियोजन की मदद से एक हैंडबुक तैयार की गई जिसमें ई-शासन की शर्तों के अनुरूप भविष्य में कार्रवाई की एक रूपरेखा प्रस्तुत की गई है। इसमें विश्व के अन्य देशों में किये गए परिवर्तनों का उल्लेख करने के साथ ही इस बात की चर्चा की गई है कि ई-शासन हमारी प्रशासन प्रणाली व सरकार के लिए किस तरह से उपयोगी हो सकता है। इसमें ई-कार्यालय की अवधारणा को स्पष्ट करने के साथ ही इस पर अमल सुनिश्चित करने के लिए मिशन मोड परियोजना (एमएमपी) भी तैयार की गई है। प्रक्रियाओं में बदलाव की इस परियोजना को ई-शासन की योजना के लिए मील का पत्थर कहा जा सकता है।

प्रशासनिक सुधार आयोग की सिफारिशें

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग ने अपनी ग्यारहवीं रिपोर्ट में ई-शासन के बारे में अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिए। आयोग का मानना है कि ई-शासन के बारे में किसी भी पहल की सफलता के लिए बदलाव की इच्छा होना और उसके लिए अनुकूल वातावरण बनाना जरूरी है। इस प्रकार के उपायों को सर्वोच्च राजनीतिक स्तर से समर्थन प्राप्त होना चाहिए। ई-शासन के प्रयासों को सभी प्रकार के प्रोत्साहन देने के साथ ही इसके प्रति भीतरी प्रतिरोधों को दूर करने तथा लोगों को इनके बारे में जागरूक बनाने की आवश्यकता को भी आयोग ने रेखांकित किया।

ई-शासन से जुड़े सरकारी विभागों को लोगों की आवश्यकताओं के अनुरूप ई-शासन की परियोजनाओं की पहचान कर प्राथमिकता के अनुसार उन पर अमल सुनिश्चित करना चाहिए। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संगठन क्षमता और ई-शासन के लिए उच्च तकनीकी क्षमता हासिल करनी होगी। यह वांछित संख्या में प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की मदद से ही संभव है। आयोग ने ई-शासन के क्षेत्र में की गई पहल के बारे में आम लोगों के बीच जागरुकता पैदा करने के प्रयासों के बारे में भी सुझाव दिये हैं। इसी के साथ ही राष्ट्रीय स्तर पर ई-शासन की ठोस रूपरेखा तैयार करने और उच्च स्तर पर अधिकारियों को हर तरह से ई-शासन के प्रयासों को धरातल पर उतारने में सक्षम बनाना होगा।

विश्व बैंक ने भारत सरकार की ई-शासन की राष्ट्रीय योजना में हिस्सेदारी की है। बैंक ने सेवाओं में सुधार के लिए 15 करोड़ डॉलर की मदद दी। भारत सरकार की 9 अरब डॉलर के ई-शासन की राष्ट्रीय योजना में इस मदद का योगदान सेवा प्रदाता सेवाओं में सुधार के क्षेत्र में था। सेवाओं को प्रदान करने में कमियों का सबसे ज्यादा नुकसान समाज के गरीब तबके को होता है। विश्व बैंक ने अपने आकलन में माना है कि 31 मार्च, 2011 से 30 जून, 2012 तक की इस परियोजना का काम संतोषजनक रहा है। विश्व बैंक ने माना कि ई-शासन की राष्ट्रीय योजना केंद्र व राज्य सरकारों की एक महत्वपूर्ण पहल है। इसके अलावा अन्य पहल में सूचना का अधिकार (आरटीआई), जन सेवाओं पर अधिकार (आरटीपीएस), शिकायत निवारण कार्य-निष्पादन प्रबंधन तथा क्षेत्र विशेष के लिए की गई पहल भी शामिल हैं। इनमें से अनेक में ई-शासन के उपकरणों का इस्तेमाल निहित था जिससे सेवाओं में सुधार हो सके और उनमें होने वाले धन की बरबादी और भ्रष्टाचार को रोका जा सके तथा लोगों के असंतोष और असहाय होने की निराशा को दूर किया जा सके। केंद्र सरकार ने अपनी प्रतिबद्धता का निर्वाह करते हुए सन् 2012 के मध्य में 2.5 लाख गांवों में ब्रॉडबैंड सुविधा देने के लिए 3.6 अरब डॉलर का अतिरिक्त निवेश किया। यह उल्लेखनीय है कि ई-शासन की राष्ट्रीय योजना के अंतर्गत धनराशि सीधे प्रखंड स्तर पर जाती है। फिलहाल राज्य सरकारों की देखरेख में यह काम चल रहा है। गांव-गांव तक ब्रॉडबैंड सेवा को पहुंचाने के लिए सरकार गंभीरता से प्रयासरत है।

केंद्र सरकार ने आईटी सेवाओं के क्षेत्र में 1980 तथा 1990 के दशकों में की गई छुटपुट पहलों के बाद मई, 2006 में ई-शासन की राष्ट्रीय योजना आरंभ की थी। इसके अंतर्गत जो प्रमुख क़दम उठाये गए उनमें ब्लॉक स्तर तक सरकारों के साथ संपर्क के लिए राज्य समंक केंद्र और राज्यव्यापी संपर्क जाल तैयार करने वाला स्टेट वाइड एरिया नेटवर्क (स्वान) स्थापित कर सूचना प्रौद्योगिकी ढांचा तैयार करना शामिल था। इसके अलावा साझा सेवा केंद्रों (सीएससी) की स्थापना की गई जिससे गांवों में सूचना प्रौद्योगिकी से संबद्ध सभी सेवाएं एक ही स्थान में प्राप्त हो सकें। अनेक ई-सेवाओं तक पहुंचने के लिए मोबाइल सेवा नेटवर्क के इस्तेमाल की सुविधा प्रदान की गई, विभिन्न मंत्रालयों व विभागों ने प्राथमिकता वाली अनेक परियोजनाओं के लाभों को मिशन मोड में ला कर ई-सेवाओं के माध्यम से पहुंचाने के उपाय किये। इसके साथ ही राज्य स्तर पर ई-शासन के तौर तरीकों को पहुंचाने के लिए केंद्र द्वारा विशेष दलों का गठन किया गया। विश्व बैंक की मदद से उन गरीब राज्यों में ई-सेवाओं के विस्तार में मदद मिली जो निवेश की कमी से भी अधिक नीतिगत खामियों के कारण ई-शासन की राष्ट्रीय पहल का लाभ लेने में पीछे छूट रहे थे। पिछड़े व गरीब राज्यों में इस नई पहल के बाद मध्य प्रदेश जैसे राज्य ने अनेक क्षेत्रों में उल्लेखनीय सफलता अर्जित कर इस प्रयास को सार्थकता प्रदान की। पिछड़े राज्यों में समन्वय की कमी व नीतिगत खामियों को दूर करने के प्रयास जारी हैं और सेवाओं को नागरिक के घर तक पहुंचाने के काम को निरंतर आगे बढ़ाया जा रहा है। वैसे भी प्रशासनिक सुधार एक सतत चलने वाली प्रक्रिया है। ❑

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। ई-मेल : kailashpapnai@gmail.com **)**

लिबोर

लिबोर (LIBOR)–लंदन इंटर बैंक ऑफर्ड रेट यानी ब्याज की वह दर जिस पर लंदन अंतर-बैंक बाज़ार में कोई बैंक अन्य बैंकों से उधार ले सकता है। अल्पावधि ब्याज दरों के लिए विश्व में सर्वाधिक व्यापक रूप में प्रयुक्त संदर्भ मानक, लिबोर का इस्तेमाल सबसे पहले 1986 में वित्तीय बाज़ारों में किया गया था। उसके बाद से लिबोर का महत्त्व बढ़ता गया है और आज इसे करीब 350 ट्रिलियन (3500 खरब) डॉलर मूल्य के वित्तीय उत्पादों के लिए महत्वपूर्ण संदर्भ मानक समझा जाता है। लिबोर में मामूली परिवर्तन से मुद्रा बाज़ार में लहरें पैदा हो सकती हैं।

लिबोर का निर्धारण ब्रिटिश बैंकर्स एसोशिएशन द्वारा दैनिक आधार पर किया जाता है और उसे विश्व के सर्वाधिक भरोसेमंद बैंकों की अंतर-बैंक जमा दरों की सामंजस्यपूर्ण औसत के अनुसार तय किया जाता है। एक संदर्भ दर के रूप लिबोर पर निर्भर रहने वाले देशों में अमरीका, कनाडा, स्विटजरलैंड और ब्रिटेन शामिल हैं।

2012 में विश्वभर के नियामक अमरीकी और यूरोपीय बैंकों द्वारा लिबोर के कथित छलसाधन की जांच कर रहे थे। 2013 में एक विश्वव्यापी जांच से पता चला कि व्यापारियों और दलालों ने संदर्भ मानक अंतर-बैंक उधार दरों में व्यापक छलसाधन किया था। ❑

भौगोलिक संकेतक

भौगोलिक संकेतक (Geographical indicator) एक ऐसा चिन्ह है जो विभिन्न प्रकार की ऐसी वस्तुओं के लिए प्रयुक्त किया जाता है, जिनकी एक विशिष्ट भौगोलिक उत्पत्ति है और जिनमें कुछ खास गुण, मूल्य, योग्यताएं और विशेषताएं होती हैं, जिनका संबंध अनिवार्य रूप से उनकी उत्पत्ति के स्थान से होता है। आम तौर पर भौगोलिक संकेतकों में वस्तुओं की उत्पत्ति के स्थान का नाम शामिल होता है।

भौगोलिक संकेतक औद्योगिक संपत्ति का एक पहलू है, जो किसी उत्पाद के देश या उत्पत्ति स्थान का हवाला देते हैं और जो ऐसी गुणवत्ता एवं विशिष्टता का आश्वासन देते हैं, जिनका संबंध अनिवार्य रूप से उस परिभाषित भौगोलिक स्थान, क्षेत्र या देश के साथ होता है। औद्योगिक संपत्ति की संरक्षा के लिए पेरिस कन्वेंशन के अनुच्छेद 1(2) और 10 के अंतर्गत भौगोलिक संकेतक बौद्धिक संपदा अधिकारों के तत्त्व के रूप में शामिल किए गए हैं। भौगोलिक संकेतक बौद्धिक सम्पदा अधिकार (ट्रिप्स) समझौते के व्यापार संबंधी पहलुओं के अनुच्छेद 22 और 24 के अंतर्गत भी कवर किए गए हैं। यह समझौता व्यापार एवं शुल्क संबंधी सामान्य समझौते (गैट) के लिए उरुग्वे दौर की वार्ताओं के परिणाम स्वरूप हुए समझौतों का हिस्सा था। विश्व व्यापार संगठन के सदस्य के नाते भारत ने वस्तुओं (पंजीकरण एवं संरक्षण) के भौगोलिक संकेतक अधिनियम, 1999 बनाया और यह 15 सितंबर, 2003 से लागू हो गया।

भौगोलिक संकेतक संबंधी टैग यह सुनिश्चित करता है कि लोकप्रिय उत्पाद के नाम का इस्तेमाल करने की अनुमति पंजीकृत इस्तेमालकर्ता (अथवा कम से कम भौगोलिक प्रदेश में रहने वाला इस्तेमालकर्ता) के अलावा किसी अन्य को नहीं होगी। भारत में दार्जिलिंग चाय 2004-05 में प्रथम भौगोलिक संकेतक टैग वाला उत्पाद बनी। उसके बाद से 194 वस्तुएं इस सूची में शामिल हो चुकी हैं। इस सूची में अन्य उत्पादों के अलावा अरान्मुला कन्नाडी (दर्पण), चंदेरी फैब्रिक, कांचीपुरम सिल्क, कश्मीरी पेपर मैशी, कश्मीरी पश्मीना आदि शामिल हैं। ❑

क्या प्रशासनिक सेवाओं के प्रबंधन में न्यायिक हस्तक्षेप की आवश्यकता है?

टी. एस. आर. सुब्रह्मण्यम

आमतौर से माना जाता है, और इसमें भारत सरकार भी शामिल है, कि खराब क्रियान्वयन और कमज़ोर निरीक्षण के कारण सरकारी नीतियों और कार्यक्रमों की प्रभाविकता विकृत और क्षीण हो गई है। द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (एआरसी) ने स्वीकार किया है कि समृद्धि और समता की हमारी तलाश में, सुशासन, निश्चित ही कमज़ोर कड़ी है (द्वितीय एआरसी प्रशासन में नैतिकता पर चौथी रिपोर्ट)। दसवीं पंचवर्षीय योजना में कहा गया था कि जन कल्याण, आम तौर पर सार्वजनिक सेवाओं के लिये काम करनेवाले तंत्र की दक्षता से ही निर्धारित होती है। अच्छी से अच्छी योजना भी गलत क्रियान्वयन से उत्पन्न स्थिति की भरपाई नहीं कर सकती। हमारी सभी सार्वजनिक संस्थाओं में उतरदायित्व और दक्षता की भावना से ही देश की संभावनाओं का बंद द्वार खोला जा सकता है और सतत् सामाजिक विकास के पथ पर चला जा सकता है। कमज़ोर प्रशासन से हमारे कार्य निष्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है और अनेक अति महत्वपूर्ण क्षेत्रों का ऐसा हाल रहा है जिसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। शिक्षा, जनस्वास्थ्य आदि ऐसे ही चुनिंदा क्षेत्र हैं जिनके निराशाजनक प्रदर्शन से अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर देश की रेटिंग गिरी है।

चूंकि सरकारी नीतियों और कार्यक्रमों का क्रियान्वयन स्थायी प्रशासनिक सेवा का दायित्व होता है, इसमें पायी जानेवाली खामियां और दोष सीधे तौर पर प्रशासनिक अधिकारी की क्षमता और योग्यता की ओर इंगित करती है। पिछले काफी लंबे समय से प्राय: सभी क्षेत्रों में लक्ष्य हासिल में निरंतर विफलता से स्पष्ट होता है कि इस सबकी बुनियादी समस्या खराब प्रशासन से उपजा क्रियान्वयन है। इसलिये प्रशासन में सुधार लाने का कोई भी प्रयास आवश्यक रूप से प्रशासनिक सेवा के सुधार के साथ ही किया जाना चाहिये। यही सरकारी सेवा के काम करने के ढंग और क्रियान्वयन के सभी पहलुओं को प्रभावित करती है।

केंद्र सरकार के साथ ही राज्य सरकारों ने भी अनेक समितियां गठित की हैं जिन्होनें प्रशानिक और नागरिक सेवा सुधारों से संबंधित समस्याओं का अध्ययन कर सुझाव दिये हैं। इन सभी समितियों ने प्रशासनिक अधिकारी को बाहरी दबावों से संरक्षित करने की आवश्यकता पर जोर दिया है। इस मुद्दे पर सभी समितियों की एक राय रही है। प्रशासनिक अधिकारी (लोक सेवक) को इतनी छूट देने की सिफ़ारिश की गई है कि वह बिना किसी भय अथवा पक्षपात के अपनी सुविचारित परामर्श दे सके। यद्यपि इन समितियों की अनेक सिफारिशें आमतौर पर एक समान है, फिर भी न तो उनको स्वीकार किया गया है और न ही उन पर क्रियान्वयन हुआ है। इस संदर्भ में, द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग(2006-08) ने कहा है कि यह एक विडंबना ही है कि यद्यपि देश के सार्वजनिक प्रशासन के विभिन्न पहलुओं पर सौ से अधिक समितियों और आयोगों ने विचार किया है तथापि प्रशासनिक सेवा के पुनर्गठन का कोई प्रयास ईमानदारी से नहीं किया गया है। भारत में सुधार के ये प्रयास निश्चय ही रूढ़िवादी रहे हैं, जिनका प्रभाव सीमित रहा है। प्रशासनिक सेवा सुधारों से भारत में न तो कार्यदक्षता में ही सार्थक वृद्धि हुई है और न ही उनमें उत्तरदायित्व की भावना बढ़ी है।

होता समिति और संथानम समिति ने स्वीकार किया है कि प्रशासनिक सेवाओं में ईमानदारी और जवाबदेही के मानकों में गिरावट की बड़ी वजह मौखिक आदेशों पर काम करने और आदेश जारी करने की पद्धति रही है जिसे रिकार्ड में नहीं रखा जाता। वर्तमान में उच्च प्रशासनिक सेवाओं में स्थानांतरण, पदस्थापना, अनुशासनात्मक कार्रवाई और अन्य कार्मिक मामले तदर्थ और अपारदर्शी तरीके से निपटाये जाते हैं। स्थानांतरण को प्राय: पुरस्कार अथवा दंड के औजार के रूप में प्रयोग किया जाता है। स्थानीय नेताओं और निहित स्वार्थों की सनक और इच्छा की पूर्ति के लिये अधिकारियों को बार-बार इधर-उधर किया जाता है। विशेषकर राज्य सरकारों में सेवा दे रहे अखिल भारतीय सेवाओं के अधिकारियों का कोई निश्चित कार्यकाल नहीं होता। शक्तिशाली स्थापित और निहित स्वार्थ तबादला उद्योग को संरक्षण और समर्थन देते हैं, क्योंकि बार-बार के स्थानांतरण से भ्रष्ट अधिकारी और नेता, प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से भारी मात्रा में कालाधन कमाते हैं।

प्रशासनिक सुधार से संबंधित सभी समितियों और आयोगों ने सभी स्तरों पर गैर राजनीतिक, बिना किसी भेदभाव के खुले और पारदर्शी ढंग

से स्थानांतरण की आवश्यकता पर बल दिया है। होता समिति ने कहा है कि अधिकारियों का निश्चित कार्यकाल का न होना ही सरकारी नीतियों और कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में धीमी प्रगति, उत्तरदायित्व के अभाव, जन-धन की बर्बादी और बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार का प्रमुख कारण है। बिना निरंतरता के सुशासन संभव नहीं हैं और न ही बिना स्थानीय भाषा के ज्ञान के समझदारी से शासन चलाया जा सकता है।

मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन (1997) का मानना था कि प्रशासनिक अधिकारियों के जल्दी-जल्दी और मनमाने ढंग से होने वाले स्थानांतरणों से जनसेवा प्रणाली की योग्यता प्रभावित होती है। इसमें विभिन्न राज्यों में प्रशासनिक सेवा मंडलों के गठन की सिफ़ारिश की गई थी। स्थानांतरण, पदस्थापना, पदोन्नति, जांच, अनुशासनात्मक कार्यवाही, पुरस्कार और दंड के प्रबंधन में प्रत्यक्ष राजनीतिक नियंत्रण अथवा निर्देशन ने प्रशासनिक सेवाओं के मनोबल, क्षमता, दक्षता, प्रभाविकता और नैतिकता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है। इन कार्यों को एक स्वतंत्र सिविल सेवा बोर्ड (प्रशासनिक सेवा मंडल) को सौंप दिया जाना चाहिये और इसमें कोई राजनीतिक खेल नहीं खेला जाना चाहिये। यह बोर्ड हीं, सभी स्तरों पर बारीकी से नज़र रखेगा और जवाबदेही सुनिश्चित करेगा। इसके अतिरिक्त वह स्थानांतरणों का पारदर्शी और तार्किक ढंग से नियमन करेगा, ईमानदार अधिकारी को संरक्षण प्रदान करेगा और जो लोग जनता के विश्वास को चोट पहुंचाएंगे, उनको सजा दिलाने के लिये उनकी पहचान कर सिफ़ारिश करेगा। प्रशासनिक सेवा सुधारों का क्रियान्वयन और स्थानांतरणों की तार्किक और पारदर्शी नीति से प्रशासनिक अधिकारियों को राजनीतिक व्यवस्था के अनुचित और अवैधानिक दबावों से बचाने में बड़ी मदद मिलेगी।

सुशासन पर जनहित याचिका

प्रशासनिक सेवाओं के प्रबंधन में सच्चे सुधार के प्रतिपूर्ण विरोध और लगातार उपेक्षा को इसी पृष्ठभूमि में सेवानिवृत अधिकारियों के एक समूह को हस्तक्षेप के लिये उच्चतम न्यायालय की शरण लेनी पड़ी। न्यायालय में दी गई याचिका में न तो सेवारत अधिकारियों के कल्याण संबंधी कोई मांग की गई थी और न ही, विशेष हितों के हस्तक्षेप से सेवाओं के मनमाने स्थानांतरण और सनकभरे प्रबंधन से अधिकारियों को होने वाली समस्याओं से निजात दिलाने के लिये राहत की कोई मांग की गई थी, बल्कि उसमें सामान्य तौर पर जनता पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों से राहत दिलाने की प्रार्थना की गई थी। याचिका में कहा गया था कि प्रशासनिक सेवाएं (अधिकारी) अपना वह दायित्व उचित रूप से नहीं निभा पा रहें हैं, जिनके लिये वे वैधानिक रूप से बनायी गई हैं। निश्चय ही यह दलील, बेहतर लोक प्रशासन की पूर्व शर्त के तौर पर प्रशासनिक सेवाओं के बेहतर और तर्कसंगत प्रबंधन से जुड़ी हुई थी।

वर्ष 2011 में दाखिल जनहित याचिका (पीआईएल) में निम्नलिखित विशिष्ट प्रार्थनाएं शामिल थीं:

1. होता समिति, 2004 (पैरा 5.09, पैरा 5-11, मुख्य सिफारिशें सं. 38), द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग, 2008 (10 वीं रिपोर्ट, पैरा 9-8), की रिफारिशें और प्रभावी एवं उतरदायी प्रशासन पर मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन, 1997 में वक्तव्य पर आधारित केन्द्र और राज्यों, दोनों को एक स्वतंत्र प्रशासनिक सेवा मंडल (सिविल सर्विसेज बोर्ड) के गठन के लिये परमादेश (मैन्डमस) अथवा अन्य किसी रूप में आदेश देने की प्रार्थना;

2. झा आयोग, 1986 (पैरा 7-2), केन्द्रीय स्टाकिंग योजना 1996 (पैरा 17.01, पैरा 17.02, पैरा 17.12) द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग, 2008 (10 वीं रिपोर्ट, पैरा 8.7, पैरा 19.8, पैरा 17.5), होता समिति रिपोर्ट, 2004 (मुख्य सिफ़ारिशें सं. 59) की सिफ़ारिशों पर आधारित, प्रशासनिक अधिकारियों का एक पद पर कार्यकाल निश्चित करने सम्बंधी परमादेश (मैडमस) अथवा अन्य किसी रुप में आदेश देने की प्रार्थना;

3. अखिल भारतीय सेवा आचरण नियम 1968 के नियम 3(3)(ii)(iii) और संचालन समिति रिपोर्ट, 1962 (खंड 6, उप पैरा 33(iii) में मान्य सिद्धान्तों पर आधारित प्रशासनिक अधिकारियों को अपने वरिष्ठ अधिकारियों नेताओं, राजनीतिक आकाओं मंत्री आदि विधायकों, वाणिज्यिक एवं व्यापारक हितों और सत्ता का प्रतिनधित्व करने वाले अन्य व्यक्तियों और हितों से प्राप्त होने वाले निर्देशों/आदेशों/सुझावों का औपचारिक रिकार्ड रखने का परमादेश अथवा अन्य किसी रूप में आदेश देने की प्रार्थना।

उपर्युक्त मांगें सिद्धांत रूप से पूर्णतया त्रुटिविहीन है; परंतु ठीकठाक ढंग से काम करने वाले लोकतंत्र में इन्हें सामान्यत: गंभीरता से नहीं लिया जाता। जैसा पूर्व में कहा गया है, सभी सिफ़ारिशें तमाम प्रशासनिक सुधार आयोगों/समितियों में किसी न किसी रूप में दी जाती रही हैं। वस्तुत: प्रशासनिक सेवा सुधार के यह प्रारंभिक बिंदु हैं। अत: प्रशासनिक सेवाओं को सुशासन का प्रभावी साधन बनाने के लिये अभी और बहुत कार्य करने हैं।

अक्तूबर 2013 में, उच्चतम न्यायालय ने एक अत्यंत महत्वपूर्ण फ़ैसले में, जनहित याचिका में उठाए गए विंदुओं का पूर्ण समर्थन किया और जनहित में हस्तक्षेप की आवश्यकता महसूस की। उच्चतम न्यायालय ने केन्द्र और राज्यों में प्रत्येक श्रेणी के पदों के लिये एक सामान्य कार्यकाल निर्दिष्ट करने की आवश्यकता का समर्थन किया और उसकी रूपरेखा तैयार करने की प्रक्रिया के बारे में पूछा। सिविल सेवा बोर्ड की स्थापना के सम्बन्ध में शीर्ष न्यायालय ने निर्देश दिया कि वित्त, कार्मिक आदि विषयों की विशेषज्ञता वाले ऐसे बोर्ड,केन्द्र और राज्यों में अलग-अलग स्थापित किये जाने चाहिये, ताकि वे पदस्थापना, स्थानांतरण अनुशासनात्मक कार्यवाही आदि सहित प्रशासनिक सेवाओं के प्रबंधन पर नज़र रख सकें और समुचित प्रबंधन की संस्तुति कर सकें। शीर्ष न्यायालय ने इस सिद्धांत का भी समर्थन किया कि सभी मौखिक निर्देशों का रिकार्ड रखा जाना चाहिये और सरकार को इसे तीन माह के अंदर औपचारिक रूप देने का निर्देश दिया।

इस प्रकार, उच्चतम न्यायालय ने अक्तूबर 2013 को अपने इस महत्वपूर्ण निर्देशों से प्रशासनिक सेवाओं के प्रबंधन में दूरगामी सुधारों के लिये रास्ता साफ कर दिया है। अभी तक जो कार्यकारिणी का कार्यक्षेत्र अथवा गतिविधि का क्षेत्र माना जाता था, वह अब जनहित के परीक्षण का विषय बन गया है। उच्चतम न्यायालय ने संविधान की धारा 32 के अंतर्गत इस कार्यक्षेत्र में दखल देना उचित ठहराया है और सुशासन के अधिकार को जनता के मौलिक अधिकार के रूप में स्वीकार किया है।

प्रशासनिक सुधार पर उच्चतम न्यायालय के आदेशों से संबंधित कुछ पहलू

यहां यह बात ध्यान देने की है कि न्यायालय का यह हस्तक्षेप विशिष्ट रूप से जनहित में हैं। यह प्रशासनिक अधिकारियों की शिकायतों का सीधे सीधे निराकरण नहीं करता। उसके लिये अलग व्यवस्था है। स्पष्ट है कि न्यायालय के आदेश से पदस्थापना, स्थानांतरण और सेवा सम्बन्धी विषयों पर राजनीतिक कार्यकारिणी के विशिष्ट क्षेत्राधिकार की स्वतंत्रता पर कुछ नियंत्रण अथवा शर्तें लगेगी। इससे एक नया और व्यापक आयाम की शुरुआत हुई है, जो इस तथ्य से जुड़ा है कि लोक सेवक (प्रशासनिक अधिकारी) लोगों की सेवा के लिये होते हैं। अत: प्रशासनिक अधिकारियों का प्रबन्धन केवल निर्वाचित लोक सेवकों की इच्छा और सुविधा का प्रश्न नहीं है। स्पष्टत: सरकार का निर्वाचित मुखिया अथवा निर्वाचित प्रतिनिधि को शासन करने के लिये पूरी आज़ादी की जरूरत होती हैं; इसमें जनहित में कर्मियों को स्थानांतरित करने की स्वतंत्रता भी शामिल है। परन्तु उच्चतम न्यायालय के ताज़े हस्तक्षेप के बाद यह अधिकार निरंकुश अधिकार नहीं रह गया है। सुशासन के एक अनिवार्य अंग के रूप में प्रशासनिक सेवाओं के प्रबंधन में तार्किकता और औचित्य का होना आवश्यक है। सुशासन, जन प्रतिनिधियों द्वारा किये जाने वाला घर गृहस्थी जैसा प्रबंधन नहीं है। प्रशासनिक अधिकारी, जन प्रतिनिधि के लिये काम करने वाला कोई निजी सेवक नहीं है, जो केवल उसी की इच्छाओं और सुविधा के अनुसार काम करें। जनहित ही सर्वोपरि होता है। जिसके बारे में कोई निर्वाध अकेला जन प्रतिनिधि हीं नहीं कर सकता। उच्चतम न्यायालय ने सुधार के जो आदेश दिये हैं वे सर्वथा उचित हैं। यदि केन्द्र और राज्यों में सरकारों ने कार्मिकों के प्रबंधन में तार्किकता सुनिश्चित करने से थोड़ा सा भी ध्यान दिया होता तो न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता ही नहीं पड़ती।

उपर्युक्त विषयों पर लोगों की जो टिप्पणियां सामने आयी हैं, उनमें न्यायालय के हस्तक्षेप को अनावश्यक या न्यायालय के क्षेत्राधिकार के बाहर की बात बतायी गई है। इस दृष्टिकोण को सही नहीं माना जा सकता क्योंकि जनहित की व्याख्या और धारा 32 का वृहत दायरा शीर्ष न्यायालय के क्षेत्र में आता है,और उसके विचार हीं अंतिम होते हैं। इस विषय को नेता (राजनीति) बनाम नौकरशाह (कार्यकारिणी) करके भी पेश किया जाता है, जो साफतौर पर अनुचित, अरचनात्मक और चीजों को नकारात्मक ढंग से देखने का तरीका है। न्यायालय का हस्तक्षेप पूर्णत: न्यायोचित है और जनहित के बारे में उनकी परिभाषा ही संपर्क और प्रासंगिक मानी जाएगी। यह सही है कि निर्वाचित और स्थायी लोक सेवक, एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और जनता से जुड़े मुद्दों से निपटने के लिहाज से दोनों के हित एक समान हैं। अत: कम से कम इतना तो माना जा सकता है कि जनहित से जुड़े मुद्दों पर उनकी आपसी स्थितियों में कोई टकराव नहीं होना चाहिये। सार्वजनिक मामलों में कोई मनमानापन नहीं चल सकता। हाल के वर्षों में पारदर्शिता, सूचना का अधिकार और इन जैसे सुशासन के मूल विचारों का चलन बढ़ा है राष्ट्रीय कार्यव्यवहार में उसको पर्याप्त मान्यता और स्वीकार्यता मिल रही है।

यह सही है कि निर्वाचित जन प्रतिनिधि अपने कार्य की स्वतंत्रता में किसी प्रकार की बाधा पसंद नहीं करते। उनकी सोच है कि उन्हें शासन करने का जनादेश मिला है। परन्तु यह दृष्टिकोण स्वीकार नहीं किया जा सकता। संविधान के अनुसार लोगों का हित (जनहित) ही सर्वोपरि होता है। निर्वाचित प्रतिनिधि अकेला जनहित के बारे में निर्णय नहीं कर सकता। चुनावी विजय निर्वाचित कार्य का लाइसेंस नहीं देती। इसी तरह, हमने देखा है कि हर रंग का राजनीतिज्ञ या कहें कि सभी दलों के नेता प्रभावी लोकपाल के गठन में आना-कानी कर रहे हैं। इसी प्रकार, चुनाव सुधार या यूं कहें कि राजनीतिक दलों के वित्तीय खातों को सार्वजनिक करने का भी विरोध हो रहा है। लोकपाल के मामले में जैसा हमने देखा, हमारे यहां जीवंत और प्रभावी लोकतंत्र हैं जहां जनमत, राजनीतिक वर्ग के विरोध के बावजूद समग्र ढांचे में महत्वपूर्ण परिवर्तनों के लिये दबाव डाल सकता है।

और दो शब्द न्यायिक सक्रियता अथवा अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाने के बारे में। जहां तक इस विषय का प्रश्न है, यह उल्लेख करना उचित होगा कि यह हमारे संविधान में अन्तर्निहित शक्ति ही है जिसने समय-समय पर इस खाई को पाटने की कोशिश की है, और सुशासन शासन व्यवस्था में संतुलन और समझदारी बनाए रखी है। अत: उच्चतम न्यायालय के मौजूदा हस्तक्षेप को भी संविधान और गणतंत्र की उसी अन्तर्निहित शक्ति का ही एक उदाहरण माना जाना चाहिये।

उच्चतम न्यायालय के आदेशों के क्रियान्वयन के बारे में भी यहां कुछ कहना समीचीन होगा। अनेक लोगों से यह कहते हुए सुना गया है कि सरकार अपने पैर पीछे खींच लेगी और सही अर्थों में प्रशासनिक सुधारों को लागू नहीं करेगी। बताया जाता है कि पुलिस सुधारों के बारे में 2008 के प्रकाश सिंह प्रकरण में उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर अभी भी समुचित ढंग से क्रियान्वयन नहीं हुआ है। राज्य सरकारें उनको लागू करने में अनिच्छा दिखा रहीं हैं। यहां यह बताना उचित होगा कि 2014 का माहौल एक दशक के पहले के माहौल से सर्वथा भिन्न है। आज देश में एक सक्रिय, आक्रामक और मुखर मीडिया है, जो सत्ता से भयभीत नहीं होता। नागर समाज (सिविल सोसाइटी) ने एक नई ऊर्जा और प्रतिष्ठा अर्जित की है। आरटीआई (सूचना का अधिकार) पिछले 10 वर्षों में अपना अस्तित्व ग्रहण कर चुका है। देश में स्वच्छ और अच्छी शासन व्यवस्था की इच्छा बढ़ रही है। देश में उच्चतम न्यायालय के आदेशों पर गंभीरता से क्रियान्वयन के लिये अनुकूल और गंभीर माहौल है। इस निर्णय से प्रकाश सिंह मामले के संशोधित क्रियान्वयन को भी बढ़ावा मिलेगा। इसके अतिरिक्त, हाल ही में लोकपाल विधेयक का पारित होना भी एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना है। अगले एक दशक में प्रशासनिक सुधारों के बारे में उच्चतम न्यायालय के निर्णय और लोकपाल की स्थापना से प्रशासनिक व्यवस्था और कार्यप्रणाली में भारी बदलाव देखने को मिल सकता है और शासन प्रणाली की गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार देखा जा सकता है।❑

(लेखक भारत सरकार में कैबिनेट सेक्रेटरी रह चुके हैं। ई-मेल: tsrsubramanian@gmail.com **)**

पेड़ों को बचाने के लिए लोहे के हल

नंदिनी उपाध्याय

मध्य हिमालय में पाया जाने वाला बांज पर्यावरण, जल स्रोतों तथा जैव विविधता की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण वृक्ष है। यह भूमि कटाव को रोकने तथा वर्षा जल को रोककर रखने एवं उसे भू-जल में बदलने में सक्षम है। बांज एक सहजीवी वृक्ष है जो अपने आसपास तथा अन्य प्रजातियों के पेड़ों तथा झाड़ियों को उगने में मदद करता है और वन्य जीवों व वनस्पतियों के लिए आदर्श आश्रय स्थल बनाता है।

बांज की लकड़ी का उपयोग पहाड़ी क्षेत्रों में सदियों से कृषि औजार बनाने में किया जाता है जिनमें हल, दिनेला व नहेड़ आदि प्रमुख हैं। उतीस के पेड़ के तने से जुआ (बैलों के कंधे पर रखने वाला औजार) बनाया जाता है।

बांज व उतीस आदि के पेड़ों के कटने से वन आधारित नदियों व प्राकृतिक जल स्रोतों पर विपरीत असर पड़ रहा है एवं भूमि कटाव बढ़ने लगा है। एक अनुमान के अनुसार लकड़ी के हल व अन्य औजारों का विकल्प न मिलने से उत्तराखंड के अल्मोड़ा जिले में हर साल करीब 52,865 पेड़ काटे जा रहे हैं। विकल्प न मिलने से अगले दस साल में अल्मोड़ा के जंगलों से दस लाख बांज व उतीस के पेड़ों का सफाया हो जाएगा।

स्याही देवी क्षेत्रीय विकास मंच, शीतलाखेत (अल्मोड़ा) ने 'जंगल बचाओं अभियान' में सन् 2005 से 1600 हेक्टेयर क्षेत्र में काम किया है। जिससे मिश्रित वनों को बचानें में दर्जनभर गांवों के लोग आगे आए हैं।

संस्था ने विवेकानन्द, पर्वतीय कृषि अनुसंधान, अल्मोड़ा के सहयोग से धातु के हल बनाने की योजना को साकार किया इसे बी.एल. स्हायी नाम दिया गया है। 11 किलो वजन का यह हल कृषि विभाग के 400 रुपये के अनुदान के साथ 700 रुपये में खरीदा जा सकता है। संस्था ने 11 गांवों के किसानों का वन विभाग के सहयोग से यह हल उपलब्ध कराया है। इसे उत्तराखंड के गांव-गांव तक पहुंचाने के लिए संस्था काम कर रही है ताकि हर साल हजारों मनुष्य उतीस के पेड़, मित्र, पशु मित्र और पर्यावरण मित्र पेड़ों को बचाया जा सके।

बांज की लकड़ी का उपयोग पहाड़ी क्षेत्रों में सदियों से कृषि औजार बनाने में किया जाता है जिनमें हल, दिनेला व नहेड़ आदि प्रमुख हैं। उतीस के पेड़ के तने से जुआ (बैलों के कंधे पर रखने वाला औजार) बनाया जाता है।

संस्था के संयोजक गिरीश शर्मा, अध्यक्ष हरीश बिष्ट और सचिव गजेश पाठक तथा संस्थापक अध्यक्ष गजेंद्र कुमार पाठक से स्हायी देवी विकास समिति, शीतला खेत जिला अल्मोड़ा उत्तराखंड से संपर्क किया जा सकता है।

काफी समय से यह मांग हो रही थी कि पर्यायवरण, जैवविविधता तथा जल स्रोतों पर पड़ रहे प्रतिकूल प्रभावों के कारण बांज, फल्यार, मेहल, उतीस सानज आदि चौड़ी पत्तियों की प्रजाति वाले पेड़ों का हल और वृक्षों के विभिन्न प्रकार के कृषि उपकरणों को किये जा रहे कटान को रोका जाए। लेकिन समस्या यह थी कि पेड़ों का कटान रुकने से पहाड़ी क्षेत्रों के छोटे एवं मझोले किसानों के लिए दूसरा और क्या विकल्प हो सकता है। पहाड़ी क्षेत्रों में सीढ़ीनुमा खेंतों और बिखरी जोतों में भौगोलिक परिस्थितयों के कारण इंजन, डीजल से चलने वाले टैक्ट्रर या पावर ट्रीलर से खेतों की जुताई के प्रयास सफल नहीं हुए। कुछ घाटीवाले या समतल क्षेत्रों को छोड़कर पहाड़ी क्षेंत्रों में लकड़ी के हल आदि का प्रयोग हो रहा है। लौह हल बनाने के कुछ प्रयास हुए लेकिन वे किसानों तक नही पहुंच पाये और विकल्प के अभाव में पेड़ों का कटान रुक नहीं रहा।

केवल कृषि उपकरणों के लिए ही नहीं बल्कि जलावन की लकड़ी (ईंधन) के लिए भी पेड़ों का अनियंत्रित एवं अवैज्ञानिक दोहन लगातार जारी है। एक मोटे अनुमान के अनुसार उत्तराखंड के पर्वतीय इलाक़ों में चौड़ी पत्ती प्रजाति के पेड़ों को लाखों की संख्या में हर साल करीब 12 लाख गांववासी काटने के लिए मज़बूर हैं।

इस अंधाधुध कटान की उत्तराखंड के जंगलों को क़ीमत चुकानी पड़ रही है जिसका सीधा प्रभाव पर्यावरण और जैवविविधता पर पड़ रहा है। अधिकांश वन क्षेत्र खोखले हो चुके है और जो खाली स्थान है उनमें चीड़ के जंगल फैल गए है। चौड़ी पत्ती वाले पेड़ों (बांज आदि) के जंगल अब केवल सिकुड़ गए हैं। यही नही ये जंगल भी सघनता और जैवविवधता की दृष्टि से संपन्न नहीं रह पायें है।

निरंतर अनियंत्रित एंव अवैज्ञानिक दोहन से मिश्रित वनों में जल स्रोत सूख गए हैं या सूखने के कगार पर है। जिससे उत्तराखंड की कोसी, गगास, गोमती समेत अनेक नदियों और सैकड़ों जल स्रोतों में पानी लगातार कम हो रहा है जिससे पहाड़ी क्षेत्र पेयजल के गंभीर संकट का सामना कर रहे हैं।

(शेषांश पृष्ठ 56 पर)

21वीं सदी के लिए सिविल सेवा

मनीष सबरवाल

अखिल भारतीय सिविल सेवाओं के लिए प्रवेश स्तर पर भर्ती की प्रक्रिया को तोड़ने-मरोड़ने की आवश्यकता नहीं। संघ लोक सेवा आयोग की यह प्रक्रिया व्यापक रूप से निष्पक्ष, पारदर्शी मानी जाती है। लेकिन एक मात्र प्रवेश द्वार और खराब प्रदर्शन करनेवाला कोई भी संगठन दोषपूर्ण और गतिहीन-निष्क्रिय हो जाता है

भारतीय सिविल सेवा के लिए लोगों को चुनने में जटिलताओं और विवादों की शुरुआत प्रारंभ में ही हो गई थी। 1854 में जब खुले रूप से प्रतियोगी परीक्षा लागू की गई तो इसका विरोध हुआ। इस आधार पर कि परीक्षा में मज़बूत स्मरण शक्ति की आवश्यकता होती है और इसमें विश्वविद्यालयों से आने वाले उम्मीदवारों की तुलना में रटाने वाले संस्थानों के अधिक अभ्यर्थी सफल होंगे। 1886 में सर चार्ल्स इचसन की अगुवाई में लोक सेवा आयोग ने न केवल प्रांतीय सिविल सेवाएं गठित की बल्कि भारतीयों के लिए भी आईसीएस का दरवाज़ा खोल दिया। ऐसा वायसराय काउंसिल के एक सदस्य की इस चेतावनी के बावजूद हुआ कि परीक्षाओं में किशोर भारतीय यूरोपीयों की तुलना में असीमित रूप से कुशाग्र होते हैं और बहुत जल्द इस सेवा में बंगाली भर जाएंगे। स्वतंत्रता के बाद सिविल सेवाओं के लिए ढांचा बना। यह ढांचा बहुत अधिक ब्रिटिश खाके पर बना, यह समय के अनुकूल साबित हुआ और इसने कमजोर विकल्पों के कारण बेहतर उम्मीदवारों को आकर्षित किया। लेकिन अब भारत बदल गया है। अब हमें भर्ती, प्रोन्नति, भरपाई और अपने नौकरशाहों को जोखिम उठाने योग्य अधिकारिता देने के लिए व्यापक परिवर्तन करने की आवश्यकता है।

अखिल भारतीय सिविल सेवाओं के लिए प्रवेश स्तर पर भर्ती की प्रक्रिया को तोड़ने-मरोड़ने की आवश्यकता नहीं। संघ लोक सेवा आयोग की यह प्रक्रिया व्यापक रूप से निष्पक्ष, पारदर्शी मानी जाती है। लेकिन एक मात्र प्रवेश द्वार और खराब प्रदर्शन करनेवाला कोई भी संगठन दोषपूर्ण और गतिहीन-निष्क्रिय हो जाता है। वरिष्ठ पदों के लिए परवर्ती प्रवेश लंबित और सार्थक प्रभाव वाला नवीन खोज है। यह व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है कि नौकरशाह को संयुक्त सचिव या उसके समकक्ष स्तर पर स्वाभाविक रूप से पहुंचना चाहिए। उसके बाद सिविल सेवा पूल (संवर्ग) के सभी उम्मीदवारों को समान शर्तों पर बाहरी लोगों (अन्य सेवाओं के लोगों, सिविल सोसाइटी तथा निजी क्षेत्र) से स्पर्धी होना चाहिए। यह आसान नहीं होगा। लेकिन संघ लोकसेवा आयोग को पारदर्शी और निष्पक्ष प्रक्रिया के जरिये वरिष्ठ पदों के लिए एक संवर्ग बनाना होगा। इसके बाद सेना की तरह 'ऊपर और बाहर' की पूरक नीति बनानी होगी। इसके तहत विभिन्न रैंकों के लिए अवकाश प्राप्ति की विभिन्न आयु तय होगी और इस तरह संगठन स्वयं को नवीन रूप देता रहेगा।

सिविल सेवाओं के लिए मानव संसाधन ढांचे में कामकाजी प्रदर्शन प्रबंधन सर्वाधिक महत्वपूर्ण है वर्तमान बैच आधारित प्रोन्नति व्यवस्था तथा कमजोर समीक्षा प्रणाली के तहत 90 प्रतिशत से अधिक उम्मीदवारों को उच्च श्रेणी में रखा जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि व्यवस्था अच्छे और खराब प्रर्दशन के बीच भेद करने में नाकाम हो जाती है। किसी भी सुधार को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सिविल सेवा के उच्च पदों पर 58 वर्ष की आयु की जगह 45 वर्ष की आयु में लोग पहुंचे। सिविल सेवा या निजी क्षेत्र की सेवा में पहले पांच वर्ष की अवधि में प्राप्त अनुभव बहुत अलग नहीं हो सकता। मेरे जैसे निजी क्षेत्र के लोग फोटो कॉपी करने, बैठकों का ब्यौरा बनाने, बिक्री संबंधी आवश्यक बात करने तथा अनुपयोगी और जटिल कागज़ात तैयार करते हैं जबकि सिविल सेवा के मेरे मित्र जिले का संचालन करते हैं, धन आवंटन करते हैं तथा कानून-व्यवस्था देखते हैं। लेकिन समय गुजरने के साथ-साथ निजी क्षेत्र में

समान आयुवर्ग के लोग अधिक सफल होते हैं, उनमें जोखिम उठाने की क्षमता बढ़ती जाती है। लेकिन सिविल सेवा के लोग उच्च पदों पर जाकर सफल तो होते हैं लेकिन उनकी जोखिम उठाने की क्षमता कम होती जाती है। यह एक समस्या है। सरकारी, निजी तथा गैर-लाभकारी किसी भी संगठन में उच्च पदों पर कुशाग्रता की जगह साहस की आवश्यकता होती है। निश्चित रूप से असंज्ञेय कौशल को मापना कठिन होता है तथा लोक नीति उन कार्यों की तुलना में बहुपक्षीय और जटिल होती है जो स्पष्ट उद्देश्य और समय सीमा में बंधे होते हैं। लेकिन वर्तमान प्रणाली नियमों तथा प्रक्रियाओं की बुद्धिहीन जांच-पड़ताल वाले दायित्व तथा सही काम करने के दायित्व में भ्रम पैदा करती है। कोशिश करने में होनेवाली कठिनाई कोई तर्क नहीं है। हमें एक ऐसे प्रदर्शन आधारित मूल्यांकन प्रणाली की जरूरत है जो जटिलताओं (सरल पैमाना सटीक हो सकता है लेकिन पूर्ण नहीं) को स्वीकार करती हो। जटिलताएं सही होती हैं (यह 10 प्रतिशत गलती कर सकती हैं लेकिन शून्य फीसदी नुक़सान करती हैं)। यह संस्थागत होती हैं (संघ लोक सेवा आयोग को चयन की जगह कैरियर प्रबंधन का अधिकार दिया जाना चाहिए)। हमें उत्कृष्टता की दृष्टि से प्रदर्शन रेटिंग को 25 प्रतिशत तक सीमित करना होगा। गणित की दृष्टि से यह असंभव है कि एक बैच का प्रत्येक व्यक्ति औसत से ऊपर या बेहतर हो। बेहतर प्रदर्शन प्रबंधन प्रणाली हमें अपनी भरपाई प्रणाली को झटका देने योग्य बना सकती है। आज सरकार में उच्च पदों पर आसीन लोगों को जितनी राशि मिलनी चाहिए उससे कम राशि मिलती है और नीचे के पदों पर आसीन लोगों को उतनी राशि मिलती है जितनी उन्हें नहीं मिलनी चाहिए। आज प्रदर्शन आधारित वेतन नहीं मिलता। जो अदृश्य लाभ मिलते हैं उस पर सरकारी खर्च वेतन की तुलना में चार गुना अधिक होता है। निजी क्षेत्र में कंपनी लागत की अवधारणा भरपाई को पारदर्शी बनाने में सफल रही है। आशा है कि अगला वेतन आयोग नौकरशाहों को मिलने वाले लाभों को मौद्रिक रूप में देखेगा।

सिविल सेवा में सुधार के लिए उपरोक्त तीनों बिन्दुओं को अंतिम उद्देश्य के साथ जोड़ा जाना चाहिए। नई खोज को बढ़ावा दिया जाना चाहिए तथा जोखिम उठाने की क्षमता बढ़ाई जानी चाहिए। भारत की समस्याएं कैंसर या जलवायु परिवर्तन जैसी नहीं जिसका स्पष्ट समाधान नहीं दिखता हो। भारत को अधिकतर समस्याओं का समाधान पहले बनी समितियों के सुझावों के आलोक में ढूढ़ना चाहिए। इन समितियों ने बेहतर तरीके से समाधान सुझाए हैं। क्या से कैसे की ओर बढ़ने के लिए साहस, दृढ़ता और नवीनता की इच्छा होनी चाहिए। दुर्भाग्यवश नवीनता की खोज बर्बादी में बदल रही है। निश्चित तौर पर नौकरशाहों में निजी क्षेत्र की तुलना में जोखिम उठाने के प्रति उदासीनता अधिक है। सरकार जैसी वृहद और जटिल प्रणाली में तेज और व्यापक परिवर्तन के अनिच्छित परिणाम होते हैं। नियमों तथा प्रक्रियाओं के पालन की अपनी मेधा होती है लेकिन जोखिम उठाने के प्रति उदासीनता का जो ढांचा खड़ा हुआ है वह पीछे की सीट पर बैठे चालकों (सीबीआई, सीवीसी, सीएजी, मीडिया, स्वयं सेवी संगठन, एनएसी तथा न्यायपालिका) के उभरने से बड़ा हो जाता है। पिछली सीट पर बैठे चालक धोखाधड़ी, अक्षमता तथा दुर्भाग्य में कोई फर्क नहीं करते। कोई डॉक्टर आपको यह बता सकता है कि पोस्टमार्टम की एक निश्चितता होती है, नुस्खे की नहीं। युवा नेतृत्व का मामला भी जोखिम उठाने की बात से जुड़ा है, युवा नेतृत्व न तो नया है और न ही निजी और सार्वजनिक क्षेत्र, खुलेपन, आशा, दृढ़ता, लचीलापन और ऊर्जा से भिन्न। जोसफ कोनार्ड ने लिखा है - मुझे अपनी युवावस्था और भाव याद है, वह कभी नहीं लौटेंगे लेकिन मेरे भाव हमेशा रहेंगे, वह समुद्र, धरती और सभी प्राणियों से अधिक समय तक रहेंगे। लेकिन भारत में सिविल सेवा से जुड़े युवा लोगों का मामला अधिक मजबूत है। इस सेवा से जुड़े 45 वर्ष की आयु के लोग नियामकों (एनडीएमए, सीसीआई, ट्राई, आआरडीए) में नियुक्ति की ताक में नहीं रहते। ऐसी नियुक्तियां अधिकतर अवकाश प्राप्त नौकरशाहों की होती हैं-कुछ की सक्षमता के कारण लेकिन अधिकतर की राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण। युवा लोग डर-भय का मुकाबला करते हैं। लंबे कार्यकाल से नये नियुक्त हुए लोगों को एक ही काम भिन्न तरीके से करने की अपेक्षा कुछ अलग करने का मौका मिलता है। 45 वर्ष की आयु के लोग अपनी गलतियों से उबर जाते हैं, वह ठहराव की जगह नुक़सान भी सृजनात्मक तरीके से करते हैं। जैसा कि फ्रांसिस बेकन ने कहा है - युवा लोग निर्णय करने की अपेक्षा अधिक खोज करने में योग्य होते हैं, सलाह देने की अपेक्षा कार्यरूप देने में अधिक योग्य होते हैं, स्थाई काम करने की अपेक्षा कार्यरूप देने में अधिक योग्य होते हैं, स्थाई काम करने की अपेक्षा नई परियोजनाओं के लिए अधिक योग्य होते हैं। हार्वड कैनेडी स्कूल के लैंट प्रीशेट अपने अध्ययन 'द फोक एण्ड द फार्मूला' में यदि आप पहले प्रयास में सफल नहीं होते तो कुछ अलग प्रयास करें और पागलपन में फिर वहीं काम करने और अलग परिणाम की आशा करने के बीच विरोधाभास को दिखाते हैं। वह सुझाते हैं कि यह कहना सही होगा कि यदि आप पहली बार सफल नहीं होते तो कुछ अलग करने की कोशिश करें कि धारणा अधिक सही और सटीक है। वह समान आकृति वाले स्वांग के प्रति सचेत करते हुए कहते हैं कि यह छुपाने के लिए सतही प्रभाव की नकल करता है। उदाहरण के लिए केनिया में कागज़ पर भ्रष्टाचार विरोधी बेहतरीन कानून है, भारत में स्कूलों में दाखिले का प्रतिशत 100 से ऊपर है लेकिन शिक्षा परिणाम खराब है, हमारी अधिकारिक बेरोज़गारी दर 2 फीसदी है लेकिन बड़े पैमाने पर गरीबी है आदि। वह नीति में गलतियों तथा प्रयासों के लिए जगह बनाने तथा लेखा और दायित्व संबंधी लेखा में अंतर करने का आग्रह करते हैं। यह भारत के लिए प्रासंगिक है जहां

आइंस्टाइन ने एक बार अपने विद्यार्थियों की परीक्षा ली। एक परीक्षार्थी ने उनसे पूछा- इस वर्ष प्रश्न पत्र वही हैं जो पिछली परीक्षा में थे। आइंस्टाइन ने उत्तर दिया कि कोई चिंता की बात नहीं, इस वर्ष प्रश्न के उत्तर अलग हैं। यह कहानी भारत और उसकी सिविल सेवा के लिए प्रासंगिक है क्योंकि भारत आज उन्हीं तीन प्रश्नों से जूझ रहा है जो प्रश्न स्वतंत्रता के समय थे। हम राष्ट्र निर्माण कैसे करें? कैसे सामाजिक न्याय दें? और गरीबी कैसे कम करें? लेकिन आज इन तीनों प्रश्नों के उत्तर कई कारणों से अलग हैं।

पिछली सीटों पर बैठे चालक धोखाधड़ी, अक्षमता और दुर्भाग्य में कोई फर्क नहीं करते। इससे न केवल नीति उद्यमिता का वध होता है बल्कि नीति संबंधी कामकाज भी मर जाता है। यह एक ऐसी बीमारी है जिसे शरीर ने अपना लिया है। राजनीतिक नेता शासन नहीं कर रहे, नौकरशाह नीति लागू नहीं कर रहे, कोई नई खोज नहीं कर रहे और परिणामस्वरूप उद्यमी निवेश नहीं कर रहे।

लोक नीति के बारे में मेरा अहम प्रश्न यह है कि किसी मसले पर सरकार में बैठे सभी लोगों की रजामंदी के बावजूद सरकार में कैसे कोई काम करा लिया जाता है। जब मैं युवा था तो मेरी पहुंच नहीं थी, मैं सोचता था कि अधिकतर वरिष्ठ लोग मुझसे सहमत नहीं। अब मेरी पूरी पहुंच है और जनसांख्यिकी लाभ के लिए 10 नीति (रोज़गार कार्यालय, प्रशिक्षण, व्यावसायिक विश्वविद्यालय, लाभ व्यवस्था आदि) परिवर्तन पर सभी सहमत हैं। जरूरत है कि हमारे नौकरशाह व्यापक सोच, दृढ़ता और सृजनशीलता रखें। जेन जैकब ने महसूस किया कि इतिहास में नेताओं की शानदार बनने की खासियत इसलिए नहीं रही कि वे धन-संपत्ति से प्यार करते हैं बल्कि इसलिए रही कि उन्हें लोगों को अपने साथ लाने की महत्वाकांक्षा दिखाने की जरूरत होती है। यदि नौकरशाहों को विषम प्रोत्साहन मिले तो वह महत्वाकांक्षी नहीं होंगे। आज कोई नौकरशाह गलती (जो उसने नहीं की है) के लिए दंडित नहीं होता और न ही किसी अच्छे (असाधारण रूप से किए गए) कार्य के लिए उसे सराहा जाता है। लेकिन यदि कोई गलत कार्य हो जाता है तो उसके समर्थन में बहुत कम लोग खड़े होते हैं। यह ढ़ांचा यह नहीं मानता कि नया कैसे होता है क्योंकि नुक़सान और असफलता प्रक्रिया में निहित है।

आइंस्टाइन ने एक बार अपने विद्यार्थियों की परीक्षा ली। एक परीक्षार्थी ने उनसे पूछा- इस वर्ष प्रश्न-पत्र वही है जो पिछली परीक्षा में थे। आइंस्टाइन ने उत्तर दिया कि कोई चिंता की बात नहीं, इस वर्ष प्रश्न के उत्तर अलग हैं। यह कहानी भारत और उसकी सिविल सेवा के लिए प्रासंगिक है क्योंकि भारत आज उन्हीं तीन प्रश्नों से जूझ रहा है जो प्रश्न स्वतंत्रता के समय थे। हम राष्ट्र निर्माण कैसे करें? कैसे सामाजिक न्याय दें? और गरीबी कैसे कम करें? लेकिन आज इन तीनों प्रश्नों के उत्तर कई कारणों से अलग हैं। क्योंकि तीस लाख लोग चुनाव जीतते हैं, क्योंकि दस लाख बच्चे अगले 20 वर्षों तक हर महीने श्रम शक्ति में शामिल होंगे। क्योंकि हमारे पूर्वजों ने ऐसी नीति और संविधान का निर्माण किया जिसका अर्थ यह है कि सामाजिक न्याय का कार्य प्रगति पर है। लेकिन भारत के समक्ष अगले दो दशकों में गरीबी कम करना परिभाषित समस्या तथा चुनौती है। जब मैं स्नातक की पढ़ाई के लिए अमरीका गया तो मेरे मन में पहली बात यह आई कि अमरीकी हमारे तरह कुशाग्र नहीं हैं लेकिन हमसे अधिक धनी क्यों हैं? भौतिक समृद्धि के बारे में कुछ सांस्कृतिक नहीं है। हमें यह याद रखना चाहिए कि हमने पिछले दो दशकों में विकास की धीमी गति को मात दी है। इस धीमी गति को विकास की हिन्दु दर कहा जाता है। गरीबी कम करना बहुपक्षीय योजना है जिसमें सरकार, सिविल सोसाइटी तथा निजी क्षेत्र को एक साथ मिलकर काम करने की आवश्यकता होती है। आज तीनों अपनी जन्मजात कमियों से जूझ रहे हैं। सरकार को नीति लागू करने में कठिनाई है, सिविल सोसाइटी में पैमाने का दोष है तो निजी क्षेत्र में विश्वास की कमी। लेकिन और अधिक विविधता, प्रदर्शनमुखी तथा प्रेरित सिविल सेवा कम गरीब भारत के लिए महत्वपूर्ण है। आएं, हम काम प्रारंभ करें। ❑

(लेखक टीमलीज सर्विसेज के अध्यक्ष हैं।)

योजना अब फेसबुक पर

आपकी लोकप्रिय पत्रिका योजना अब फेसबुक पर Yojana Journal नाम से पृष्ठ के साथ मौजूद है। हमारे फेसबुक पृष्ठ पर आएं और हमारी गतिविधियों तथा आगामी अंकों के बारे में ताज़ी जानकारी प्राप्त करें।

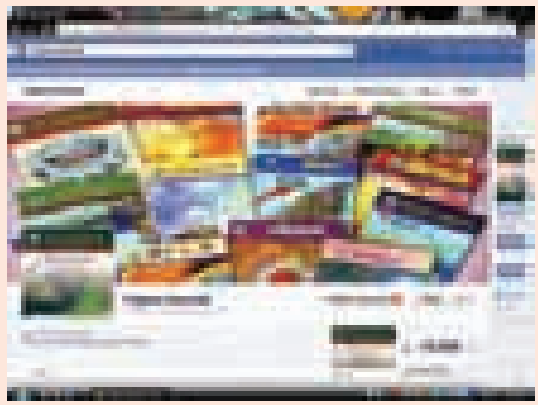

हमारा पत्ता : http://www.facebook.com/Pages/Yojana-Journal/181785378644304?ref-hL

फेसबुक पर हमसे मिलें, Like करें और अपने बहुमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराएं।

प्रशासनिक सुधार और नयी चुनौतियां

रणवीर कुमार

भारत विभिन्नताओं से भरा एक विशाल देश है जहां की आबादी एक सौ बीस करोड़ से अधिक है। जितना बड़ा देश उतना ही विकराल है यहां की प्रशासनिक मुद्दों से जुड़ी चुनौतियां। एक विकासशील, प्रगतिशील और लोक कल्याणकारी देश होने से यहां की प्रशासनिक व्यवस्था बहुत जटिल है। भारत की संवैधानिक व्यवस्था की मुख्य विशेषताएं हैं-प्रजातंत्रीय और संघीय ढांचे, जिसमें तीन स्तरीय सरकार की व्यवस्था है। ऐसी स्थितियों में प्रशासनिक सुधार हमेशा एक मुद्दा रहा है और भविष्य में भी निश्चित रूप से रहेगा। हां, प्रशासनिक मुद्दों के स्वरूप और पहलू में बदलाव संभव है।

कभी विश्व में सर्वश्रेष्ठ आंकी जानेवाली भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था की हालत पतली है। यहां चाणक्य, शेरशाह और अकबर के समय की शासन प्रणाली और प्रशासनिक व्यवस्था विश्व में आज भी एक मिसाल के रूप में देखी जाती हैं। इनके समय में कानून व्यवस्था काफी दृढ़ और मजबूत था। लोगों के लिए कई कल्याणकारी कदम उठाएं गए और राजस्व कर व लगान उत्तम कोटि की थी। उनकी प्रशासनिक सफलता की आज भी चर्चाएं होती हैं।

ब्रिटिश शासन काल में अपनी उपनिवेश और आर्थिक शोषण के लिए नौकरशाही का विशाल ढांचा तैयार किया और उसे कानूनी संरक्षण तथा तमाम विशेषाधिकार प्रदान किये। जनमानस को दूर रखा गया और प्रशासन बेलगाम रहा जिसके कारण प्रशासनिक व्यवस्था में भ्रष्टाचार लगातार बढ़ता रहा। 1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ प्रशासनिक ढांचा मूलत: प्रदत्त प्रणाली को अपनाया। कुछ अच्छाइयां और कुछ बुराइयां भारत को विरासत में मिलीं और आज स्वतंत्रता के साढ़े छह दशक के बाद भी भारत इन चुनौतियों से संघर्षशील है। यह भी स्पष्ट है कि नौकरशाही की भूमिका में बदलाव आया और देश के नवनिर्माण में इनकी निर्णायक भागीदारी बनी।

अब तक सरकार ने प्रशासनिक सुधार के लिए जो भी कदम उठाये हैं उन्हें मूलत: तीन वर्गों में बांटा जा सकता है। गुणवत्ता की बढ़ोतरी प्रशासनिक के आंतरिक तंत्र में और नागरिकों को सेवाएं देने के तरीकों में, द्वितीय राजनीतिक निष्पक्षता और तीसरा, भ्रष्टाचार को रोकने के उपाय। प्रशासनिक सुधार के विभिन्न पहलुओं और तंत्रों में बदलाव के लिए केंद्रीय या राज्य सरकारें अब तक कई आयोगों व समितियों का गठन कर चुकी हैं लेकिन कवायद में संतोषजनक परिणाम नहीं मिला। इस संबंध में प्रथम प्रशासनिक सुधार कमीशन ने एक विस्तृत रिपोर्ट बीस भागों में साठ के दशक के अंत में प्रस्तुत किया। आंशिक अनुरोध लागू हुई लेकिन आगे चलकर यह भी कारगर साबित नहीं हुआ। इसका मुख्य कारण है रिपोर्ट पूर्ण रूपेण लागू नहीं की गई और अमल में खोट रहा।

वैश्वीकरण और आर्थिक उदारीकरण के इस युग में प्रशासनिक सुधार देश के लिए अति आवश्यक है। अच्छे प्रशासन के लिए नौकरशाही में सुधार आवश्यक है। प्रशासन के विभिन्न पहलुओं में सुधार और बदलाव के लिए वीरप्पा मोइली की अध्यक्षता में प्रशासनिक सुधार आयोग का गठन 2005 में किया गया। द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग ने सब मिलाकर पन्द्रह रिपोर्ट सरकार को सौंपी हैं। जिन विषयवस्तु और शासन के पहलुओं पर रिपोर्ट दिया है उसमें मुख्य हैं,- सूचना का अधिकार, शासन में नैतिकता, ई-अधि शासन, नागरिक केंद्रीय प्रशासन मुख्य है जिनके दूरगामी प्रभाव प्रशासनिक व्यवस्था पर पड़ेगी यदि इनमें सिफ़ारिशों को प्रभावी ढंग से लागू की जाती है।

सूचना का अधिकार और ई-प्रशासन एक नयी पहल

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग ने सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 को पथ प्रदर्शक विधान बताया जो गोपनीयता के अंधकार से पारदर्शिता के युग में जाने का एक सहज व शुभ संकेत है। भ्रष्टाचार और लालफीताशाही से संघर्ष करने के लिए सूचना का अधिकार एक सशक्त साधन है। यदि सूचना का अधिकार अधिनियम कारगर ढंग से अमल किए जाएं तो जन भागीदारीपूर्ण प्रजातंत्र संभव है। इसके माध्यम से प्रशासन में पारदर्शिता, जवाबदेही और खुलेपन का आगमन हुआ है। इससे सरकारी काम-काज चुस्त और दुरुस्त भी देखने को मिल रहा है। नि:स्संदेह सूचना का अधिकार एक क्रांतिकारी कदम है जो प्रशासनिक सुधार का एक मजबूत स्तंभ है और उत्तम शासन की कुंजी है। सबसे अच्छी बात यह है कि आम लोगों में यह काफी लोकप्रिय है और हाल के वर्षों में इस माध्यम से कई बड़े-बड़े भ्रष्टाचारों का खुलासा हुआ है। सूचना के अधिकार की तरह ई-अधिशासन एक अच्छी शुरुआत और एक ठोस कदम है।

प्रशासनिक सुधार में ई-शासन यानी आधुनिक तकनीक प्रौद्योगिकी के माध्यम से लालफीताशाही, शासन में गुणवत्ता में निरंतर सुधार प्राप्त करना और ज्ञान की भागीदारी, सामयिक और उपयोगी सूचना ऑनलाइन उपलब्ध करना, प्राद्यौगिक समाधानों का विकास, निगरानी और मूल्यांकन, भूमि अभिलेखों के कंप्यूटरीकरण संबंधी परियोजना शामिल हैं। द्वितीय सुधार आयोग ने अपनी विभिन्न रिपोर्टों में सरकारी और शासकीय प्रक्रियाओं में सुधारने के लिए ई-अधिशासन प्रारंभ करने और नागरिक केंद्रित करने के साथ जिम्मेवारी और पारदर्शिता का अवयव लाने को अति आवश्यक समझा है। सूचना और संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग प्रक्रिया सरलीकरण, पारदर्शिता और जिम्मेदारी बढ़ाने तथा एकल स्थल के माध्यम से सेवाओं की सुर्पुदगी हो। डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम, ने भारतीय परिप्रेक्ष्य में ई-अधिशासन के महत्व को इन शब्दों में व्यक्त किया "सीमाहीन पहुंच, सुरक्षित और अंत: विभागीय सीमाओं को पार करते हुए सुरक्षित और सूचना के प्रामाणिक प्रवाह और नागरिकों को उचित और पक्षपात रहित सेवा प्रदान करने सहित एक पारदर्शी स्मार्ट ई-अधिशासन।"

नि:स्संदेह ई-अधिशासन के आगमन से प्रशासनिक सुधार के विभिन्न पहलुओं में सफलता दिलाई है, साथ ही कई चुनौतियां भी उभर आई हैं। मसलन, ई-अधिशासन के सफल कार्यान्वयन के लिए अनुकूल वातावरण, परियोजनाओं की पहचान और प्राथमिकता, लोगों में जागरुकता, नये-नये प्रौद्योगिकी संसाधनों का अभाव, ई-अधिशासन के लिए कानूनी ढ़ांचा तैयार करना इत्यादि।

मोइली प्रशासनिक सुधार आयोग की चौथी रिपोर्ट जनवरी 2007 में आयी वह शासन में नैतिकता के संबंधित है। सर्वोच्च न्यायालय और चुनाव आयोग की सक्रियता के चलते हाल के वर्षों में उठाये गये कदमों का संज्ञान लेते हुए द्वितीय सुधार आयोग ने राजनीतिक क्षेत्र में स्थायित्व जवाबदेही को लेकर कई सिफ़ारिशें की हैं। एक अच्छे शासन के कई मापदंड होते हैं जिसमें कानूनी नियम, रिश्वत की अनुपस्थिति और सरकारी अनुपस्थिति है जो नैतिक शासन के संदर्भ में प्रत्यक्ष रूप से महत्वपूर्ण है। आयोग ने संविधान के अनुच्छेद 311 को समाप्त करने का सुझाव दिया है। यह अनुच्छेद नौकरशाह को संरक्षण प्रदान करता है जिसे भ्रष्टाचार रोकने में बाधक माना गया है।

संविधान के अनुच्छेद 311 में प्रावधान है कि केन्द्र और राज्य के अधीन कार्यरत किसी सिविल सेवक को उसके पद से हटाने का अधिकार केवल उसकी नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी को है। यह भी प्रावधान है कि आरोपों की जांच किए बगैर उसको पद से नहीं हटाया जाएगा या पदावन्नत नहीं किया जाएगा अथवा उसकी वरीयता श्रेणी में फेरबदल नहीं किया जा सकेगा। उसे उन आरोपों की जानकारी देना और उसके पक्ष को सुनने का अवसर दिया जाना जरूरी है। गलत आचरण या आपराधिक आरोप की पुष्टि होने पर ही उसे पद से हटाया जा सकता है।

सुधार आयोग का तर्क़ है दुनिया में कहीं भी बेईमान नौकरशाह को बचाने का प्रावधान नहीं है। भ्रष्टाचार उन्मूलन के लिए संविधान के इस प्रावधान को निरस्त करना आवश्यक है। भ्रष्टाचार की रोकथाम पर गठित संचालन समिति ने भी इस अनुच्छेद को हटाने की सिफ़ारिश 1968 में की थी। यह प्रावधान कई कानूनी पचड़े को जन्म देता है।

संक्षेप में, द्वितीय प्रशासनिक सुधार की मुख्य सिफ़ारिशें इस तरह हैं, संविधान के अनुच्छेद 256 तथा 355 में सुधार और अनुच्छेद 311 का निरस्तिकरण, संवैधानिक संकट/विशेष परिस्थितियों में सीधे सेना/ सुरक्षाबल तैनाती का केन्द्र का अधिकार, पुलिस के ख़िलाफ़ शिकायत के लिए अलग स्वतंत्र शिकायत प्राधिकरण संगठन, राजनीतिक हस्तक्षेप में दंड का प्रावधान, सीबीआई के कार्यों के संचालन के लिए नया कानून, आर्मड् फोर्सेज 1958 निरस्त करने का सुझाव, मीडिया को सभी तथ्य मुहैया हो, हिंसा भड़काने पर सम्बन्धित दलों/ व्यक्तियों पर क्षतिपूर्ति की भरपाई करने का प्रावधान आदि।

प्रशासनिक सुधार आयोग कार्य देश में नौकरशाही को कारगर, जवाबदेह और परिणाम देनेवाली व्यवस्था कायम करना है। ऐसी शासन व्यवस्था का प्रारूप तैयार किया है जिससे आम आदमी का शासन व्यवस्था पर भरोसा कायम हो। आम लोगों की भागीदारी, नीतियां और कार्यक्रम बनाने और इनके कार्यान्वयन में सुनिश्चित हो। सूचना, पारदर्शिता, खुलेपन से प्रशासनिक भ्रष्टाचार पर भी अंकुश लगेगी।

प्रशासनिक सुधार की राह में सबसे बड़ी चुनौती नौकरशाही में राजनीतिक दखलअंदाजी है। अफसरों के तबादलों, नियुक्तियों और प्रोन्नतियों में बढ़ते राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण कई अफसरों के मनोबल पर प्रतिकूल असर पड़ता है। कार्यकुशलता और प्रशासनिक जवाबदेही कम हो जाती है। आम जनता की हितों की रक्षा नहीं हो पाती है। सत्ताधारी राजनीतिक दबाव में इनकार करनेवालों का तबादला कम महत्वपूर्ण माध्यमों में कर दिया जाता है। कभी-कभी गोपनीय रिपोर्ट भी खराब कर जाती है। जब तक नौकरशाही को राजनीतिक हस्तक्षेप से छुटकारा नहीं मिलेगी, पारदर्शी और जवाबदेही प्रशासन की आशा बेकार है। ईमानदार अधिकारी राजनीतिक दखलअंदाजी के ज्यादा शिकार होते हैं। नौकरशाह की राजनीतिकरण होने से जो सरकारें आती हैं। वे पूर्व शासन के करीब रहे अधिकाररियों का तबादला कर देते हैं। काम की संस्कृति पर भी राजनीतिकरण का असर देखने को मिलता हैं।

यह अजीब बात है कि प्रशासनिक सुधार के लिए कई समितियां बनीं और उनकी रिपोर्ट भी आईं लेकिन संतोषजनक सुधार नहीं हो पाया। आज भी लालफीताशाही किसी न किसी रूप में विद्यमान है। फाइलों की संख्या में अपार वृद्धि हुई है। हाल के दिनों में सूचना के अधिकार और ई-अधिशासन की प्रक्रिया से प्रशासनिक व्यवस्था में काफी बदलाव आया है। आम जनता आज अपने अधिकारों के प्रति ज्यादा जागरूक हैं।

आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण का विस्तार होने से नौकरशाही की चुनौतियों में बदलाव आया है। नौकरी के प्रति जोश और प्रतिबद्धता में कमी, आला अधिकारी के नौकरी छोड़ने की मंशा बढ़ी वे कॉरपोरेट क्षेत्र में बेहतर विकल्प की तलाश में रहते हैं। नौकरशाही में डिप्रेशन भी शिकायत भी एक चिंता की बात है। नौकरी के प्रति लोगों में निरसता का भाव और ताज़गी का अभाव देखने को मिलता है। काम के माहौल को बेहतर, प्रशिक्षण, काम का सही मूल्यांकन और प्रोत्साहन से कुछ हद तक इनकी खामियों को दूर किया जा सकता है और प्रशासनिक तंत्र को चुस्त, दुरुस्त और अद्यतन से बेहतर और संतोषजनक काम की संस्कृति संभव है। इसके अतिरिक्त प्रशासन में सुधार के लिए मनोवृति में बदलाव की आवश्यकता है।

प्रशासनिक सुधार एक सत्त प्रक्रिया है। समय-समय पर आवश्यकतानुसार इसमें बदलाव किये जाने चाहिए। वर्तमान में प्रचलित प्रशासनिक व्यवस्था भारत जैसे विशाल देश के लिये उपयुक्त है। इसी व्यवस्था को ईमानदारी से लागू हो तो सकारात्मक परिणाम मिलने की आशा की जा सकती है। खामियां और दोष यहां की प्रशासनिक व्यवस्था में नहीं है। बल्कि उसका भलीभांति अनुपालन न होने के कारण में निहित है। देश के कई राज्यों में वर्तमान शासन व्यवस्था सफल है जबकि कुछ राज्यों में आशाजनक सफलता नहीं मिली। एक महत्वपूर्ण सवाल है कि जब प्रशासनिक व्यवस्थाएं पहले सुचारू रूप से चल रही थी तो उनके स्तर में गिरावट क्यों हाल के वर्षों में उभर आई है। इसके लिए कुछ सुधार और परिवर्तन की आवश्यकता है। स्थापित प्रशासनिक व्यवस्था का यथाशक्ति और पूरी क्षमता से आकलन हो। आज गुड गवर्नेंस समय की मांग है। इसके लिए कुछ सुधारों के साथ वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था सक्षम और उपयुक्त है। विश्व के कई लोकतांत्रिक देशों में हमारी जैसी प्रशासनिक व्यवस्था सफल है और हमारे देश में भी बहुत हद तक सार्थक रहा है। ❑

(लेखक लोकसभा सचिवालय में संयुक्त निदेशक हैं)

(पृष्ठ 26 का शेषांश)

हिंदू समाज में विधवाओं की दुर्दशा से वे बहुत दुखी थे। वे कहा करते थे कि छोटी-छोटी बच्चियों पर वैधव्य थोपना एक जघन्य अपराध है, जिसके लिए हिंदुओं को हर रोज़ भारी क़ीमत चुकानी पड़ रही है। गांधीजी महिला संगठनों तथा समाज सुधार में लगे पुरुष कार्यकर्ताओं से कहा करते थे कि वे समाज में विधवा-विवाह, विशेषकर बाल-विधवाओं के पुनर्विवाह के पक्ष में वातावरण बनाने का प्रयास करें। 21 फरवरी, 1926 को *नवजीवन* अख़बार में एक विधवा से प्राप्त पत्र की चर्चा करते हुए गांधीजी ने लिखा: 'अपने अनुभव से मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि कोई बाल-विधवा बड़ी होकर यदि फिर से शादी करना चाहे तो उसे इसकी पूरी आज़ादी होनी चाहिए। न केवल उसे पुनर्विवाह के लिए प्रेरित किया जाए, बल्कि उसके मां-बाप को चाहिए कि वे उसका सहीं ढंग से पुनर्विवाह करें।'

गांधीजी ने बाल-विवाह पर अपनी आपत्ति अनेक बार प्रकट की। 14 अक्तूबर, 1926 को *यंग इंडिया* समाचार पत्र में गांधीजी ने बंगाल में 60 साल के एक व्यक्ति द्वारा अपनी बेटी की उम्र की बच्ची से शादी करने की घटना का उल्लेख करते हुए समाज के कर्णधारों से कहा कि वे बाल-वधुओं और बाल-विधवाओं को अमानवीय कष्टों से मुक्ति दिलाने के लिए सामाजिक नियमों को बदलें।

महात्मा गांधी की स्वस्थ सामाजिक सोच में महिलाओं को पुरुष के समकक्ष मानने में कहीं कोई अस्पष्टता या संशय दिखाई नहीं देता। वास्तव में वे मन, वचन और कर्म से महिला-पुरुष समानता के प्रबल समर्थक थे। बल्कि कुछ मामलों में वे स्त्री को पुरुष की तुलना में अधिक सशक्त समझते थे। इनमें अहिंसा, सत्याग्रह, ममता, स्नेह, प्रेम, अध्यात्म, धर्म और नैतिकता आदि तत्व शामिल हैं। गांधीजी की मान्यता थी कि भावों में उदारता में पुरुष वर्ग महिलाओं के सामने नहीं टिक सकता। गांधीजी की इस मान्यता की पुष्टि उनके निम्नलिखित उद्धरणों से होती है:

* यदि शक्ति का अभिप्राय नैतिक शक्ति से है तो महिला निश्चित रूप से पुरुष से कहीं ऊंची है।

* दिल को छूने में महिलाओं से आगे कौन हो सकता है?

* यदि अहिंसा हमारा नियम है तो भविष्य महिलाओं के पक्ष में है।

* भाषाएं घोषित करती हैं कि महिला पुरुष की अर्द्धांगिनी है। इसी तर्क के अनुसार, पुरुष भी महिला का अर्द्धांग है। ❑

(लेखक आकाशवाणी में समाचार निदेशक रह चुके हैं। ई-मेल : setia_subhash@yahoo.co.in

फार्म-4

प्रत्येक वर्ष फरवरी की आखिरी तारीख के बाद आने वाले पहले अंक में प्रकाश्य *योजना* (हिंदी)मासिक पत्रिका के स्वामित्व तथा अन्य विवरण :

1.	प्रकाशन का स्थान	नयी दिल्ली
2.	प्रकाशक की अवधि	मासिक
3.	मुद्रक का नाम	ईरा जोशी
	नागरिकता	भारतीय
	पता	प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, नयी दिल्ली-110 003
4.	प्रकाशक का नाम	ईरा जोशी
	नागरिकता	भारतीय
	पता	प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, नयी दिल्ली-110 003
5.	संपादक का नाम	रेमी कुमारी
	नागरिकता	भारतीय
	पता	*योजना,* 506, योजना भवन, संसद मार्ग, नयी दिल्ली-110 001
6.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो पत्रिका के पूर्ण स्वामित्व में कुल पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के स्वामी/हिस्सेदार हों	सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार नयी दिल्ली-110 001

मैं, ईरा जोशी, एतद् द्वारा घोषणा करती हूं कि ऊपर दिए गए विवरण मेरी पूरी जानकारी एवं विश्वास के अनुसार सत्य हैं।

दिनांक : 21.02.2014

ह./(ईरा जोशी)
प्रकाशक

अनसुनी आवाज

जोहार। मोबाइल वाणी में आपका स्वागत है यह आवाज़ शहरों में रहने वाले लोगों के लिए अपरिचित हो सकती है लेकिन झारखंड के सुदूर क्षेत्रों के गांवों में रहने वाले तकरीबन एक लाख ग्रामीणों के लिए यह जानी-पहचानी आवाज़ है। ये लोग प्रतिदिन झारखंड में आवाज़ आधारित सोशल नेटवर्क मोबाइल वाणी से जुड़ते हैं और अपनी दुख-तकलीफें कहते-सुनते हैं। संथाल परगना के एक आदिवासी गांव के 40 वर्षीय राजीव मुर्मू को झारखंड में मोबाइल वाणी के रूप में एक ऐसा मित्र मिला है जिससे वह दिन में किसी भी समय अपना दुख-दर्द कह सकता है। उसे चाहे भ्रष्टाचार की शिकायत करनी हो या गांव वालों की किसी समस्या का समाधान तलाशना हो मोबाइल वाणी हर समय उसके साथ है। उसे पूरा भरोसा है कि उसकी आवाज़ सुनी जा रही है।

राजीव और उसके साथियों में यह भरोसा पैदा करने वाली कंपनी दिल्ली की सामाजिक प्रौद्योगिकी की ग्राम वाणी है। कंपनी सूचना के प्रवाह को ऊपर से नीचे की ओर को बदलते हुए नीचे से ऊपर की ओर किया है। ग्राम वाणी की स्थापना वर्ष 2009 में की गयी और डॉ. आदित्येश्वर सेठ इसके सह संस्थापक हैं। डॉ. सेठ को इसका विचार वर्ष 2008 में एक प्रतिस्पर्धा के दौरान आया। इसी समय वे कनाडा में अपनी पीएचडी उपाधि की तैयारी में भी जुटे थे। यह प्रतिस्पर्धा का आयोजन नाईक फाउंडेशन ने भारत में सामुदायिक रेडियो की अवधारणा तलाशने के लिए किया था। इसी समय भारत सरकार ने यह महसूस किया कि अगर समय पर उचित कदम नहीं उठाए गए तो विकास कार्यक्रमों के दायरे में आने से ग्रामीण आबादी का एक बहुत बड़ा हिस्सा छूट सकता है। इसीलिए सामुदायिक रेडियो की नीति को बढ़ावा दिया गया।

नाईक फाउंडेशन ने वक़्त की ज़रूरत को समझा और एक प्रतिस्पर्धा का आयोजन किया जिसमें ऐसी प्रौद्योगिकी विकसित करने पर जोर दिया गया जिसे सामुदायिक रेडियो का पहली बार इस्तेमाल करने वाला व्यक्ति भी उपयोग कर सके। डॉ. सेठ पहले ही ग्रामीण भारत में इंटरनेट संपर्क प्रणाली पर शोध कर चुके थे। उन्होंने इस चुनौती को स्वीकार किया और ऐसी ही तकनीक विकसित की तथा प्रतिस्पर्धा में विजयी बने। इसके फलस्वरूप उन्हें सामाजिक नेटवर्क ग्राम वाणी स्थापित करने के लिए अनुदान मिला। यह सामाजिक विकास की दुनिया में उनका पहला कदम था।

सबसे पहले ग्राम वाणी को शुरू किया गया और इसे ग्रिन्स ग्रामीण रेडियो इंटर नेटवर्किंग सिस्टम कहा गया। इसे सामुदायिक रेडियो स्टेशन संचालित करने की प्रौद्योगिकी से सुसज्जित किया गया। इसमें कार्यक्रमों की समय सारिणी टेलिफोन सुनने और रिकार्ड करने की सुविधा, एसएमएस स्वीकार करने, इंटरनेट से जुड़ने, विषय प्रबंधन और आंकड़ा विश्लेषण की तकनीक भी शामिल की गई।

प्रारंभिक योजना में नीति-निर्माताओं को ग्रामीण भारत से जोड़ने के लिए देशभर में तीन हज़ार से चार हज़ार सामुदायिक रेडियो स्टेशन स्थापित किए जाने थे। लेकिन दुर्भाग्य से यह नहीं हो पाया। देशभर में केवल 125 सामुदायिक रेडियो स्टेशन हैं जिनमें से 12 राज्यों में मात्र 35 ग्रिन्स प्लेटफार्म पर चल रहे हैं। ग्रिन्स का इस्तेमाल कर रहे सामुदायिक रेडियो स्टेशन ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना और पंचायत की बैठकों का सीधा प्रसारण करते हैं। विभिन्न स्कूलों में फोन पर अत्यांक्षरी का आयोजन होता है और उसका प्रसारण सामुदायिक रेडियो से किया जाता है। एक रेडियो स्टेशन पर इंडियन आइडोल की तर्ज़ पर लोक संगीत का रियलिटी शो होता है। ग्रिन्स का इस्तेमाल श्रोताओं की राय जानने के लिए भी किया जाता है। अन्य रेडियो स्टेशन ग्रिन्स के जरिये आईवीआर आधारित फरमाईशी कार्यक्रम भी चलाते हैं। इसके अलावा ग्रिन्स के जरिये प्रश्नोत्तर कार्यक्रम नरेगा और पीडीएस से जुड़ी समस्याओं और बेनाम रिपोर्टिंग तथा अन्य कार्यक्रम भी चलाते हैं।

सामाजिक उद्योग संगठन होने के कारण ग्राम वाणी राजस्व का अर्जन अपनी प्रौद्योगिकी से गैर लाभकारी संगठनों को सामुदायिक रेडियो चलाने, हेल्पलाइन चलाने, आंकड़े एकत्र करने में मदद करके करता है। ग्राम वाणी गैर संगठनों को आकलन और सामाजिक ऑडिट रिपोर्ट तैयार करने में मदद करता है। ग्राम वाणी में कारोबार विकास एवं रणनीति के उपाध्यक्ष आशीष टंडन कहते हैं दानदाताओं और कार्यक्रम लागू करने वाली एजेंसियों के बीच अक्सर आकलन रिपोर्ट को लेकर नोक-झोंक होती है। दानदाता हाथ से लिखी रिपोर्ट नहीं चाहते और दस हज़ार परिवारों की

आकलन रिपोर्ट मांगते हैं। वास्तव में वे हर तथ्य और हर पल की जानकारी चाहते हैं। वे जानना चाहते हैं कि क्या आप वास्तव में इन परिवारों से मिले हो? क्या इस आकलन रिपोर्ट में लाभार्थी का पूरा ब्यौरा है? क्या उनके जीवन में कोई बदलाव आया है? इससे कुछ नहीं होता।

ग्राम वाणी टीम का मानना है कि अगर सामाजिक उद्देश्य के साथ कोई कंपनी लाभ आधारित भी है तो उसे उद्देश्यों से जुड़ने के लिए समर्पण भावना और दृष्टिकोण की जरूरत होगी जिसे समय की कसौटी पर कसा जा सके। यह एक ऐसा क्षेत्र था जहां ग्राम वाणी की टीम गैर लाभकारी संगठनों की जरूरतों का वास्तव में समाधान कर सकती थी। इस चुनौती ने डॉ. सेठ को एक काम करने के लिए प्रेरित किया 'जिसे वी. ओटोमेट वायस सोल्यूशन' के नाम से जाना जाता है। वी ओटोमेट के तहत ऐसे कई उत्पाद हैं जिन्हें सर्वेक्षण करने और ग्रामीण कॉल सेंटर स्थापित करने में इस्तेमाल किया जा सकता है। वी आटोमेट से ग्राम वाणी को गैर लाभकारी संगठन और कार्पोरेट जगत के बहुत उपभोक्ता मिले हैं।

हालांकि सामुदायिक रेडियो के संचालन में भी वी आटोमेट बेहतर काम करता है लेकिन ग्राम वाणी की टीम बढ़ते डिजिटल अंतर के मुद्दे से निपटने के तौर-तरीकों पर विचार कर रही है।

शहरी आबादी की इंटरनेट तक आसान पहुंच है लेकिन ग्रामीण इलाकों में जहां मात्र दो हज़ार रुपये की आय में सात सदस्यों वाला परिवार गुजर-बसर करता हो वहां इंटरनेट के इस्तेमाल का सवाल ही पैदा नहीं होता। इस स्थिति ने ग्रामीण आबादी को विकास के सम-सामयिक मॉडल में पिछे कर दिया है।

श्री टंडन कहते हैं हाल के हीं चुनावों में भ्रष्ट राजनेताओं के बारे में जनता को जागरूक करने में सोशल मीडिया के इस्तेमाल ने हमारे सामने एक उदाहरण पेश किया है। कल्पना करो कि अगर यह राष्ट्रीय स्तर पर भी हो जाए तो? लेकिन डिजिटल अंतर के कारण हमारी 70 प्रतिशत आबादी की पहुंच इंटरनेट तक नहीं है। यह आबादी इस क्रांति से अलग रहेगी।

यह टीम इस बात को भली-भांति जानती है कि एक निश्चित आर्थिक स्तर प्राप्त होने तक इस समस्या का इंटरनेट कोई समाधान नहीं है। पूरी टीम नये तरीके से सोचती है लेकिन यह मानती है कि ग्रामीण समुदायों के लिए इंटरनेट का कोई आर्थिक महत्व नहीं है। ग्रामीणों के पास पहले से हीं एक तकनीक है जिसका वे आसानी से इस्तेमाल करते हैं। यह मोबाइल फोन है। इससे ही मोबाइल वाणी का जन्म हुआ।

मोबाइल वाणी में एक उपयोगकर्ता के तौर पर आपको एक नंबर मिलाना होता है। इससे आप सर्वर से जुड़ जाते हैं और आपको कई विकल्प उपलब्ध होते हैं। इनमें अपनी बात कहना, शिकायत करना, नया सीखना और किसी की रुचि के संबंध में पूछना भी शामिल है। और अंत में उपयोगकर्ता अपनी टिप्पणी दे सकता है और चल रहे किसी भी सर्वेक्षण में हिस्सा ले सकता है। यह परंपरागत रेडियो की तरह नहीं है जहां सूचना का प्रवाह एकतरफा होता है बल्कि यह लोगों को अपने से जोड़े रखता है और उनको अपनी बात कहने के लिए एक मंच उपलब्ध कराता है।

दुमका के एक स्थानीय पत्रकार शैलेंद्र सिन्हा के अनुसार मोबाइल वाणी ग्रामीण लोगों की आवाज़ बन गई है। सरकार और मीडिया द्वारा अनदेखा किए गए ग्रामीणों को आखिरकार एक मंच मिल ही गया जहां वे अपने स्वास्थ्य, बेरोज़गारी और शिक्षा के बारे में बिना किसी भय के बात कर सकते हैं और दूसरी ओर से किसी संबंधित अधिकारी से जवाब मिलने के बारे में विश्वस्त हैं।

आज के समय में लातेहार में कोई व्यक्ति रांची के किसी व्यक्ति को सुन सुकता हैं जोकि उससे अधिक शिक्षित और जानकार हैं। इसके अलावा समसामयिक मुद्दों पर नियमित कार्यक्रम प्रसारित किया जाता है। इस कार्यक्रम में दो एंकर समाचार-पत्रों में प्रकाशित राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर मनोरंजनात्मक ढंग से चर्चा करते हैं और ग्रामीणों को आवश्यक सूचनाएं उपलब्ध कराते हैं।

ग्रामीणों को राष्ट्रीय राजधानी में लिए जा रहे उन निर्णयों की जानकारी है जो उनको प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष ढंग से प्रभावित करती हैं। श्री टंडन कहते है 'मोबाइल वाणी का एक प्रभाव यह हुआ है कि इससे ग्रामीणों के दृष्टिकोण में बदलाव आया है।' उदाहरण के लिए एक निरक्षर ग्रामीण के लिए समुदाय का तात्पर्य केवल उसके गांव के एक सौ घर होते हैं। उन्हें उस प्रशासनिक खंडों की जानकारी नहीं है जिससे एक जिला बनता है और इससे आगे का प्रशासनिक ढांचा तैयार होता है। मोबाइल वाणी सुनकर सरकार के विकास दायरे से बाहर रह रहे ग्रामीणों की इस परिभाषा में परिवर्तन आया है।

टीम द्वारा चलाए जा रहे अभियान की विषयवस्तु उन ग्रामीणों से आती है जो मोबाइल वाणी के वी सर्वेक्षण में हिस्सा लेते हैं। सर्वेक्षण के दौरान सबसे अधिक चर्चित विषय अभियान में परिवर्तित कर दिए जाते हैं। इन समस्याओं से निपटने के लिए टीम थिएटर और परिचर्चा जैसे रचनात्मक तरीके अपनाती हैं। किसी एक कार्यक्रम के दौरान बनी कोई विषयवस्तु भविष्य की गतिविधियों का हिस्सा बन जाती है।

इसके अतिरिक्त ध्वनि तकनीक का इस्तेमाल करते हुए मोबाइल वाणी के झारखंड के विभिन्न जिलों में 22 सामुदायिक कार्यकर्ता काम कर रहे हैं। वे ग्रामीणों तक पहुंच बनाते हैं और बैठकों का आयोजन करते हैं। इन बैठकों में वें न केवल सामाजिक मुद्दों पर चर्चा करते हैं बल्कि उन्हें लोकगीत और लोककलाओं में भाग लेने का मौका भी मिलता है। हालांकि इन बैठकों और सर्वेक्षणों में ग्रामीण महिलाओं की हिस्सेदारी अपेक्षाकृत कम होती है। श्री टंडन ने बताया हम अपने कार्यक्रमों में एक चुनौती का सामना करते हैं। हालांकि महिलाओं के लिए विशेष रूप से कार्यक्रम बनाने से हालात में कुछ सुधार हुआ है लेकिन हमें महिलाओं की बड़ी भागीदारी की ज़रूरत है।

अब अपने पांचवें वर्ष में ग्राम वाणी तीसरी दुनिया से एक चुनौती का सामना कर रहे हैं। दानदाताओं को यह समझाना मुश्किल हो रहा है कि तकनीक कैसे समुदायों को सशक्त बना सकती है और कैसे किसी परियोजना के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक हो सकती है? लेकिन बहुत सारी कहानियां हक़ीक़त में बदल चुकी है और बहुत सारी सफलताएं हैं, इसलिए टीम को पूरा भरोसा है कि देशभर में उसकी शाखाएं बन जाएगीं। डॉ. सेठ के अनुसार पिछले पांच वर्ष में बहुत कुछ बदला है। एक चीज़ कभी नहीं बदली कि समुदायों का सशक्तीकरण करना है। ❑

(चरखा फीचर्स)

धान बुआई की मशीन

रंजीत मिरिग

धान की बुआई में आनेवाली कठिनाइयों और परेशानियों से तंग आकर 60 वर्षीय रंजीत मिरिग, ने खुद हीं एक धान बुआई की मशीन बना डाली। उसने इस मशीन का पहला प्रारूप 1986 में हीं तैयार कर लिया था और हर साल इसमें कुछ-न-कुछ आवश्यक संशोधन करता रहा और अंतत: 2008 में उसने इस मशीन को अंतिम स्वरूप दिया। एनआईएफ के तत्वाधान में तथा आईआईटी खड़गपुर के सहयोग से यह मशीन सफलतापूर्वक काम भी करने लगी है।

रंजीत का जन्म एक गरीब दलित परिवार में हुआ था जो पूर्ण रूप से कृषि पर आश्रित था। आर्थिक रूप से कमजोर रंजीत अपनी प्रारंभिक शिक्षा भी पूरी नहीं कर पाया और खेती-बाड़ी में अपने पिता का हाथ बटाने लगा। धान की बुआई के दौरान उसे अक्सर बुआई करने वाले मजदूरों को तैयार करने में काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता था। अक्सर मज़दूर या तो मिलते नहीं थे या मिलते भी थे तो बुआई करने को तैयार नहीं होते। साथ ही साथ हर साल इन मज़दूरों की मज़दूरी भी बढ़ती जा रही थी। इनको इकट्ठा करना और इनकी नाजायज मांगों को पूरा करना भी रंजीत को महंगा पड़ रहा था। इन सभी परेशानियों का सामना करते-करते रंजीत तंग आ गया था। इसलिए उसने सोचा कि क्यों न कुछ ऐसा किया जाए जिससे उसे किसी पर आश्रित न होना पड़े। इसी सोच के साथ उसने 1986 में ही ऐसी ही एक मशीन के निर्माण पर कार्य करना शुरू कर दिया और अंतत: 25 वर्षों के निरंतर प्रयास से उसने इस मशीन का एक सफल मॉडल तैयार कर डाला। इस मंजिल तक पहुंचने का सफ़र काफी संघर्षपूर्ण और चुनौतीयों से भरा था पर रंजीत ने हार नहीं मानी।

रंजीत शायराना अंदाज में कहते हैं----

पथ है पथरीला, जाना है दूर

पांव में होंगे छाले भी, मगर जाना है जरूर।

कभी-कभी उसे आश्चर्य होता कि जिन भारतीय वैज्ञानिकों ने सौर-मंडलों और कई ग्रहों तक पर पहुंचने में सफलता पायी है, उन्होंने अभी तक ऐसी मशीन का निर्माण कैसे नहीं किया। इसी चुनौती से रंजीत और भी उत्साहित हुएं तथा पूरे जोशो-खरोश के साथ इस मशीन को बनाने में लग गएं।

क्या है यह मशीन और यह कैसे काम करती है

इस बुआई मशीन को चलाने के लिये दो लोगों की ज़रूरत होती है। पहला मशीन को आगे की ओर खींचता है जबकि दूसरा मशीन में लगे हैंडल को घुमाता रहता है जिससे ट्रे में रखे धान के पौधे नीचे जमीन की सतह पर गिरते जाते हैं। यह मशीन एक ही साथ पांच कतारों में बुआई कर सकती है। वह भी इस तरह से कि एक कतार से दूसरे कतार के बीच की दूरी 18 से.मी. तथा एक पौधे से दूसरे पौध की दूरी 15 से.मी. रहती है। इस मशीन से एक घंटे में 0.3 एकड़ में बुआई की जा सकती है। जब आईआईटी खड़गपुर में इस मशीन का परीक्षण हुआ तो पाया गया कि मजदूरों द्वारा बुआई करने में जो समय लगता था उसका सिर्फ़ 1/7 भाग समय ही यह मशीन लेती है।

परंपरागत ढंग से धान की बुआई करने में लोगों को लंबे समय तक पानी में

खड़ा रहना पड़ता है जिससे कई चर्म रोग होने की संभावना रहती थी। इस मशीन के निर्माण से पानी में लंबे समय तक खड़े रहने की जरूरत भी नहीं रह गयी है और चर्म रोगों की संभावना भी कम हो गयी है।

रंजीत को विश्वास है कि यह मशीन भारतीय किसानों की समस्याओं को काफी हद तक दूर कर सकेगी। वह चाहता है कि उसकी आने वाली पीढ़ियां इस मशीन में और भी संशोधन करें। उसके परिवार के युवा सदस्य भी इसके प्रति काफी उत्साहित दिखते हैं। उन्हीं लोगों के सहयोग से रंजीत आज अपने मुकाम को पा सका है। इसके लिए वह अपने परिवार के सदस्यों का आभारी भी है।

हालांकि कुछ बातों को याद कर वह दुखी भी हो उठता है। जैसे मशीन निर्माण के दौरान वह गांव वालों का व्यवहार वे उसे पागल तक भी कहने लगे थे, और उससे दूर रहना ही पसंद करते थे। मगर उत्साहित होकर वह फिर कह उठता है कि जितना ही लोगों ने मुझे निराश किया भगवान ने उतना ही मुझे हौसला दिया और इसका प्रमाण इस मशीन की सफलता है। ❑

(पृष्ठ 46 का शेषांश)

घने जंगलों के विनाश होने से खाद्य सुरक्षा पर भी गहरा संकट मंडरा रहा है। बंदर, सुअर, लंगूर खेतीबाड़ी उजाड़ रहे हैं तो तेंदुए पालतू पशुओं को मारने के पश्चात् हिंसक होकर मनुष्य को अपना शिकार बना रहे हैं। मानव-वन्य पशु संघर्ष की घटनाएं लगातार बढ़ रही हैं। जिससे आतंकित होकर लोग गांवों से पलायन कर रहे हैं।

स्हायी देवी विकास समिति ने वर्ष 2003 से विभिन्न स्तरों पर परंपरागत लकड़ी के हल का धातु निर्मित विकल्प देने तथा ग्रामीणों की जंगलों पर निर्भरता कम करने की मांग शुरू की। लगभग आठ वर्ष बाद 2011 में विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा ने लकड़ी निर्मित हल के विकल्प की जिम्मेदारी ली। संस्थान के निदेशक डॉ. जे.सी.भट्ट, वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. ध्रुव साहु तथा वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी शिव सिंह की संयुक्त टीम ने स्हायी देवी विकास समिति के साथ मिलकर लकड़ी के परंपरागत हल के विकल्प की करीब 6 माह तक किसानों के खेतों में परीक्षण किया। दर्जनों परीक्षणों एवं सशोंधनों के बाद लोहे के हल का मॉडल उपयुक्त पाया गया। जिसे वी. एल. स्हायी लोह हल नाम दिया गया। जाने माने पर्यावरण विद पदम्श्री डा. चंडी प्रसाद भट्ट ने इसका 24 मार्च 2012 को लोकापर्ण किया।

संस्था ने विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा के सहयोग से धातु के हल बनाने की योजना को साकार किया। 11 किलो वज़न का यह हल कृषि विभाग से 400 रुपये के अनुदान के साथ 700 रुपये में खरीदा जा सकता है। संस्था ने 11 गांवों के 65 किसानों को वन विभाग के सहयोग से हल उपलब्ध कराया है। इसे उत्तराखंड के गांव-गांव तक पहु.चाने के लिए संस्था काम कर रही है ताकि हर साल हजारों मनुष्य मित्र, पशु मित्र और पर्यावरण मित्र पेड़ों को बचाया जा सके।

संस्था के संयोजक गिरीश शर्मा, अध्यक्ष हरीश बिष्ट और सचिव गजेश पाठक तथा संस्थापक अध्यक्ष गजेंद्र कुमार पाठक से स्हायी देवी विकास समिति, शीतला खेत जिला अल्मोड़ा (उत्तराखंड) से संपर्क किया जा सकता है। ❑

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं)

सबको भाएं
ज्ञान बढ़ाएं
हमारी पुस्तकें

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

e-mail: dpd@sb.nic.in, businesswng@gmail.com
website: publicationsdivision.nic.in
Now on Facebook at www.facebook.com/publicationsdivision

प्रकाशक एवं मुद्रक : ईरा जोशी, अपर महानिदेशक (प्रमुख) द्वारा प्रकाशन विभाग के लिए इंटरनेशनल-प्रिंट-ओ-पैक लिमिटेड, बी 206, ओखला औद्योगिक क्षेत्र, फेस-1, नयी दिल्ली-110 020 से मुद्रित एवं प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सी.जी.ओ., कॉप्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110 003 से प्रकाशित। वरिष्ठ संपादक : रेमी कुमारी

रजि.सं.डीएल (एस) -05/3231/2012-14
Reg. No. D.L.(S)-05/3231/2012-14 at RMS, Delhi
23 फरवरी 2014 को प्रकाशित • 27-28 फरवरी 2014 को डाक द्वारा जारी

Licenced under U (DN)-55/2012-14
आर.एन.आई. 951/57
R.N.I. 951/57

अब बाजार में उपलब्ध

एक सम्पूर्ण वार्षिक संदर्भ ग्रंथ के साथ

प्रतियोगिता परीक्षाओं में

सफलता

साथ में
निःशुल्क पुस्तिका

कोड 870

नवीन आँकड़ों
एवं
तथ्यों सहित

मूल्य
₹ 335/-

समसामयिक ताजा घटनाओं
का विश्लेषण,
खेल समाचार,
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी,
उद्योग व्यापार,
विशिष्ट व्यक्तियों, पुरस्कारों
एवं अन्य महत्वपूर्ण विषयों
पर उपयोगी सामग्री

English Edition Code No. 801
• ₹ 340.00

ताजा महत्वपूर्ण घटनाओं का विवेचन

अपने निकटतम पुस्तक विक्रेता से
अपनी प्रति आज ही प्राप्त करें।

प्रतियोगिता दर्पण

2/11ए, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा–282 002 फोन : 4053333, 2530966, 2531101, फैक्स : (0562) 4053330
• E-mail : care@pdgroup.in • Website : www.pdgroup.in
ब्रांच ऑफिस : • नई दिल्ली फोन : (011) 23251844/66 • हैदराबाद फोन : (040) 66753330
• पटना फोन : (0612) 2673340 • कोलकाता फोन : (033) 25551510 • लखनऊ फोन : (0522) 4109080

YH-266/2014